ॐ

विधवा विवाह उपन्यास

लेखक

M. V. मोच्चाकर.

तथा न भङ्गे च नहीं शराबे,

नवा अफीमे नहि कङ्कडे वा ॥

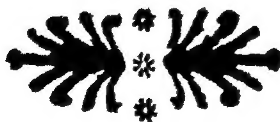
यथास्ति सत्यार्थे वुके अमीरा,

गप्पाकुले कापि नशा विचित्रा ॥

[मैथिल—श्री वैद्यनाथ मिश्र]

प्रकाशक

सेठ जवाहरलाल नाहटा, सिकन्दराबाद ।



सन् १९३९ सं० १९९६

मूल्य दस आना ।।=)

" निवेदन "

सज्जनो !

वर्त्तमान आर्य समाजकी वर्त मानिक शिक्षा पद्धति और उसके सिद्धान्तोंने जन समुदाय पर अपना कैसा जहरीला असर डाला है यह विद्वानोंसे छिपा हुआ नहीं है वर्त्तमान आर्यदलके आदि गुरु स्वामी दयानन्द सरस्वतीने वैदिक धर्मकी आड लेकर जो चाल चली है और अपने बनाए हुए सत्यार्थप्रकाशादि ग्रंथोंमें जिन कुत्सित शब्दोंसे मत मतांतरोंका खंडन करके संसारके भोले भाले जीवोंको अपन जालमें फँसाया है विद्वानोंसे वहभी अज्ञात नहीं उनके किए हुए आक्षेपोंमें सभ्यता और सत्यताकी कितनी मात्रा है इससे भी विचारशील अज्ञात नहीं ! परंतु कितनेक ऐसे मनुष्य भी हैं जो कि इस विष मिश्रित मधुके वास्तविक स्वरूप को न समझ कर इसका उपयोग करने लगजाते हैं परिणाम यह होता है कि उन विचारोंको जीवनके असली उद्देश्यसे सदाके लिए हाथ धोलेने पड़ते हैं इस महती हानिसे वे लोग बच रहे या बचजावे इसी उद्देश्यसे मैंने इस ग्रंथको लिखा है किसीके दिलको आघात पहुंचानेका मेरा सर्वथा विचार नहीं.

इसके पढने वालोंको कुछ आनन्द भी मिले और वर्त्तमान आर्यसमाजकी शिक्षा तथा सिद्धान्त और उनके प्रतिपादसे भी वखुबी परिचित हो सके इस लिए मैंने इसकी [illegible]ना अधिकांश उपन्यासके ही ढबसे की है आशा है कि सज्जन [illegible]सका साद्यन्त अवलोकन करके मुझे अनुगृहीत करेंगे !

लेखक.

॥ नमः श्रीवीतरागाय ॥

विधवा विवाह उपन्यास

आधार— कला ! आज उदास सी क्यों मालूम देती हो ?

कला— आधार ! क्या कहूं कुछ भी मत पूछो आज ही मुझे खबर मिली है कि "स्वामी दयानंद सरस्वतीजी" इस दुनिया से अपने किये हुए कर्मों के अनुसार कूच कर वहां गये हैं जहां से कितनी एक मुद्दत के बाद फिर इस संसार में (न जाने किसके घर किस अवला की कूखमें वास कर) अवतार लेकर अपने बनाये हुए अनेक ग्रंथों का जीर्णोद्धार करेंगे ? आज विक्रम सं° १९४० का भादों महीना ऐसा खोटा चढ़ा है कि, खोटी ही खोटी खबरें मुझे मिलती हैं, एक तो "सरस्वती जी" की मृत्यु की बुरी खबर मिली, दूसरी खबर अभी ही 'नायन ने आकर सुनाई कि तेरी बहन "सत्यबाला" के पेट में सख्त दर्द हो रहा है "सत्यबाला" का पां

(मेरा बहनोई) अलीगढ़ है, उसको बुलाने के लिये तार दिया है। तीसरा मुझे व्रत है, क्योंकि आज जन्माष्टमीका दिन है, इससे सारे दिनकी भूखी हूं, न जाने रात के बारह कब बजेंगे? और कृष्णजी का जन्म कब होगा? और सासुजी फलाहार कब आकर बनायेंगी? और कब खाने को देंगी? मैं तो "स्वामीजी" की कृपासे इन पाखंडों को बहुत बुरा समझती हूं! मगर क्या करूं? मेरा पति अभी मेरे कहने में नहीं है! वह तो अपनी अम्मा का भगत बना हुआ है!!

आधार– अरी कला! तो, क्या उसे अपना भगत बनाना चाहती हो? "स्वामीजी" की कृपासे कृष्णाष्टमी वगैरह को पाखंड मानती हो, तो क्या स्वामीजी ने कहीं यह कहा है कि, अपने पति को अपना गुलाम बनानेका इरादा रखना? बड़े दुःखके कारण प्रगट किये! क्या कहना है? अगर "स्वामीजी" मर गये तो सारे जहानके लिये ही मर गये, न कि सिर्फ तेरे ही लिये! रही 'सत्यबाला' के पेट के दर्द की बात, सो तो उसके गर्भ के दिन पूरे हो गये हैं, पहल पहलोठी का प्रसूत है, अगर पुत्र हुआ तब तो खुशी का पारावार भी न आवेगा! वाहरी वाह! उसे भी उदासी का कारण बता दिया! वाहरी "सरस्वतीजी" की भगतन! तुझे धन्य है! हां यूं कहें तो ठीक भी है कि, भूख लग रही है! सखि! "स्वामीजी" की भगतन और उनके कथन पर चलनेवाली तो तुझे तबही समझूंगी, जो उनके

बनाये हुए "सत्यार्थ प्रकाश" के चतुर्थ समुल्लासकी लकीरोंकी फकीर बनेगी ! वरना नाहक ही किसीको पाखंडी कहना ठीक नहीं ! ले देख वो 'नायन' फिर आ रही है, मालूम देता है कि तेरी बहन "सत्यवाला" ने ही तुझे बुलवाया है ! अच्छा यदि जाओ तो मेरा भी प्रणाम कहना और कहना कि, आधारकी शरत याद रखना ! ले घड़ीमें भी सात बज गये.

कला– आधार ! सच कह, तुझे मेरी ही कसम है, तूने सत्यवालाके साथ क्या शरत की है ?

आधार– जीजी कला ! मैं सच कहती हूं, उससे मेरी यही शरत थी कि, तुझे पुत्र ही पैदा होगा ! अगर नहो (याने लडकी हो) तो अपने हाथका बिछुआ (जो मैंने पहन रखा है) दे दूंगी !

कला– ले ! बड़ी भारी शरत निकाली ! (इतनेमें नायन आ पहुंची और कलासे बोली)

नायन– जीजी ! चलो भी "सत्यवाला" तो दर्दके मारे रो रही है उनकी जिठानियां और काकीसासु वगैरह तो कृष्णजी का हिंडोला देखने गई हैं, शायद वे तो कहीं बारह बजे (कृष्णजीके जन्म होनेके बाद) आवेंगी. उनके पास सिर्फ इस वक्त मालतीको छोड़ आई हूं. अलीगढ़से तुम्हारे बहनोईजी का तार आगयाकि, मैं नहीं आ सकता ! मेरे परीक्षा के तीन दिन और बाकी

रहते हैं. तुम जलदी चलो, उन्होंने (सत्यवालाने) कहा है कि, साथ लेकर आना. मेरे प्राण जाते हैं!

कला- (नायनसे) चल बहन चल ! देखूं अंदर सासूजी आगई होंतो उनसे पूछकर और चद्दर लेकर अभी आती हूं (अंदर जाकर अपनी सासूसे) बूजी साहव ! वहन " सत्यवाला " के यहांसे मुझे बुलाने के लिये " जानकी नायन " आई है सो मैं जाती हूं.

सासू- (अपने बेटेको) अरे मुरलीधर! वे मुरलीधर!

मुरलीधर- (अपनी मातासे) क्या है ?

माता- वेटा ! तूं दुकान पर जायगा क्या ?

मुरलीधर- जी हां ! जाऊंगा तो सही मगर मींह बरसता है सिकरम गाड़ी जुतवाता हुं, क्योंकि मैं माधोदासकी बगीचीमें रासलीला देखने भी जाऊंगा.

माता- बस ! सिकरम गाड़ी जुतवानेकी जरूरत नहीं, क्या बापूजीकी आदतको नहीं जानता ? विचारे घोड़ेको ऐसे मींह बर्षतेमें निकम्मा हैरान करेगा तो वो गुस्से होंगे. किरायेकी गाड़ी करवा मंगा उसमें वहू (कला) कोभी लेता जा " सत्यवाला " के सासरे छोडता जाइयो !

मुरलीधर- अच्छा ! यूंही सही, ला किरायेके लिये डेढ़ रुपया !

माता- अरे डेढ़ काहेका ? छे आने थोड़े होते हैं, छे नहीं तुं आठ आने ले दश आने ले इकट्ठाही डेढ़ रुपया ! ले ठहर मैं आठ आनेमें गाड़ी किराये मंगवा देती हूं.

मुरलीधर- (हंसकर प्यारके साथ) नहीं मैं आपही गाड़ी वालेसे ठहरा लुंगा, तूं मुझे डेढ रुपया देदे.

माता- तो यूं कहकि, मुझे खरचनेको चाहिये. निकम्मा! (अंदर से डेढ़ रुपया निकाल कर दे दिया, कलाको बग्घीमें बिठला लट्ठुशाके कूचेमें सत्यबालाके सुसरालमें छोड़कर आप तो माधोदासकी बगीचीमें पहुंच गया. इधर कला अपनी बहनके पास पहुंची और रोती हुईको पुचकार कर बोली)

कला- बहन ! क्यूं ?

सत्यबाला- (पेटको दोनों हाथोंसे मरोडती हुई) बहन ! कुछ मत पूछ ! मेरेतो प्राण जाते है. हायरे ! क्या करू ? (अपना मस्तक कलाकी गोदमें डाल दिया)

कला- (सिरपर हाथ फेरती हुई) बहन ! घबड़ा मत जरा दिलको करड़ा कर मैं आगई हुं (पासमें बैठी मालतीसे) अरी और सब घरकी बइयर बानियां कहां गई हैं ?

मालती- कृष्णाष्टमीका हिंडोला देखने.

कला- बड़े अफसोसकी बात है ! कि यहतो इस तरह तड़फ रही है और उन्हें हिंडोले सूझते हैं.

मालती- अजी चुप करो, तुम देखती जाओ, जरा घरके आदमियोंको खबर पड़ेगी तो सबकोही कृष्ण हिंडोला देखनेका स्वाद आजावेगा !

कला- (हंसकर) तो हलदी और चुना तैयार कर रख !

मालती- अब तुम हँसीको तो रहने दो " सत्यबाला " का ख्याल करो.

कला- (नायनसे) अरी जानकी ! तूं फतेपुरीमें जा, और " मनभरी " (दाई) या उसकी बेटी " अनारो " को जल्दी साथ लेकर आ ! ये ले इक्केके लिये पैसे. नायनभी जाकर दाईको ले आई, इधर इतनेमें " सत्यबाला " की सासु और जिठानियां वगैरहभी सब आगई रातका एक बजा उस वक्त सत्यबालाके पुत्र जन्मा,

दाई- (अंदरसे) मुबारक हो ! बधाइयां आप सबको बधाइयां !

शारदाचंद्र- (अपने एक लड़केसे) अरे अभी पंडित चंदूलालजी हकीम मेरे पाससे उठकर गये हैं, अभी रस्तेमें ही जा रहे होंगे उन्हें बुला ला. (लड़का गया और ले आया, शारदाचंद्र हकीम चंदुलालजीसे) पंडीतजी ! आपके भानजा हुआ है, मुबारक !

पं० चंदूलाल- कब ? कितनी देर हुई ?

शारदाचंद्र- बस अभी एक बजकर २५ मिनटपर.

पं० चंदूलाल- इसकी जन्मकुंडली तो जरूर ही बनवाना, अच्छा मैंही बनाऊंगा जरा पंचांग मंगाना.

शारदाचंद्र-(हसकर) भाई साहब ! अभी तो हमारे यहां न किसीकी कुंडली, न घरमें पंचांग, न देखें और नाहीं कुंडली बनवावें, इन वाहियात बातोंसे क्या बनेगा ? मैंने तो आपको खुश खबरके ही लिये बुलायाथा.

पं० चंदूलाल- (जरा रोशमें आकर) सचमुचही तुम तो

जंगली हो! अरे सनातन धर्म तो छोड़ बैठे मगर लोक रिवाजभी नहीं करते! बड़ा अफसोस है!! आज सारे लोगोंने जन्माष्टमी मनाई मगर तुम्हारे घर तो मूंधे ही नगाड़े होंगे!

शारदाचंद्र– वाहजी वाह! जरा सोचो तो सही मूंधे नगाड़े जन्माष्टमी मनानेवालोंके हैं या कि हमारे! देखो! हमने तो खूब मजेसे दिनमें भी (कई वार) खाया और दुकानसे आकर भी रातको (दश बजे) खाकर चुके हैं! और कृष्णाष्टमीवाले विचारे सारा दिन तो भूखे मरे (या किसीने फलवार) और आधी रातको पत्थरोंके आगे मंदिरोंमें माथा फोड़ते फिरे! फिर कहीं खानेको और पीनेको मिला! तुम लोगोंने तो नकल की, मगर हमारे तो असल ही कृष्णका जन्म हुवा है.

पं० चंदुलाल– तो क्या इसका नाम कृष्णही रखोगे? (पासमें खड़ी हुई "मालती" अपने बाप शारदाचंद्रसे) आपा-जी! मां कहती हैकि कृष्ण अष्टमीकी रातको होनेसे कृष्ण ही नाम रखना है.)

शारदाचंद्र–(पुत्रीसे) चल! चल! बैठ चुपकी होके, हमारे घरमें आजतक किसीनेभी ऐसे चोट्टे जैसा नाम रखा है? जो हम रखे! नाम रखनेका दिन तो आने दे! हमतो इसका नाम "विश्वंभरनाथ" रखेंगे! (सुबह होतेही शारदाचंद्रके पोता हुआ यह सब साक संबंधिओंमें मालूम होगया, कई लोग वधाई (मुबारक) देनेको

सहाय पी. जज्जसाहव, पंडित हरगोविंद, " रामानुज संस्कृत पाठशाला " के कितनेक विद्यार्थी और माधो-देव शास्त्री वगैरहभी उपस्थित थे. लोगोंसे मकान एकदम भर गया! घरमें चारों तरफ खुशीयें मनाई जाने लगी, उधर औरतें गीत गाने लगी, और इधर हवन वगैर-हका काम शुरू हुआ.

शारदाचंद्र– (ब्रह्मानन्दसे) वेटा ! संस्कार वगैरह काम सव तूंनेही करना, पंडितोंका काम तो मूर्खोंके घरोंमें होता है !

ब्रह्मानंद– (शारदाचंद्रसे) वहुत अच्छा! इसमें दो रुपयेकी! किफायत भी होगी !

शारदाचंद्र– तो अच्छा वेटा ! काम शुरू करो! मगर एक काम करना, मंत्र ऐसी होशयारीसे वोलना कि सुन सव पंडितोंके छक्के छूटें !

(इतना सुनतेही ब्रह्मानन्द हाथमें जल लेकर)

" आचमन मंत्र "

ॐ कपटानन्दाय नमः, ॐ सद्धर्मविरोधकाय नमः, ॐ व्यभिचारप्रचालितकराय नमः—

(आचमन करनेके वाद संकल्प हाथमें लेकर)

" संकल्प मंत्र "

डॉ ! तत् असत् अद्येह फॉ नमः, गपोड़ानन्दाय नमः, सर्वधर्म विरोधकाय, अद्यधूर्त कल्पितसर्गे, गडवड

कल्पे, कपटानन्द मन्वन्तरे, महाकलियुगे, प्रथम चरणे, जंबू द्वीपे, भरत क्षेत्रे, अजमेर नगरे, वर्त्तमान नाम संवत्सरे, अमुकायने, अमुकऋतौ, अमुक मासे, कृष्णपक्षे, नरक तिथौ, बुधवार नक्षत्र योगकरणे, श्रीमद्धूर्त्तानन्द कृत मिथ्यार्थप्रकाश प्रतिपादित फल प्राप्त्यर्थं आर्यगोत्रो, विधवा पुत्रो, ब्रह्मानन्द शर्माऽहं, सर्वाधर्म शास्त्रस्य अति निन्द्रन रूप ऐश्वर्यस्य प्राप्ति कामनया मिथ्यानंद प्रसन्न हेतवे सर्व धर्मवर्णान् एकीकृत्य पूजनमहं करिष्ये.
(यह पढ़कर संकल्प छोड़ा)

"आवाहन मंत्र"

भो ! अनादि मार्ग विध्वंसकम्, मूर्तिपूजनशास्त्रादि निवर्त्तकम्, वर्णशंकर गोत्र प्रवर्त्तकम्, विधवा विवाह कारकम् श्री श्री अनेक रंगभंगाचार्य, दंभानन्दं आवाहयामि, भोदंभानन्द ! इहागच्छ ! सुप्रतिष्ठ कुवरदो भव ! मम कुपूजां गृहाण भगवदंभानन्दाय नमः ॥ (इतना पढ़कर " ब्रह्मानन्द " पोडशोपचार पूजनके मंत्र पढने लगाकि इतनेमें जज्जसाहब शारदाचंद्रसे बोले)

जज्जसाहब–अजी शारदाचंद्रजी ! वाह ! ये कैसी वाहियात श्रुतियां उच्चारण करनी शुरू की हैं ? तुमको (इतने वृद्ध और दाना होने पर) जानबूज कर सैंकड़ो औरतों और आदमिओंके बीचमें ऐसा काम करवाते शरम नहीं आती ?

शारदाचंद्र–(जरा मूंह बनाकर) बस साहब मेरी मरजी,

मैं अपने घरका मालिक हुं ! जो मेरे दिलमें आयेगा सो करूंगा मेरे घर खुशीका दिन है, मुझे तो कहते हो कि शरम नहीं आती, मगर जब आप " स्वामीजी " के मंत्रों द्वारा एक एक लुगाईको भरी सभामें एक के वाद दूसरा, दूसरेके वाद तीसरा, तीसरेके वाद चौथा, चौथेके वाद पांचवां, पांचवेके वाद छट्ठा (हँसी) हँ–हँ–हँ–हँ–हँ छट्ठेके [illegible] और सातवेंके वाद आ-ठवां, आ-ठ-वके वाद नौवां, नौवेंके वाद दशवां, वापरे वाप ! बलिहारी आपके "स्वामीजी" की ! बलिहारी आपको ! बेटा ! जज्ज बनगयेतो क्या होगया ? और बलिहारी उस अल्लामाकी जनी औरतको ! जिसने "स्वामीजी" के असूलको पाला ! (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चुप क्यों होगया ? तूं अपना काम करेजा !

" षोडशोपचारपूजनमंत्र "

ॐ कलयुगानन्दाय नमः (इत्यर्घं)
ॐ अद्भुतरंगाचार्याय नमः (पाद्यम्)
ॐ धर्मविध्वंसकाय नमः (आसनम्)
ॐ गप्पाष्टकाय नमः (स्नानम्)
ॐ व्यभिचारानन्दाय नमः (गंधम्)
ॐ सर्वधर्मनिन्दकाय नमः (अक्षतम्)
ॐ विधवानां एकादशपतिकराय नमः (पुष्पम्)
ॐ मूर्तिपूजननिषेधकराय नमः (धूपम्)
ॐ अधर्मपाखंडमतप्रकाशकाय नमः (दीपम्)

ॐ सर्वेपामेकभोजनकराय नमः (नैवेद्यम्)

ॐ मोक्षमार्गविध्वंसकाय नमः (आचमनम्)

ॐ अवतारनिषेधाय नमः (तांबूलम्)

ॐ गोचर्मविक्रयकराय नमः (पूगीफलम्)

ॐ शिल्पशास्त्रोपदेशिने नमः (वस्त्रम्)

ॐ घोरकलिप्रवर्त्तकाय नमः (द्रव्यदक्षिणां)

ॐ महाघोरधूर्त्तमार्गप्रचलितकराय, सनातनधर्मविनिन्दकाय, सत्य आत्मज्ञान निवर्त्तकाय, वेदब्राह्मणसंत विमुखाय, अधर्म स्वरूपाय, आत्मोपदेशे मतिमंदाय विरोध कृतानां वहुरंगाचार्यगपोडानंदाय नमः ।

यह प्रार्थना करके ध्यानम्—

वैदिक धर्म्म निवार पाप पाखंड वढ़ाया ।
निन्दे मूर्त्ति पुराण अर्थ पलटो मन भायो ॥
विधवा व्याह कराय पुरातन रीत नसाई ।
वर्ण भेद विनिवार नमस्ते करी कराई ॥
तेली चमार कोरी सुई लघु जातन आरज करो ।
धर्म्म कर्म्म मति पुण्यकी मूल काढि अघ संचरो ।

" विनियोग. "

ॐ अस्य श्रीगपोड मंत्रस्य वहुरंगाचार्य ऋपि अविलक्षणं छंदः।कलियुगानन्द देवता, विरोध वीजम्, अशुचिशक्तिः, धूर्त्तता कीलकम्, श्री कलियुगानंद प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । (इतना करके)

तुने मेरे साथ कुछभी कसर बाकी रखी थी ? जबतो न मेरे बापको छोड़ा न मेरी मांको, न मेरी बहनको, क्यों नहो ! आपतो गालियां देते मुंहमें मिठास आतीथी आज हमसे सुनकर जहर चढती है !

जा ! जा ! किसीपर एसान नहीं करती ! जब तेरे घर कोई खुशीका दिन आवे अर्थात् तुं, अपना किसी अन्य पुरुषके साथ नियोग करे तो हमें मत बुलाना ! मुबारक रहो तुझे तेरे " सरस्वतीजी " (समाजके लाल बुझ-कड) या ये तेरे जज्ज साहब फूफाजी.

शारदाचंद्र-(ब्रह्मानंदसे झिडककर) बसरे ! बस ! और-तोंसे बोलना अपनी बेहूदगी है (कलासे) जा बेटी ! जा ! कहारके छोकरेको साथ लेजा. (कहारके लड-केको) अरे बुद्धु ! जा इसके साथ इसे सासरे छोड आ.

ब्रह्मानन्द-(अपने बापसे) आपाजी ! अब क्या करूं ?

शारदाचंद्र- बेटा ! अब हवन करो !

ब्रह्मानन्द- जी बहुत अच्छा !

(इतना कहकर हवनकी सामग्री पासमें रख कर कुंडमें अग्नि जला लगा हवन करने)

" हवनके मंत्र "

ॐ बहुरंगाचार्याय स्वाहा.
ॐ विरोधाचार्याय स्वाहा.

ॐ कलियुगाचार्याय स्वाहा.

ॐ कपटाचार्याय स्वाहा.

ॐ धूर्त्तानन्दाय स्वाहा.

ॐ लंपटेश्वराय स्वाहा.

ॐ सत्यधर्म विनाशकाय स्वाहा.

ॐ अधर्म मत प्रवर्त्तकाय स्वाहा.

ॐ आर्य वृन्द भ्रष्टकराय स्वाहा.

ॐ धूर्त्त शिरोमणये पाखंडाचार्याय स्वाहा.

शारदाचंद्र– ले वेटा ! इन मंत्रोंसे अग्निमें आहुति तो छोडदी अब थालीको जमीनमें रखदे और पूर्व दिशाके क्रमसें आगेके मंत्रोंसे भाग रख.

ब्रह्मानन्द– आपाजी ! यह क्या ? अभी गप्पा वैश्वदेव तो वाकी है !

शारदाचन्द्र– वाह वेटा ! अच्छे मोके पर याद करवाया मैंतो भूलही गया था अच्छा अव करलो ! (शारदाचन्द्रके कहनेसे रसोईमेसे भोजन लाकर ब्रह्मानन्द गप्पा वैश्व-देव करने लगा.)

मंत्र—

ॐ वहु भक्षकाय धूर्त्त शिरोमणये स्वाहा.

ॐ सन्यासधर्म विपरीताय कपटा नन्दाय स्वाहा.

ॐ घोरकलि प्रवर्त्तकाय, वर्णशंकर प्रवर्त्तकाय स्वाहा.

कहींभी उत्तम कुलमें स्त्री दूसरा पति नहीं कर सकती और नाहीं किसी शास्त्रमें करना कहा है.

शारदाचंद्र– अरे व्यभिचारी ! नहीं कर सकती के खसम ! तुझे क्या खबर कि किसी शास्त्रमें नहीं लिखा ! ला तो स्वामीजीका बनाया हुआ " सत्यार्थ प्रकाश " तूं दूसरेको रोता है ! " स्वामीजी " एकको दश खसम करनेकी आज्ञा वेदोंमें बतलाते हैं ! अगर (तूं) जिन्दा रहा तो देख लेना आजसे उन्नीस वर्षके बाद विक्रम सं० १९५९ में मुरादाबादका रहनेवाला " जगन्नाथ-दास " एक " दयानन्द मतकी सूची " बनावेगा उसमें मेरे मुंहसे निकलती हुई इस 'कविता' को पढना !

*"हाय हाय कैसा नियोगका अनुचित कर्म चलाया।
"उत्तम कुलकी अबलाओंको व्यभिचारिणी बनाया ॥ ५३ ॥
"दश पुरुषोंसे करे नियोग इतनेसे सबर न आया।
"लिखे वार दो तीन और सन्यासी नहीं सरमाया।५४।

(दयानंद मतसूची पृष्ट ९)

ब्रह्मानन्द–आपाजी साहब ! यह क्या कहा कि, विक्रम सं० १९५९ में दयानन्द मतकी सूची बनेगी आपको क्या भविष्यत कालका ज्ञान है ? फरज़ करो कि, ज्ञानभी हो

---

* ऋग्वेद भाष्यभूमिका पृष्ट २१४

तो क्या ऐसा अद्भुत ज्ञान कि वो ऐसी ही कविता बना-
वेगा ? मुझे तो सुनकर हैरत पैदा होती है !

शारदाचंद्र- वाहबे उल्लू ! बेटेका बापभी बनगया मगर बेव-
कूफही रहा ! अबे ! इतनातो सोचकि ज्योतिषी लोग
१०० वर्षके बाद फलां वक्त और फलां समयमें इतने
घंटे और इतने मिनिट पर सूर्य ग्रहण लगेगा और उस
दिन फलाना वार और फलानी तारीख होगी तो क्या
मैं (आजसे उन्नीसवें वर्षमें यह बात होगी) नहीं बतला
सकता हूं ? बस मैंने तुझसे कहादिया, एक "दयानन्दसूची"
तो क्या मगर मुरादावाद निवासी जगन्नाथ साहब,
पंडित ज्वालाप्रसाद साहब और मेरठके ईश्वरीप्रसाद
साहब आदिकी ऐसी कलम चलेगी कि दयानन्दकी
सूचीतो सूचीही रहेगी मगर दयानन्दके समाजकी कूची
हो जायगी.

ब्रह्मानन्द- वे वेधडक अपनी कलमको निडर पने इस न्याय-
वान् गवर्मेन्ट सरकारके राज्यमें कैसे चलावेंगे ?

शारदाचंद्र-वहभी मैं तुझे अभी कह देता मगर यह काम
फुरसतका है इस वक्त मुजे एक जरूरी काम है इसवक्त
तो मैं तुझे उन ट्रेक्टोंका सिर्फ नाम बतला देताहूं ले लिख !

ब्रह्मानन्द-(जज्जसाहबसे) आपने सुना, आपाजी क्या कहते है ?

जज्जसाहब- भाई ! तुम्हारे घर आये हैं जो मरजीमें आवे
सुनालो ! तुम लोगोंके यहां लडकी देना- तुमसे नाता
रिस्ता करना-बडी मूर्खताका काम है ।

सन्यासीजीके अंकोंका नाम तो लियाही नहीं है !

ब्रह्मानन्द्‌- अच्छा वो फिर लिखाना हाल और कोई एक दो लिखा दो वरना सबको पान बीड़ा देता हूं !

शारदाचंद्र-अ-रे-तो-ले-लि-ख-ले एक और नाम-"बाबा आदम" (यहसुन सब हंस पडे) अरे ले और याद आगये "दयानन्द हृदय." "नियोग खंडन."
" सत्यार्थप्रकाश समीक्षा "
"धर्म सन्ताप." "स्वामी दयानन्द." "धर्मदिवाकर"
"भजन बीसा." "दयानन्दमत दर्पण." "दयानंदकी माया"
"दयानन्द नाटक." और " दयानन्दका कच्चा चिट्ठा."
(थोडीसी देर बाद) भला गिनतो सही कितने हुए ?

ब्रह्मानन्द्‌-अच्छा लो गिनता हूं जरा ध्यानसे सुनना ! एक एक एक चार पांच और नौ नौ नौ चार तेरां तेरां और आठ इक्कीस-इक्कीस और चार पच्चीस और उनत्तीस.
आपाजी ! उनत्तीस हुए !

शारदाचंद्र-अबे ! चोट्टीके एक कमती क्यों रखा ? लिख जल्दीसे ' ढोलकी पोल ' करदे पूरे तीस. ले दे अब सबको पान बीडा ! (ब्रह्मानन्दने सबको पान बीडा दिया)

पं० गिरजाशंकर-(शारदाचन्द्रसे) आज आपको भांग चढरही मालूम देती है !

शारदाचंद्र-(हंसकर) जबही आप उल्लू मालूम देते हैं.

जज्जसाहव-(पं० जीसे) गिरजाशंकरजी ! आपने असल कह दी.

शारदाचंद्र-अजी जज्ज साहव ! आपको तो नशा करना दोनों कानुनोंसे मना है, फिर क्यों गिरजाके साथ शंकर वनते हो ?

पं० गिरजाशंकर-(स्वयम्) भाई पोता होनेकी खुशीमें इसवक्त इन्हें कुछ भान नहीं है ! (प्रगट) अच्छा भाई ! अच्छा ! शारदाचन्द्रजी ! पोतेका नाम क्या रखा ? सो तो वीचमें ही रहा !

शारदाचन्द्र-अरे ! रे ! रे ! मुद्देकी वात तो वीचमें ही रह गई. सुनो साहव ! मैं इस अपने पोतेका नाम रखता हुं, इसका नाम " विश्वंभरनाथ "

जजसाहव-अच्छा ! मैंतो जाता हूं ! नमस्ते !

शारदाचन्द्र-(हाथसे पकडकर) चाहे न मस्तो चाहे मस्तो विना रोटी खाये तो नहीं जाने देंगे ! (वाकीके सव-लोगोंसे) मुझपर आप लोगोंने वडाही अनुग्रह किया कि जो मेरे घरको पावन किया आपको जो मैंने तकलीफ दी उस वातकी क्षमा चाहता हूं ! पधारियेगा !

सवकेसव- वाहजी वाह ! आफरीन है आपकी लायकीपर, यह दिन आपको परमात्मा जलदी जलदी दिखलावे !

शारदाचन्द्र- ना साहव ! ना ! मेरे घरकी औरतें और वहुएँ दयानन्दके असुलों पर नहीं चलती जो इकट्टेही दो दो गर्भ धारण करे ! या दश सालमें दश वच्चे पैदाकरे !

अगर आप लोगोंको यह दिन जल्दी जल्दी देखनेकी मनशा होवे तो दो चार मुरगियां लाकर पाल लूं! उनमेंसे जब कोई अंडा देवे तबही आपको बुला लूं!

जज्जसाहब–हां! तो क्या आपने दयानन्दियोंकी औरतें मुरगियां समझ रखी हैं? अगर ऐसी समझ है तो आपके घरमेंभी लगेगी! क्या "सत्यवाला" को मुरगीके पेटसे निकली हुई न मानोगे?

शारदाचन्द्र–हां! हां! बेशक आपकी औरत (सत्यवालाकी भूआ) भी मुरगी होगी तो इसकोभी मुरगी ही समज लेवें गे!

(पंडित चन्दूलाल जज्जसाहबसे–जानेदोजी! क्या वाहियात बातें ले बैठे चुप करो! सबके सब खानेके लिये बैठे. खाना खाचुके बाद अपने अपने घरको चले गये.)

(एकादिन जबकि विश्वंभरनाथकी उमर दो वर्ष और तीन महीनेकी हुई तब हरभजन घरमें रहनेवाला एक पूरविया नौकर दुकानपर आकर शारदाचंद्रसे.

हरभजन– अजी! बब्बन (विश्वंभरनाथ) की मांको कुछ हो गया घर जलदी चलो!

(शारदाचंद्र यह बात सुनतेही नौकरके साथ हो लिया. रस्तेमें आते हुए एक दूसरा आदमी मिला और बोला कि–बब्बनकी मां तो मरगई!)

शारदाचंद्र– (आदमीसे) अरे यह क्या हुआ? अच्छा तूं जलदीसे सीधा इमलीके महल्लेमें जा और उसके पीअर

वालोंको खवर कर कि " सत्यवाला " काल कर गई !
(शारदाचंद्रके कहनेसे आदमी तो उधर गया. आप घरमें आकर देखे तो औरतें रो पीट रही हैं.)

मालती- (वच्चनको गोदमें लिये हुए वाहर आकर रोती हुई शारदाचन्द्रसे) आपाजी ! छोटी भोजाई मरगई !
(सत्यवालाके मरनेकी खवर सुनकर सव सगे संवंधी अपनी अपनी दुकानें वंद करके आगये-सत्यवालाके पीअरके सवलोग, जज्जसाहव, और वच्चनका मामा-युगलकिशोर वकील-वगैरहभी आगये.)

युगलकिशोर- (शारदाचंद्रसे) देखिये साहव ! मैं एक वात आपसे वडी अधीनगीके साथ कहता हूं.

शारदाचंद्र- कहिये साहव !

युगलकिशोर- मरनेवाली तो मरगई मगर अव रहा उसका अग्निसंस्कार, सो तो मैं वेदविहित विधिके साथ करूंगा! आपके यहां तो उसका न कुछ होगा नाहीं तुम करोंगे. विचारीका अंतिम संस्कार तो अच्छी तरहसे करदो !

जयंतिसहाय- (शारदाचंद्रका छोटाभाई) सुनिये साहव ! हम अपने घरका जो रिवाज है वही करेंगे, यहांसे ले जाकर सिवा लकड़ियोंमें फूकनेके हम दूसरा कूछ भी नहीं करेगें, और नाहीं पीछे किसीका कुछ किया है. आपने यदि वेद वूदका कुछ झगडा डाला तो अच्छा न होगा ! किसी किसी वातमें आपके निसवत हम लोग सनातनियोंको कुछ अच्छा समझते हैं. भला आप ही कहिये कि,

आधुनिक " स्वामीजी " की कपोल कल्पित लीलाको मंजूर करके कौन मुरदेकी मिट्टी खराब करवावे ? बस आप चुपही कर रहियेगा !

युगलकिशोर— वेदके असली रहस्यको तो हमारे स्वामीजीने ही प्रगट किया है. तुम उसे कपोल कल्पित और लीला बतलाते हो ! (फिर कुछ अफसोस सा जाहिर करके) भाई ! इसमें तुम्हारे अधीन कुछ नहीं है आज कलका जमाना ही ऐसा है कि जो बुरी बुरी बातें और खोटे खोटे रिवाज हैं वे तो लागोंको अच्छे लगते हैं और जो अच्छी बातें हैं वे बुरी लगती हैं !

जयंतीसहाय— शाबाश ! शाबाश ! आपके बच्चे जियें ! आपके कहनेसे साफ जाहिर होगया कि, दुनियामें जितने मत मतांतर हैं वे सबही अच्छे थे मगर स्वामीजीको बुरे लगे तबही तो उन्होंने सबको बुरे बुरे कहकर उनकी निंदाके जल कुंडमें गोते लगाये ! और अपना जो बुरा मत था उसको अच्छा सिद्ध करनेके लिये " सत्यार्थ प्रकाश " (कहते तो मुझे संकोच होता है) "असत्यार्थ प्रकाश " बनानेकी मुफ्तमें ही तकलीफ उठाई ! सच है आपका कहना यह जमाने काही रंग है ! जो सच्चे धर्मका लोपन करनेवाले देवपूजा जैसे पवित्र मारगका उत्थापन करनेवाले अनेक धूर्त्तानंद पैदा होगये हैं !

युगलकिशोर— खबरदार ! उस महर्षिके बारेमें ऐसे वैसे बेमरजादाके वाक्य बोलने अच्छे नहीं, मैं कोई पं० सुंद-

रसहाय जज्ज नहीं हूं जो बरदास्त कर लूंगा ! मुझे सब कुछ मालूम हो गया है जो कि विश्वंभरनाथके नाम करण संस्कार करनेके वक्त आप लोगोंने किया मैं उसवक्त हाजिर न था वरना देखते क्या होता ?

शारदाचंद्र- (जरा तेज होकर) अबे ! ओ ! जुगलेके बुगले ! मैं जानता हूं कि तेरे पास विकालतका चोगा है ! सो भाई माफ कर ! अगर चुप करके मुरदनी में साथ चलना हो तो चल वरना अपने घरका रस्ता पकड़ !

ब्रह्मानन्द- भला आपाजी साहब ! इनके " स्वामीजी " ने अग्निसंस्कारकी क्या विधि बतलाई है सो तो सुन लो !

शारदाचंद्र- अरे भाई ! " जाना नहीं जिस गाम, क्या लेना उसका नाम " अगर तुझे जाननेकी इच्छा है तो मैं तुझे स्वस्थ चित्त होनेपर " स्वामीजी " का माया जाल अच्छी तरहसे बता दूंगा (फिर) अरे बतलाऊंगाही नहीं लेकिन कर दिखलाऊंगा !

जज्जसाहब- (युगलकिशोरसे) भाई ! अपनेको इस वक्त चुप करनाही ठीक है !

ब्रह्मानन्द- (अपने चाचा जयंतिसहाय और वंशगोपालसे) चाचाजी ! मैं नहीं चाहता कि इन लोगोंसे इस बातके लिये विरोध किया जावे, यदि इनके " स्वामीजी " के कहें मुताबिक अग्निसंस्कार कर देवें तो अपना इसमें

क्या नुकसान है ? उसे जलाना तो यूंभी है और यूंभी औरोंके लिये अपने हाथमें है इसको तो जैसे ये कहें वैसे ही करो !

वंशगोपाल– क्या आपाजी करने देवेंगे ?

जयंतिसहाय– पूछ देखो !

वंशगोपाल– आपाजी ! जरा इधर आइएगा ! (एकांतमें सबने मिलकर सलाह की और बाहर आकर)

शारदाचंद्र– (अपने वडे लडके वंशगोपालसे) अरे वंशू ! बब्बनके मामाको नाराज करना ठीक नहीं इस लिये जैसे ये कहते हैं वैसेही कर लो !

बिरादरीके लोग– (शारदाचंद्रकी बात सुनकर) अजी ! क्या लडकोंके कहनेमें लगकर आपकीभी अकल मारी गई है. आपके घरसे ऐसा काम शुरू होना ठीक नहीं है.

शारदाचंद्र– (लोगोंसे) अरे भाई क्या करें यह मौकाभी ऐसा है कोई हमेशाके लिये थोडेही है अपनेको अबकी दफा यही समझ लेना चाहिये कि हमारे घर मौतही नहीं हुई ! अगर यह पीअरमें मर जाती तो फिर ये लोग (स्वामीजीकी लकीरके फकीर) क्या अपनी रीति करनी छोड देते ? कदापि नहीं !

सबलोग– अच्छा तो आपकी मरजी !

शारदाचंद्र– (युगलकिशोरसे) वकील साहब ! लीजिये जो आपकी मरजीमें आवे करियेगा ! कहिये ! क्या क्या मंगवाया जावे ? क्यों कि हम तो सिर्फ इतना ही

जानते हैं कि, मुरदेको यहांसे उठाया और मसाणोंमें ले गये. लकडियोंमें रखा और फूंक दिया ! बस न्हाये धोये और काम हो लिया !

युगलकिशोर– (दिलमें वहनके मरनेकी गमगीनी के होनेपरभी अपने धर्मके असूलका पालन होते देख चेहरे पर मुसकराहत लाते हुए जयंतिसहायसे) भाई साहब ! अन्दर औरतोंसे कहो कि उसको न्हुलाकर और चंदन वगैरह सुगंधीवाली चीजोंका लेप करके नवीन वस्त्र पहरा दो !

जयंतीसहाय– (औरतोंको कहकर सब काम ठीक करवाके युगलकिशोरसे) क्यों साहब अब क्या करे ?

युगलकिशोर– (संस्कार विधि हाथमें लेकर पृष्ठ २३८ निकालकर स्वयं ही १९ पंक्ति पढ़कर) भाई ! जितना उसके शरीरका भार हो उतना घृत लाओ !

ब्रह्मानन्द– (युगलकिशोरसे) इतना बड़ा तराजू आपके घर हो तो मंगवा लो ! या इसकी लहाशको उठाकर बाजारमें किसीके यहांसे बड़े कांटेपर चढवाकर वजन करवा लो ! (जो लोग उदास हुए हुए धीरे धीरे रो रहेथे वह ब्रह्मानंदकी बात सुनकर मुसकरा उठे)

युगलकिशोर– (ब्रह्मानंदकी तरफ हाथ करके) तुम कैसे बेअकल आदमी हो ? कहीं बाजारमें मुरदे तुलवाते भी कभी किसीको देखा है ?"

ब्रह्मानन्द– जनाब वकील साहब ! मैं तो बेअकल हूं मगर

अब आपकी अकलको देखता हूं कि " जितना इसके शरीरका भार हो उतना घी " विना लहाशका वजन किये कैसे ले आओगे ?

शारदाचंद्र— (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चुप कर ! अपने बोलनेका काम नहीं, घी मंगा देना अपना काम है, जगन्नाथकी दुकानसे २८ रुपये मनका वडा बढ़िया पक्का दो मन घी किशोरीके विवाहके वास्ते आया पड़ा है सो निकालकर इनके सामने रख दे ! ये लहाशके भार जितना ले लेवें बाकी हमारा पड़ा रहेगा !

युगलकिशोर— बस दो मन काफी है इसकी लहाश एक मन दश सेरसे ज्यादा नहीं है तोलनेकी कोई जरूरत नहीं !

ब्रह्मानन्द— हाँ–जी ! कोई जरूरत नहीं ! अपने घरके टके थोडेही खर्च हुए हैं फरज करो हुएभी हों या खर्च करभी दो तोभी हम नहीं मानेंगे ! यातो आप अपने " स्वामीजी " के लेखपर चलो ! या हमारे पीछे चलो ! बस सीधी बात तो यह है ये लो घी और इसकी लहाशके बराबर तोल लो, अगर नहीं तोल सकते तो पूछो अपने "स्वामीजी" के भगतोंसे कि भाई ! कैसे तोले ?

युगलकिशोर— (अपने मनमें) ये लोक बड़े हठीले और हमारे धर्मके द्वेषी हैं (जज्जसाहबसे) क्यों साहब ! अब क्या करना चाहिये ?

जज्जसाहब—अरे भाई ! करना क्या है सहीस को भेजता हूं

और मिट्ठन दालवालेके यहांसे वड़ा कांटा मंगवा लेता हूं
(सहीससे) अरे अइयन !

सहीस–हाँ साहिव !

जज्जसाहव– जरा जलदीसे जाना और दो पांडी (मजूर) करके मिट्ठन दाल वालेके यहांसे काँटा ले आ ! एक मन, दो पंसेरियां और छोटे वट्टेभी लेते आना !

सहीस– हजूर ! घोडवा केर लगाम केहिका थभै जाई !

जज्जसाहव– अवे उल्लू ! गाडीही को दौडा लेजा जलदी. (सहीस अपने मनहीं मनमें जज्जसाहवको–उल्लु तोहार वाप ! सरउ गालीके विना मुंह ते वतियातै नहीं जव द्याखौ तवहीं उल्लू उल्लू ! सार ! एक विरिया सवुर कीन, दुई विरिया सवुर कीन, कव तई सवुर करी. इत्यादि वडवडाता हुआ मिट्ठन दालवालेकी दुकान पर जाकर मिट्ठन लालसे)
लालाजी ! पंडित सुन्दर सहाय जज्जसाहिवने वड़ा काँटा और वाँट (वट्टे) त्वालैकी खातिर मंगावति हैं सो जलदी दइ देवौ.

मिट्ठनलाल– अरे वड़े कांटेमें क्या तोलेंगे ?

सहीस– भैया ! महिका नाहीं पता; मुदौं महिका ऐस लागत है कि पंडित शारदाचंद्र केरि पुतहू मरिगइल है वहिका तौलैकी खातिर मँगाइल है !

मिट्ठनलाल– चल मुसरे ! (झिड़क कर) अवे पागल कभी किसीने मुरदाभी तोला है ? अच्छा हमें क्या ले ये पडा है कांटा और वट्टे उठा लेजा !

(सहीसने वट्टे तो उठाकर गाड़ीमें रख लिये और कांटा पांडि (मजूर) के सिर पर उठवा लाया और आकर दरवाजे पर लगा दिया (जैसे लकाडियां तोलने वालोंके टाल (वखार) में लगा हुआ होता है) मुरदनी में साथ जानेको आये हुए सवासौ डेढसौ आदमी कांटे को देखकर ब्रह्मानन्दसे पूछने लगे)

एकआदमी- क्यों भई ! इसमें क्या तुलेगा ?

ब्रह्मानन्द- इसमें ! इसमें तुलेगी " स्वामीजी " की बुद्धि !

लोगोंमेंसे एक- नहीं नहीं सच कहो !

ब्रह्मानन्द- लो ! क्या मैं झूठ कहता हूं ? " स्वामीजी " ने लिखा है कि मुरदेके बराबर घी तोलना !

लोग- अरे भाई ! वकील और जज्जकी तो अकल मारी गई क्या तुम्हारीभी अकल ठिकाने नहीं है ? तुमहीं चार पांच सेर घी के लिये क्यों हँसी कराते हो ?

ब्रह्मानन्द- (युगलकिशोरसे) अच्छा भाई हुआ ! देखली आपकी और आपके " स्वामीजी " की बुद्धि ! ये पड़ा है घी ! उठाओ ! जलदी देर मत करो ! (चिढता हुआ दूसरी तर्फ मूं करके) अपनी वहनकी लहाश तोलते शरम नहीं आती ! ! (युगलकिशोर स्मशानमें काम आने वाली सब सामग्री (स्वामीजी के कथनानुसार) बनाकर सबके साथ चल पड़े और चार मनुष्योंने 'सत्यवाला' की अरथी को उठाया और " स्वामीजीका नाम सत्य है " की ध्वनी उच्चारण करते हुए स्मशानमें

पहुंचे और वहां 'संस्कार विधि' के पृष्ठ २३९ के अनुसार सब काम कराकर अग्निमें प्रवेश कराने बाद नीचे लिखे मंत्रोंकी भरमारसे बिगडी हुई हवाकी शुद्धि करने लगे.

युगलकिशोर—ॐ अग्नये स्वाहा
ॐ सोमाय स्वाहा
ॐ लोकाय स्वाहा
ॐ अनुमतये स्वाहा
ॐ स्वर्गलोकाय स्वाहा

शारदाचंद्र— (युगलकिशोरके आगेसे हवनकी वस्तुवाला थाल अपनी तरफ खींचकर युगलकिशोरसे) अरे भाई ! तुम्हारा मंत्र किसीकी समझमें तो आता है और किसीकी नहीं ! सुनो ! जैसे मैं बोलूं वैसे बोलकर आहुती दो.

ॐ सत्रह (१७) वर्षकी उमरमें मर गई स्वाहा.
ॐ दो वर्ष तीन महीनेका पुत्र छोडकर मर गई स्वाहा.
ॐ घरके लोगोंको रुलाती मर गई स्वाहा.
ॐ ब्रह्मानन्दको रंडवाकर मर गई स्वाहा.
ॐ स्वामीजीकी बुद्धिको दिखा गई स्वाहा.
ॐ युगलकिशोरकी बहन मर गई स्वाहा.
ॐ स्वाहा स्वाहा स्वाहा (सब वस्तु चिखामें एकदम फेंककर) सब लोगोंकी तर्फ हाथ करके)
ॐ स्नान करके घर चलो भाई स्वाहा—आ—

दूसरा कुछ नहीं ! मैं तो मानूगा तो "स्वामीजी" की कुल बातोंको मानूंगा चाहे दुनियां कुछही क्यों न कहती फिरो ! यह क्या एक बात मानी और एक न मानी ! देखिये ! मेरी औरत मर गई है, अब मेरे लिये मेरे माता पिता दूसरी शादीके लिये विचार कर रहे हैं, सो मैंने आज एक पत्र लिख दिया है कि, अगर आप लोग मेरे विवाहके लिये आग्रह करते हो तो साफ बात है कि, मैं सामाजिक रीती (स्वामी दयानंदजीके सिद्धांत) के मुताबिक ही विवाह करूंगा इत्यादि देखूं क्या उत्तर आता है !

समाजी मित्र– अब आप पक्के आर्यसमाजी हो चुके मगर देखना अब फिर न जाना !

ब्रह्मानन्द– कभी नहीं ! मगर हां जो समाजी लोग केवल दिखाने मात्रही "स्वामीजी" का पल्ला पकड़े हुए सिद्ध होते नजर आवेंगे तो मेरा अखत्यार है, मैं स्वतंत्र विचारका आदमी हूं न्यायपर चलना मेरा काम है. (इधर घरपर)

शारदाचंद्र– (अपने बड़े पुत्र जयंतिसहाय और वंशगोपालसे) क्यों भाई ! क्या सलाह है ? "ब्रह्मानंद" का विवाह दूसरा करनाही होगा !

जयंतिसहाय– बेशक करनाही है. अम्माजीभी दो चार दफा कह चुकी कि, तुम "ब्रह्मानंद" के लिये क्यों

किसी लड़कीकी तलाश नहीं करते ? मगर ये उसका पत्र पढ़ लो आजही आया है.

शारदाचंद्र- क्या लिखा है ? सुनाओ !

जयंतिसहाय- (पत्र जेबसे निकालकर) " मेरे पिताजी
" साहब ! नमस्ते ! मैंने सुना है कि, आप मेरे विवा-
" हके लिये तरद्दत कर रहे हैं सो मेरी मनशा बिलकुल
" नहीं है. अगर आप या माताजी या भाईसाहब वगैरह
" मेरे विवाहके लिये आग्रह करते हों तो साफ बात है
" कि, मैं सामाजिक रीति (स्वामी दयानन्दके सि-
" द्धांत) के मुताबिकही करूंगा ! लड़की किसी अच्छे
" खानदानकी पढी लिखी सामाजिक सिद्धांतोंमें प्रेम
" रखनेवाली हो ! " और विवाहसे पहले " स्वामी-
" जी " ने सत्यार्थप्रकाशमें जो वरकन्याकी परिक्षा
" करनेकी तरकीब बतलाई है उसके मुताबिक कुल
" कार्रवाई होनी चाहिये. अगर आपको और लड़की
" देनेवालेको यह बात मंजूर हो तो लिखियेगा !
" बादमें मैं विवाह करना मंजूर करूंगा.

आपका ब्रह्मानन्द

चैत्र शुक्ल २ संवत १९४३

शारदाचंद्र- अरे जयंति ! यह क्या हुआ ? क्या ब्रह्मानंद दयानन्दी बन गया ? मुझे तो यकीन नहीं आता !

पं. हरदत्त– जीहां ! कियातो था, कहिये ! आपकी क्या मनशा है ?

शारदानंद– भाई साहब ! आप जानते ही हो ! आप कहिये कि, अपनी बड़ी पुत्रीकी सगाई ब्रह्मानंदके साथ करनेकी यदि आपकी मनशा होवे तो हमें मंजूर है वरना हम दूसरी जगहकी मांग मंजूर करें !

पं. हरदत्त– आप इतनातो समझे कि, अगर मेरी मनशा न होती तो मैं आपको इसके बारेमें कहलवाताही क्यों ? मगर जरा इतनी बात है कि, मेरी बड़ी लड़कीके ख्याल्लात कुछ नई रोशनीके साथ मिलते जुलते हैं, और जबसे मेरे पिताजी और भाई साहब आर्यसमाजके लाइफ मेंबरबने हैं, तबसे उन्होंने प्रतिज्ञा करली है कि, हम " स्वामीजी " के कथनसे अन्यथा न चलेंगे ! और मेरीतो आदत आप जानते हीहो कि, मुझे आर्यसमाजपर विशेष प्रीती नहीं और सनातनधर्म पर द्वेष नहीं और नाहीं धर्म संबंधी चरचा करनेको वक्त मिलता है ! पिताजी के इस लिहाजसे आप मुझे भले समाजी समझलें ! मेरे घरवाली की पूरी मनशा यह है कि, अपनी बेटी " माया " का विवाह ब्रह्मानन्दके साथ हो, तो अच्छा है, उसके कहनेसे ही आपको कहलवायाथा मगर जिस कामको मैं करूंगा उसको मेरे पिता या भाई खुशीसे मंजूर करेंगे; सिर्फ इतनी बात है कि, समाजी

रस्मोरिवाजके साथ हमारे पिता विवाह करनेको कहेंगे वो आपने मंजूर करलेना !

शारदाचंद्र– आप क्या कहते हैं ? यहां तो पहलेही ब्रह्मानंद यह कह रहा है कि, मैं यदि विवाह करूंगा तो आर्य विधिके ही मुताबिक करूंगा, वरना नहीं ! लो ये देखो उसकी चिट्ठी !

पं० हरदत्त– (चिट्ठी पढ़कर और खुश होकर) ये पत्र आप मुझे दे दीजीयेगा, क्यों कि इस पत्रको पढ़कर मेरे पिताजी और भाईसाहब बहुतही खुश होंगे और ये कार्य वो स्वयं ही करेंगे और आपसे मिलेंगे ! मगर आप अब और कहीं लड़कीकी तलाश न करे, मेरी लड़की (बड़ी) आपके ब्रह्मानन्दको हो चुकी !

जयंतिसहाय– (पिता और हरदत्तकी क्या बाते होती हैं ये सुननेको आ बैठाथा हरदत्तसे बोला) हैं ! हैं ! पंडितजी ! अभी एकदम ऐसा मत कहो ! क्यों कि, जब तक ब्रह्मानन्द विवाहसे पहले " स्वामीजी " के बनाये हुए " सत्यार्थप्रकाश " में लिखे अनुसार आपकी लड़की " माया " की परीक्षा नहीं ले लेता वहां तक "स्वामीजी" का कथन माना नहीं जा सकता. "स्वामीजी" के कथनसे विपरीत चलना आर्यसमाजी भाईयोंको गुरुके वचनोंका अनादर करना नहीं तो और क्या ?

पं० हरदत्त– अजी बस करो ! कभी विवाहसे पहलेभी

जावेगा ! पहले आप अपनी लड़की हमारे घर देनेका पक्का निश्चय कर लीजीये, और बुद्धिरूप कसौटीसे "स्वामीजी" के लेखरूप सोनेकी परीक्षा कर लीजीये कि, उनकी बुद्धि इस जमानेके लिए कहांतक दौडकर थक गई !

पं० हरदत्त–भाईसाहब ! मरदोंकी जबान एक होती है जब मैं अपनी जुबानसे अपनी लड़की आपके घर देनी मंजूर कर चुका हूं तो अब चाहे मेरा पिता या भाई मुझसे फन्टही क्यों न हो जावें ! मगर " स्वामीजी " संबंधी जो भूत मेरे अंदर आपने भरा दिया है सो अब जाता हूं और भाईसाहबसे पूछता हूं, मगर मेरा पूछना ही फिजूल है, क्यों कि आपके "ब्रह्मानन्द" ने ही " सरस्वतीजी " की सरस्वतीको पकड़ा है उसमें हमारा क्या जोर ? लो मैं जाता हूं !

(इतना कहकर पं० हरदत्त तो अपने घर गये और अपने पिता और भाईसे घरकी सब औरतोंके समक्षमें बैठकर बात करने लगे, पासमें "माया" भी खड़ी है)

पं० हरदत्त– (पितासे) चाचाजी ! मैं किनारीवाले शारदाचंद्रके छोटे लड़के " ब्रह्मानन्द " को इस अपनी " माया " के लिये मंगनी कर आया हूं, आप कहिए अब क्या करना चाहिये ?

कीर्त्तिप्रसाद्– बेटा ! शारदाचंद्रको तो मैं जानता हूं मगर

उसका छोटा लड़का " ब्रह्मानंद " कौनसा है ? सो मेरे ध्यानमें नहीं आता ! जयंतिको तो मैनें देखा है.

माया– (अपनी दादी रुक्मणीके कानमे धीरेसे) दादीजी ! वो ही न ! जिसके साथ " सत्यवाला " हकीमजीकी वहेन व्याही हुईथी !

रुक्मणी– वैठ चुप होके ! मैं जानती हूं ! (फिर अपने पुत्रसे) क्या वोही जो इमलीके महल्ले में युगलकिशोर वकीलकी छोटी वहेनसे व्याहा हुआथा ?

पं० हरदत्त– हां ! हां ! वही.

रुक्मणी– लड़कातो अच्छा है ! उमर उन्नीस या वीस वर्षकी होगी !

कीर्तिप्रसाद्– हां हां ठीक समझा समझा ! जो रेलवेके महकमे में अस्सी (८०) रुपये तनखाह पाता है.

पं० हरदत्त– अवतो पांच (५) रुपये तरकी हुए हैं और तवदील होकर "इटारसी" गया है.

कीर्तिप्रसाद्– वेटा ! वात तो ठीक है, मगर हमारा विचार तो उसके साथ विवाह करने का है, जो अपने आर्यधर्मको पालता होवे ! उनके घरके लोगतो धर्मके नामसे ही कोसों भागते हैं धर्म करना तो दराकिनार रहा !

पं० हरदत्त– (जेवसे एक पत्र निकालता हुआ) नहीं नहीं !

पिताजी ! यह आपका ख्याल गल्त है ! उसके मां बाप चाहे कैसेही हों ! मगर उसके (ब्रह्मानन्दके) ख्यालतो इस पत्रसे देखिये उसने अपने बापको लिखा है, सो यह पत्र मैं ले आया हूं, येलो आप सुनलो कि, क्या लिखता है ?

(पत्र ऊंचेसे पढ़कर सुना दिया जोकि सबने सुना)

शिवदत्त- (हरदत्तका भाई अपने बाप कीर्तिप्रसादसे) चाचाजी ! यह क्या ? मैंने तो सुना था कि अपनी स्त्री "सत्यबाला" के मरने पर उसने युगलकिशोर वकील वगैरह दो तीन जनोंके साथ बड़ी ही झंझट बाजी कीथी और अपने धर्मका बड़ा फजीता किया था और "स्वामीजी" के बारेमें भी बहुत कुछ बुरा भला कहा था !

पं० हरदत्त- मैं नहीं मान सकता कि, वह लड़का ऐसा हो!

रुक्मणी- (शिवदत्तसे) नहीं बेटा शिवदत्त ! मैंने उसका सारा हाल सुना है. बलकि आज चार पांच रोज हुए कि "माया" की अम्मा, (राधा)को "पंडित सुन्दर सहाय जज"की बहु मिलीथी उसने उसका चालचलन बहुतही अच्छा बतलाया, और देखनेमेंभी खुबसूरत है ! अभी चेहरेपर रेखभी नहीं आई ! सच पूछो तो मेरा दिल तो यही चाहता है कि, इस काममें देर न होनी चाहिये! अगर ये अवसर हाथसे खो दोगे तो " माया " के लिए ऐसा लड़का (वर) फिर मुश्किलही मिलेगा ! " सत्यवाला " दो अढ़ाई साल- का लड़का छोडकर मर गई है, उसे उस (ब्रह्मानंद) की

वहेन (मालती) पालती है ! इस कार्यमें देर मत करो ! घर अच्छा है, और वरभी अच्छा है ! (यह वात सबने मंजूर कर ली और पासमें खड़ी हुई "माया" मुशकराई.)

कीर्त्तिप्रसाद- (हरदत्तसे) अच्छा तो कहला भेजो !

रुक्मणी- कहलाना क्या है ? सगन भेज दो !

कीर्त्तिप्रसाद- मगर उनसे यह करार कर लेना कि, विवाह वैदिक रीतिसे होगा !

माया-(अपनी मा-'राधा' से) अम्मा ! देखो दाऊजीने क्या अच्छी वात कही है, और होनाभी यूंही चाहिये ! ये सगन वगन पीछे भेजवाना पहले यह लो " सत्यार्थप्रकाश " समुल्लास चौथा पृष्ठ ९२-९३ में अपने " परमपूज्य श्री स्वामी दयानंद सरस्वतीजी " विवाहके पहले लड़का और लड़कीको क्या करना फरमाते हैं ? इसको पढ़ो !

पं० हरदत्त-(अपनी लड़कीसे आंखे घूरकर) वेटी ! तुझे चुप रहना चाहिये ! कभी शरमदार भले घरकी वेटियां इस प्रकार नहीं बोला करतीं ! जो कुछ वेटीके मा वाप करें उसे शिर माथेपर लेना चाहिये. तूं पंद्रह (१५) वर्षकी हुई है तेरेको मा वाप और दादा दादीके सामने इस सलाहको देते शरम नहीं आती ?

कीर्त्तिप्रसाद-(हरदत्तसे) उसे ठीक वात कहती हुईको क्यों

धमकाता है ? (पोती-“ माया ” से) बेटी! तूने ठीक कहा है, सब कुछ “ स्वामीजी ” के कथनानुसार ही कार्य किया जावेगा ! सुनातो पढकर ! “ स्वामीजी ” ने क्या लिखा है ?

माया- (बेधडक होकर) मैं कौनसा बापके धमकाने पर काँन धरती हूं, इस वक्त इनके दबकानेको मानकर चुप हो रहूंगी तो न जाने किस अनघड़के पाले पड़ूं! इनका क्या बिगड़ेगा ? सारी उमरका रोनातो मेरी जानका रहेगा ! सच कहते हैं जहां ऐसी ऐसी बुद्धिवाले लोग हों वहां उन्नति नहीं हो सकती. दाऊजी! जब मैं यूरोपकी स्त्रियों और लड़कियों का इतिहास पढ़ती हूं तो मुझे ऐसा आनन्द पैदा होता है कि कुछ मत पूछो ! और मैं परमेश्वरसे प्रार्थना करती हूं के हमारे देशकी स्त्रियोंकोभी इस प्रकारकी आजादी मिलेगी !

पं० हरदत्त- (अपनी लड़कीके यह वचन सुनकर मनहीं मनमें) हाय हाय ! यह लड़की है या कोई आफत ? यह मेरी पुत्री कहलानेसे तो मरजाती तोही अच्छा था मगर खैर इसके मुंहसे सारी उमरका रोना निकला है तो रोनाही रहेगा !

माया- (सत्यार्थ प्रकाशको हाथमें लेकर कीर्त्तिप्रसादसे) लो दाऊजी ! सुनो—“ उन कन्या और कुमारोंका “ बिंब अर्थात् जिसको फोटोग्राफ कहते हैं अथवा प्रति “ कृति उतारके कन्याओंकी अध्यापिकाओंके पास

" कुमारोंकी. कुमारोंके अध्यापकोंके पास कन्याओंकी
" प्रतिकृति भेज देवें, जिसका रूप मिल जाय उस उसके
" इतिहास अर्थात् जन्मसे लेके उस दिन पर्यंत जन्मचारि-
" त्रका पुस्तक हो उसको अध्यापक लोग मंगवाके देखें
" जब दोनोंके गुण कर्म स्वभाव सदृश हों तब जिस
" जिसके साथ जिस जिसका विवाह होना योग्य समझें
" उस उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिंब और इतिहास
" कन्या और वरके हाथ में देवे और कहें कि इस तें
" जो तुम्हारा अभिप्राय हो सो विदित करदेन सिन्ज-
" उन दोनाका निश्चय परस्पर विवाह करनेका हो
" जाय तब उन दोनोंका समावर्त्तन एकही समयमें
" होवे, जो वे दोनों अध्यापकोंके सामने विवाह करना
" चाहें तो वहां, नहीं तो कन्याके माता पिताके घरमें
" विवाह होना योग्य है, जब वे समक्षमें हों तब उन
" अध्यापकोंका कन्याके माता पिता आदि भद्रपुरुषोंके
" सामने उन दोनोंकी आपसमें वातचीत शास्त्रार्थ क-
" राना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछें सोभी सभामें
" लिखके एक दूसरेके हाथमें देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें
" जब दोनोंका दृढ प्रेम विवाह करनेमें हो जाय तबसे
" उनके खानपानका उत्तम प्रबंध होना चाहिये कि
" जिससे उनका शरीर जो पूर्व ब्रह्मचर्य और विद्या-
" ध्ययन रूप तपश्चर्या और कष्टसे दुर्बल होता है वह
" चंद्रमाकी कलाके समान बढ़के पुष्ट थोड़ेही दिनोंमें हो
" जाय पश्चात् जिस दिन कन्या रजस्वला होकर जब

" शुद्ध हो तब वेदी और मंडप रचके अनेक सुगंधादि
" द्रव्य और घृत आदिका होम तथा अनेक विद्वान पु-
" रुष और स्त्रियोंका यथायोग्य सत्कार करें, पश्चात्
" जिस दिन ऋतुदान देना उचित समझें उसी दिन सं-
" स्कार विधि पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सब कर्म
" करके मध्यरात्री वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके
" सामने पाणीग्रहण पूर्वक विवाहकी विधिको पूरा करके
" एकांत सेवन करे, पुरुष वीर्य स्थापनकी और स्त्री
" वीर्य आकर्षणकी जो विधि है उसीके अनुसार दोनों
" करे " (इत्यादि सुनाकर फिर कहने लगी) दाऊ-
जी ! देखो यह विवाहकी विधि बताकर आगे फिर
लिखा है कि-" जब वीर्यका गर्भाशयमें गिरनेका समय
" हो उस समय स्त्री और पुरुष दोनों स्थिर, और ना-
" सिकाके साथ नासिका नेत्रके सामने नेत्र अर्थात्
" सूधा शरीर और अत्यंत प्रसन्न चित्त रहे डिगे नहीं
" पुरुष अपने शरीरको ढीला छोड़े, और स्त्री वीर्य-
" प्राप्ति समय अपानवायुको ऊपर खींचे योनीको ऊपर
" संकोचकर वीर्यका ऊपर आकर्षण करके गर्भाशयमें
" स्थित करे. "(मायाकी मां और दादी वगैरह घरकी
सब औरतोंको बड़ी भारी शरम आई मनही मनमें वि-
चारने लगी कि-हाय हाय ! कैसी बेशरम लड़की है ?)

पं० हरदत्त- (क्रोधमें आकर "माया"के हाथसे "सत्यार्थ
प्रकाश " छीनकर अपने बापसे) गजबरे गजब !

चाचाजी! क्या कहना है? आपने इसको बहुतही अच्छी तालीम दी और वैदिक धर्मका मर्म सिखलाया है! (अधिक क्रोध) बस! मेरा आपसे कोई तअल्लुक नहीं आप जुदे, मैं जुदा! भरपाया आपसे और आपके धर्मसे! धिक्कार है इस धर्मके चलाने वालेको क्या कहूं तूं मेरा बाप है वरना अभी तमाशा दिखादूं (कुछ देर बाद) अरे कैसे गजबकी बात है! आजतक मैं नहीं जानताथा कि स्वामी ऐसा अनार्यधर्म चलाने वाला है! मैंने तो नाहक ही सभाओंमें चंदाभरा, नाहक ही आर्य मैसिन्जरादि अखबारों का ग्राहक बन अनार्यधर्मी कहलाया. (अपनी मासे) अरी मा! तेरा सत्यानास जाय! तूने भी कुछ ख्याल नहीं किया कि, ये कलजोगन! क्या पढती है? आर्यकन्याशालामें क्या पढाई और क्या तालीम दी जाती है? कभी कुछ ख्यालभी नहीं किया कि, ये क्या धर्म पालती है? (अपनी औरतसे दांत किट किटाकर) अरी रांड! हरामजादी! तैने इस जहरकी बेल को बढ़ाकर क्यों मेरी रईसी इज्जतका नाश किया! (बेटोसे) अरी! कुलकी जस कीर्त्तिपर पानी फेरने वाली कुमाया! क्या तुझे अपने सामने बैठे हुए मा, बाप, दादी, दादा भी नजर नहीं आते? (दांत पीसकर) अरी बेहया बेशरम बदजात! इतने बड़े बड़े दयानंदके भगत और जो मोहरी बने फिरते हैं, उनके घर में सैकडों ब्याह हुए हैं, क्या तुने कहीं देखा या सुना कि, फलाने के घर फलानेकी लडकीका विवाह इस प्रकारसे हुआ?

मुझे अफसोस तो इसबातपर आता है कि, हमें इस लेख को सुनते ही बडी शरम आती है ! तुझ से पढा किस तरह गया ? तेरे जैसी अच्छे घरानेकी पैदा हुई ऐसे लेखपर अमल करने कराने को तयार हो तो इससें बढकर और अनर्थ क्या होगा ?

क्या करुं में उन भले आदमीओं को जबान दे आया हुं वरना सारा ही दयानन्द के मतका पालन करा देता और तुझे समाजका ताज पहना देता ! (इस प्रकार हरदत्तको बोलते हुए देखकर किसीकोभी सामने उत्तर देनेकी हिम्मत न चली इतनेमें)

आर्या-(बेधडक होकर बापसे) बस पिताजी ! बस !

उंची नीची जुबान मत निकालो ! अगर हरामजादी हुं तो आपकी हुं ! बदजात हुं तो आपकी हुं ! मगर आपको याद रहे कि मैं उसके साथ विवाह कराने को कदापि तैयार नही हुं, जिसकी कि, मैं अपनी मरजी के मुताबिक परीक्षा न करलुं ! आप क्या मेरी जिन्दगी को खराब करना चाहते हो ? आपने कहा है कि, ऐसा तो काम बडों बडों के घरमेंभी नहीं हुआ ! आपको क्या मालुम है कि, क्या होता है ? और हमारे पूर्वज क्या करते आये हैं ? आप तो जबसे होश संभाली है तबसे कन्ट्राक्टर (ठेकेदार) बनकर, बन बन में लकडियोंका ठेका लेते फिरे हो ! अगर आपने पूर्वजोंका इतिहास पढा होता तो कभीभी ऐसे असमंजस वचन मुंहसे न निकालते !

और न "स्वामीजी" को वुरा भला कहते ! पिताजी ! ये याद रखो कि, मुझे मरजाना तो मंजूर है, मगर यह उत्तम आर्य धर्म और "स्वामीजी" के किये हुए वेदों के अर्थ और वतलाये हुए गुप्त रहस्योंसे वरखिलाफ चलना मंजूर नहीं ! मेरे दादा वगैरह से जुदा होकर क्या मुझे आप अपनी मरजीके मुताविक किसी के साथ व्याह दोगे ? आप इस ख्याल में मत रहना ! राज्य गवर्नमेन्ट सरकार महाराणी मलका का है, इस लिये आपको लाजिम है कि, आप घरमें झगडा मत डालो और मेरे लिये "स्वामीजी" के ही वचन पालो ! आगेके लिये आपकी मरजी ! अपनी सारी जिन्दगी पोप धर्म में ही गालो ! आप मुझे आर्य ब्रह्मानन्द को देनेके लिये उसके वापसे प्रतिज्ञा करचुके हैं, सो वहुत अच्छा मैं आपकी, प्रतिज्ञाका खंडन नहीं होने दुंगी, यह मेरा भी धर्म नहीं है ! लोग विरादरी में हाँसी होने का ख्याल अगर आपको होतो यह आपका गलत ख्याल है, विवाह में आर्य धर्म के निन्दक पोप पाखंडियों को बुलाना ही क्यों ? जो हाँसी करें ! आपको चाहिए कि एक पत्र छपवाकर आर्य विद्वानो और वडे वडे ग्रेज्युएटो तथा पं० सुन्दर सहाय P.C. जज आदिकों को भेज दीजीये, और आर्य सभाओ को भेजदीजीये, और वाहर शहरों में भी भेजदीजीये गा. जैसी उन विद्वान आर्य पंडितो के आनसे मेरे विवाह मंडपकी शोभा होगी क्या उन पोप पाखंडी अनपढो के ग्रोहसे वैसी होगी ? नहीं ! हरगिज नहीं ! और उन

लोगों के आने से आपका महत्व बढेगा और सारे हिन्दुस्तानमें आपका नाम प्रसिद्ध होगा! आप प्राचीन रीती के अनुसार प्रवृत्ति करने वाले कहलायेंगे, इसवक्त आपको बिरादरीका खौफ करना बिलकुल ही निकम्माहै, धूल डालो इस पोप बिरादरी के सिरपर! जो आर्य हैं वही हमारी बिरादरी है बाकी तो सब बुरादरी ही हैं!

आज कल ऐसा जमाना आ गया है कि, जो अच्छी बात बतलाओ तो बुरी मालुम देती है! इसकी वजह यही है कि, उनको बचपन से तालीम ठीक नहीं मिलती! मैं देख रही हुं कि, इसवक्त मेरी मा, दादी वगैरह सबही दांत पीस रही हैं इसकी वजह यही है कि, ये अनपढ और मूर्खनी हैं! दूसरी को पढी हुइ देखकर इर्षा करती हैं! पहले भी मैं इसके मूंह से सुनचुकी हूं कि "राय साहब ने 'विद्या' को विद्या क्या पढाई है हमसे घड़ीभर बात करनी तो दूर रही सीधे मूंह बोलती भी नहीं! ऐन्ट्रॅन्सका तो इम्तिहांन दिला दिया न जाने अभी कहां तक पढाये ही जायेंगे?" अब सोचना चाहिये कि, इनके साथ घडी आध घडी निकम्मी बातें करनी अच्छी या उतनी देर में अपना लहसन्स याद किया जावे वो अच्छा? (दादीसे) दादीजी! बुरा मत मनाना तुमतो मुझे बडा प्यार करती और अच्छी तरह रखती हो और तुम्हारीही मेहरबानीसे मैं इतना पढ भी गई! वरना अम्माकी तरह मैं भी रहजाती! इसलिये गुस्सा छोडदो और जिस तरह से बने आपसमें सलाह करके मेरे

व्याहकी वात प्रसन्नता पूर्वक करदो वाद में जो वनेगा वो मैं आपही समजूंगी ! जब वो आर्य रीति से विवाह करना मंजूर करते हैं तो आपको मेरे लिये मंजूर करना ही पडेगा ! मैं ने ' ब्रह्मानंद ' को देखा है, वो एक पढा हुआ लायक है, उसके एक लडका "सत्यवाला" से है, सो उसका मुझे कुछ एसा विशेष दुख उठाना पडे एसा नहीं मालूम देता, क्यों कि उसको उसकी बुआ (मालती) पाल रही है, वह अनुमान तीन सालका होनेका आया है (सबके सब "माया" को इस तौर खुले दिल शरम रहित वेधडक देखकर सोचने लगे कि, वस ! हद हुई ! अब बोलनेकी जरुरत नहीं अबतो जैसे बने वैसे अपनी इज्जत रखनी चाहिये !)

कीर्तिप्रसाद–(हरदत्तसे) वेटा ! तूं हमें जुदा होनेकी धमकी देता है सो तेरी मरजी ! मगर ये तो वता कि "माया" ने इस वक्त क्या बुरा कहा है? खैर तूं जान तेरी लडकी ! हमतो आर्य धर्म पर जितना वनेगा उतना अमल करेंगे अगर इस लडकीने जो कहा है उसके मुताबिक काम होगा तो हम तेरे साथ शामिल है वरना तु जान तेरा काम !

हरदत्त–अच्छा पिताजी ! (सांसभरकर) आपकी मरजी जो आपके मनमें आवे सो करो ! कुछ अपनी इज्जतका ख्याल आपकोभी तो होगाही ! क्या अपना भला बुरा आप नहीं जानते ?

कीर्तिप्रसाद- मुझे तेरे कहने पर बडा ही अफसोस मालूम होता है कि क्या, जितने सज्जन और आबरूदार बडे बडे ग्रेज्युएटस अहलकार व अमलदार लोग आयेंगे क्या वे सबके सबही तेरी समझमें बेवकूफ हैं ? क्या उनको अपनी इज्जतका ख्याल नहीं है ? इतना तो जरुर है कि, जो इज्जत और आबरु व विद्या इस वक्त इनको पैदा हो रही है वह आर्य धर्म अंगीकार करनेसे पहले कोसों-तक भी नजरमें नहीं आती थी! हां अगर वो कुछ वेद विरुद्ध करते नजर आते हों तो कहनाभी ठीक है, इस लिये मुझे आर्यधर्म (स्वामीजीके वचनों) से विपरीत चलना पसंद नहीं है. मैं भला बुरा सब जानता हुं ! मैं अब ज्यादा बात बढानी ठीक नहीं समझता अगर विवाह करना हो तो आर्य रीतिसे करनेमें मैं तेरे सामिल हुं वरना तेरी लडकी तूं जान !

हरदत्त-(अपने कपालको हाथ लगाकर) पिताजी ! कहो आप क्या चाहते हैं ? मैं तो अब जो आप कहो सो करनेको तैयार हुं, मुझे तो इस वक्त आप कहो कि-नंगे होकर बजारमें नाच तो मैं नांचनेंको भी तैयार और नचाने को भी तैयार (अपनी मांसे) मां ! मुझे पिताजीका हुकम मंजुर है (यह सुनकर सबही हंसपडे)

रुकमणी-लायक पुत्र हो तो तेरे ही जैसा हो (घरमें अंदर से सिवाय कीर्त्तिप्रसाद (हरदत्त के पिता) के और

माया के किसीकी भी मरजी नहीं है कि इसका विवाह आर्य विधि से हो ! लेकिन क्या करे ? आखर लोग दिखावे के लिये नाई के हाथ रुपया नारियल दे भेजा और व्याहका निश्चय हो गया, सहारनपुरसे पंडित मोहनपाल को आर्यविधि से विवाह करानेके लिये बुलवा लिया ! और हेन्डबिल छपवाकर सबजगह आर्यसमाजियो को भेजवा दिया कि—

मान्यवर महाशयजी ! नमस्ते

सविनय निवेदन है कि दश फरवरी सन १८९१ वार बुध के रोज मेरे पुत्र हरदत्तकी वडी पुत्री 'माया' का विवाह संस्कार है, विवाह वैदिक रीतिसे होगा. संस्कार करानेके लिये सहारनपुरसे पंडित मोहन पालजी बुलाये गये हैं इसलिये आपलोग पधारकर सभामंडपकी शोभाको बढाते हुए मुझे अनुग्रहित करेंगे ! वैदिक धर्मकी उन्नति और शोभा आप पर हि निर्भर है

आपका शुभचिन्तक

कीर्त्तिप्रसाद.

नोट—दस वजेसे चार वजे तक स्वामीजीके लेखानुसार वर कन्याकी परस्पर परीक्षाका कार्य होगा.

उधर ब्रह्मानन्दभी अपने बाप शारदाचन्द्रके बुलानेपर अपनी एवजी (ड्यूटी) पर एक उम्मेदवार अगड़दत्त आर्य समाजीको रखकर घरको आ पहुंचा ! और पूर्वोक्त रीतिसे फोटोपचार हुआ. और कीर्त्तिप्रसादने जहां मंडप सजायाथा (राय श्री शंकरकी कोठीमें) मायाको ले जाकर वहां ब्रह्मानंदको बुलाया, उसवक्त मान्यवर आर्यसुप्रतिष्ठित महाशयोंसे सभा मंडप भर गया. उनके सामनेही पत्र द्वारा " माया " और " ब्रह्मानंद " का " स्वामीजी " के वचनानुसार, सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ९३ के मुताबिक (कन्याके माता पिता आदि भद्र पुरुषोंके सामने उन दोनोंकी आपसमें बात चीत शास्त्रार्थ करना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछे सोभी सभामें लिखके एक दूसरेके हाथमें देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें) इत्यादि कार्रवाइ शुरु हुई ! मगर उस वक्त " माया" की मां या दादी वगैरह अन्य कोई औरतें हाजर नहीं हुई.

पं० मोहनपाल– (ब्रह्मानन्दसे) हां साहब ! अब क्या देर है ? खड़े हो जाओ और परमेश्वरकी प्रार्थनाके लिये वेदकी ऋचासे मंगलाचरण करो !

ब्रह्मानन्द– (खड़ेहोकर) हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १ ॥

पं० मोहनपाल– बस! अब आप (अपने सामने खड़ी हुई को विवाहनेकी इच्छा वाले) को चाहिये कि जो तुम्हारे दिलमें आवे उस प्रकार प्रश्नोत्तर कीजीये ! (मायासे)

भद्रे ! तुम भी शांतिके साथ अपने भावि पतिको उत्तर दो और जो तुमने भी पूछना हो वो पूछो ! आप दोनों का जीवनचरित्र आप दोनोंने सुन ही लिया है.

ब्रह्मानन्द– (मायासे) तुमको कौनसा धर्म मान्य है ?

माया– मुझे वैदिक धर्म मान्य है! और नाहीं मैं इस वैदिक धर्मसे परे किसी धर्मको मानती हूं !

ब्रह्मानन्द– तुमने कौनसे ग्रंथ पढ़े हैं ? और किन किन ग्रंथो पर तुम्हारी प्रीति है ?

माया– मैंने " आर्यकन्या पाठशाला " की अध्यापिका वीवी पानादेई की मेहरवानी से " स्वामीजी " के वनाये हुए " यजुर्वेद भाष्य " " वेद भाष्य भूमिका " " संस्कार विधि " और " सत्यार्थप्रकाश " आदि ग्रंथोंको पढ़ा है, मुझे इन्हीं ग्रंथों पर प्रेम है !

ब्रह्मानन्द– सत्यार्थ प्रकाशके कितने समुल्लास हैं ?

माया– चौदह !

ब्रह्मानन्द– अच्छा ! वतलाओ कि, यह वर्णन किस ग्रंथमें किस जगह " स्वामीजी " ने किया है कि, जिससे कुरूप और वक्रांग संतान न हो !" और गर्भ धारण करनेकी विधि किस प्रकार वतलाई है ?

माया– (कुछ विचार कर) " स्वामीजी " के किये हुए यजुर्वेद भाष्यके अध्याय १९ मंत्र ८८ में इसका वर्णन है.

ब्रह्मानन्द– (हाथ में स्वामीजीके भाष्यको लेकर) अच्छा ! वोलो क्या विधि है ?

ब्रह्मानन्द- तुम पहले चौदवां (१४) मंत्र तो उच्चारण करो जिससे मुझे भी मालूम होवे कि, तुमको मंत्र उच्चारण करना भी आता है या कि नहीं ?

माया- मुझे कंठस्थ तो है नहीं ! लाओ देखकर मंत्र उच्चा-रण करती हुं ! (वड़े उच्च और मधुर स्वरसे)

वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि
चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रन्ते शुन्धामि
नाभिन्ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि
पायुन्ते शुन्धामि चरित्रांस्ते शुन्धामि ॥१४॥

पं० मोहनपाल- (ब्रह्मानन्दसे) मैं उम्मेद करता हूं कि इस प्रकारके मधुर स्वरसे इस मंत्रको और ऐसा स्पष्ट और शुद्ध तो आप भी उच्चारण नहीं कर सकेगें ! अच्छा ! अब आप इसका अर्थ पढ़ सुनाइयेगा !

ब्रह्मानन्द- (मायाके मधुर स्वरको सुनकर लट्टु हुआ हुआ) क्या मैं इसका अर्थ सुनाऊं ! वेहतर हो कि तुम इसके अर्थको अपने दिल ही दिलमें पढ़लो ! मुझे जरा इसके पढ़ने में संकोच होता है !

माया- आप यूं हीं क्यों नहीं कहदेते कि मुझसे पढ़ा नहीं जाता ! अभी तो आप कहतेथे कि " स्वामीजी " के किये हुए अर्थ हिव्ज हैं अब आपको यादतो है नहीं इस लिये कहते हो कि संकोच होता है ! इसमें क्या संकोच की बात है ? (पं० मोहनपालसे) सुनि-

येगा पंडितजी साहब ! इस अर्थ में क्या ऐसीबात है जो इन्हें संकोच होता है ! लो मैं ही सुनाती हूं आप लोग सुनिये !

“ हे शिष्य ! मैं विधि शिक्षाओंसे तेरी जिससे बोलता है उस वाणीको शुद्ध अर्थात् सद्धर्मानुकूल करता हूं ! तेरे जिससे देखता है उस नेत्रको शुद्ध करता हूं, तेरी जिससे नाड़ी आदि बांधे जाते हैं उस नाभीको पवित्र करता हूं, तेरे जिससे मूत्रोत्सर्गादि किये जाते हैं उस लिङ्ग (पुरुष चिन्ह) को पवित्र करता हूं, तेरे जिससे रक्षा की जाती है उस गुदा इन्द्रियको पवित्र करता हूं समस्त व्यवहारोंको पवित्र शुद्ध करता हूं—तथा गुरुपत्नी पक्षमें सर्वत्र “ करती हूं ” यह योजना करनी चाहिये !” (पंडित मोहनपालसे) क्यों पंडितजी ! इसमें क्या संकोच होनेकी बात है ?

पं० मोहनपाल– नहींजी कुछभी नहीं ! संकोच होनेकी क्या बात है ! !

ब्रह्मानन्द– अच्छा तो पंडितजी ! फरमाइयेगा मैं आपका शिष्य होता हूं ! क्या आप मेरी ‘ गुदा ’ की और ‘ लिङ्ग ’ की शुद्धि करोंगे ? अगर करोंगे तो क्या इन लोगोंके समक्ष करोंगे ? या अन्दर कोठडीमें ले जाकर !

शारदाचंद्र– (ब्रह्मानन्दसे) अवे ! भूतनीके ! इसवक्त उस विचारीके साथ बात करता है या कि पंडितका चेला बनता है ? पहले उस विचारीको चेली बना ले

बादमें पंडितजीका चेला बनकर शुद्धि कराता फिरियो !

पं० हरदत्त– (इन बातोंको सुनकर दुःखी होता हुआ अपने मनहीं मनमें) धिक्कार है ऐसे धर्मको और लानत है बैठे हुए इन ग्रेज्युएटोंको ! और सबसे ज्यादा धिक्कार है मेरी इस लड़की–'माया' को जो इतने आदमीओंमें वेश्या (रंडी) की तरह बोलती हुई जराभी नहीं शरमाती ! ! (शारदाचंद्रके कानमें) भाई ! मुझे तो ये बातें बहुतही बुरी लगती हैं ! अगर इनमें सनातनधर्मी या और किसी मतके माननेवाला कोई मनुष्य निकल आया तब तो बहुतही फजीता होगा !

शारदाचंद्र– भाई ! अब अपना बोलना अच्छा नहीं है चलने दो जैसे काम चलता है, विवाह के बाद 'ब्रह्मानन्द' और 'माया' दोनोंको मैं एकही महीने में ऐसा तीर बना दूंगा कि, इस (अनार्य) धर्मकी धूल यही दोनों उड़ायेंगे ! तुम देखते जाओ क्या होता है ! दरवाजे पर मैंने अपना चपड़ासी बिठा रखा है इस लिये सिवा दयानन्दियोंके दूसरा आदमी अंदर नहीं आ सकता ! (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चल आगे अब जो प्रश्न करना है सो कर या उस बिचारीको इजाजत दे ताकि तुझे पूछे ! निकम्मी बातोंमें वक्त जाया करना ठीक नहीं !

माया– (अपने भावि पति–ब्रह्मानन्दसे) जाने दो इस बातको ! आप ये बतलाइये कि– "ऐश्वर्य की इच्छा रखने वाले मनुष्यको क्या करना चाहिये ? इसके बारे

में "स्वामीजी" का क्या मत है? और वह कहां लिखा है

ब्रह्मानन्द- तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर मैं कागज पर लिख कर दूं तो क्या तुम मंजूर करोगो ?

माया- कागज पर लिखी हुई उन्हीं वातोंको मंजूर करूंगी जो कि मेरे और आपके गुह्य व्यवहारसे संवंध रखती होंगी!

ब्रह्मानन्द- अरे !(अपने मनमें) क्या ये कोई पा.... तो नहीं है ? (अव्यक्त चेष्टासे) हुं-हुं-हुं खैर (प्रगट माया से) हां तो लो ! ऐश्वर्य चाहने वालेको क्या करना चाहिये ? यही तुम्हारा प्रश्न है न ?

माया- (मुसकराकर) जी हां !

ब्रह्मानंद- लो सुनो इसका उत्तर (धीरेसे मायाके नजदीक मुंह करके) "ऐश्वर्यके लिये वैलसे भोग करे" फिर तुमने इसके साथही पूछा है कि "स्वामीजी" का इसके वारेमें क्या मत है ? और वह कहां लिखा है ? सोभी सुनो ! यजुर्वेद अध्याय २१ मंत्र ६० में "स्वामीजी" लिखते हैं कि-"हे मनुष्यो जैसे आज भली भांति समीप स्थिर होनेवाले और दिव्य गुणवाला पुरुष वट वृक्ष आदिके समान जिस जिस प्राण और अपानके लिये दुःख विनाश करनेवाले छेरी आदि पशु-से वाणीके लिये मेढ़ासे परम ऐश्वर्यके लिये वैलसे भोग करे."

माया- क्या "स्वामीजी" का किया हुआ यह वेद मंत्रका अर्थ आपको मान्य है ?

ब्रह्मानंद— (विचारे विना ही अभिमानमें आकर) हाँ हाँ ! क्यों नहीं !

माया— (मुशकराकर) अब तो मुझे आपके आर्य होनेमें कुछभी संदेह नहीं रहा !

ब्रह्मानन्द— (मायाको मुसकराती हुई देखकर मनमें) अरे ! मैं तो बहुत भूला जो हां कह बैठा क्यों कि बैलके साथ भोग करना क्या यह मनुष्यका धर्म है उसपरभी अपने आपको आर्य कहलानेवालेका ! क्या ऐसी बातें जिसमें हों वह वेद हो सकता है ? अगर ऐसाही है तब तो धन्य है 'स्वामीजी' को कि, जिन्होंने ऐश्वर्यप्राप्तिका ऐसा सरल मार्ग बतलाया कि, मुहूर्त्त करतेही छ (६) वर्षके लिये आनन्द (कारागारका) मिल जाता है ! मगर अपनी जबानको नहीं फिराना चाहिये ! (प्रगटमें) मगर इसमें मुझे यह शंका हो रही है कि "ऐश्वर्यकी इच्छाके लिये बैलसे भोग करे" सो मनुष्य तो ऐश्वर्यकी इच्छाके लिये बैलके साथ भोग कर सकता है मगर जिस औरतको ऐश्वर्यकी इच्छा हो तो वो बैलके साथ भोग किस प्रकार कर सकती है ? यह संशय मेरे दिलमें कितनेहीं अरसेसे पैदा हुआ है ! मैंने 'स्वामीजी' के ग्रंथोंका कई बार अवलोकन किया मगर कहीं भी ऐसा लिखा हुआ नहीं मिला कि "ऐश्वर्यकी इच्छा करनेवाली औरत बैलसे भोग किस प्रकार करे ?

माया— (हँसकर धीरेसे) आप इस विषयको हाँसी में हीं उड़ाकर मुझसे अन्य कोई प्रश्न पूछो ! मैं ज्युं ज्युं आप

से बात करती हूं त्यूं त्यूं ही मेरा दिल विवश होता जाता है, बस ज्यादा क्या कहूं ? अब मुझे आपके बगैर दूसरे पतिसे बस है, आपकी आज्ञा सर्वथा मान्य है !

ब्रह्मानन्द– (पं० मोहनपालसे) अजी पंडितजी !

पं० मोहनपाल– हाँ भाई ! क्यों ?

ब्रह्मानन्द– क्यों क्या ? आप तो नींदके झोके खाते है ! क्या रात सोये नहीं ?
(सभा में सब लोगोंकी हँसा हस)

पं० मोहनपाल– (आंखोंको मसलकर) भाई ! इस वकत में नींदका झोका नहीं खाता तो इसवक्त इन महाशयोंके दिलकी कली कैसे खिलती ? सारी रात खटमलों ने सोनें नहीं दिया इस लिये नींद आती है ! अच्छा हां अब तुमने क्या किया ? आगे काम चलाओ ! माया के प्रश्नका उत्तर दे दिया ?

ब्रह्मानन्द– जी हां । उत्तर दे दिया ! मगर आप जरा इजाजत दो तो मैं भी बाहर जाकर अपनी सुस्ती उतार आऊं और जरा पानी पी आऊं ?

शारदाचंद्र– (ब्रह्मानन्दसे) अरे ! सुस्ती फुस्ती पीछे उतारते फिरना पहले इस कामको भुगताले ! फिर ये महाशय लोग भी अपने अपने घरोंको जावें !

ब्रह्मानन्द– आप तो ख्वामख्वा जलदी मचाते हैं देखो तो स्वयंवरका टाइम १० से ४ बजे तक का दिया है, और अभी तो ग्यारां ही बजे हैं, अभी पांच घंटे बाकी हैं,

इतनी बातचितमें तो न मेरी ही तसल्ली हुई है और न इस मायाकी ! (सभा में से एक वृद्ध महाशय शारदाचंद्रसे) नहीं नहीं जलदी करने की जरूरत नहीं है यह काम आहिस्ते ही होना चाहिये ! यहां हम सब खा पीकर आये हैं (फिर ब्रह्मानन्दसे) जाओ बेटा ! जाओ! जरा बाहर फिर आओ !

ब्रह्मानन्द– जी ! बहुत अच्छा ! (इतना कहते ही बाहर आया और उस कोठी (जिस जगह में स्वयंवर का काम हो रहा था) के समीप चांदनी चौक में टहलने लगा, इतने हीं में क्या देखता है कि " दया " और " नदिनी " नाम की दो विधवा नवयौवना स्त्रिएं रोती हुई स्वयंवरके स्थानकी तर्फको आरहीं हैं, उनको समीप आती देख आगे होकर) क्यों बहनों ! तुम क्यों रोती हो?

दया– भाई ! हमारे रोनेको कौन सुनता है ? मगर आप इतना बतलाइये हमने सुना है कि, पंडित हरदत्त सहाय कन्ट्राक्टरकी लड़की " माया " का विवाह शारदाचन्द्रके लड़के " ब्रह्मानंद " के साथ वैदिक रीति (दयानन्द संस्कार विधि) से होना स्वीकार हुआ है ! सो आज राय श्री शंकरकी कोठी में उनके निमित्त स्वयंवर रचा गया है, वहां पर बड़े बड़े आर्यमहाशय इकट्ठे हुए हैं उनमें पंडित सुन्दर सहाय P. C. जजसाहब भी आये हुए हैं वह कौनसी और किस जगह पर है ?

ब्रह्मानन्द– बहेन ! उनसे तुमको क्या काम है ?

नंदिनी- आप मकान तो बतलाइये !

ब्रह्मानन्द- मकान तो यही है ! चलो अंदर (यह सुनकर दोनों जनी अंदर चली गई और पीछे पीछे ब्रह्मानन्द भी पहुंच गया. सभा मंडप में बैठे हुए महाशयों को तथा बीचमें खड़ी हुई 'माया' को देखकर)

दया-और-नंदिनी- (आंखों से आंसू बहाती हुई गाती है)

" क्या दुख कहूं मैं तुम से ये ऐ जनाब मन ! ।
दुखियाके दुःखको सुनता है क्या कोइ जनाब मन ! ॥१
सोला वरसकी छोड़ मुझे मरगया खाविंद ।
कैसे निबाहूं हाय ये जोबन जनाब मन ! ॥ २
उठती है आग तनमें मेरे हाय हाय हाय ! ।
कैसा जुल्म ये होता है हम पर जनाब मन ! ॥ ३
जी चाहे नर करे विवाह चार पांच या कई ।
क्या नारियोंने है गुनाह किया जनाब मन ! ॥ ४
आज्ञाभी दी है वेद में करने नियोग की ! ।
होता न अमल इसपे कहो क्यों जनाब मन ! ॥ ५
रांडें न रहें दुनियां में करिये उपाय ये ।
सुनना मेरी पुकार ये अहले जनाब मन ! ६

दया- महाशयो ! सभासदो ! बड़ा अफसोस है कि, आप जैसे प्रतापी पुरुष भी वेद की मर्यादाको नहीं चला सकते!

नंदिनी- सुज्ञ महाशयो ! मुझे शोकसे कहना पड़ता है कि आप जैसे इन्साफ पसंद आदमी भी बेइन्साफी करनेको तैयार हो जावें तो हमारे जैसी अनाथ विधवायें

किससे पुकार करें! संसारमें अग्निको शांत करनेके लिये जलका ग्रहण किया जाता है, यदि जलमेंसे ही अग्नि भड़कने लग जावे तो फिर क्या उपाय ? (लंबा-सा सांस लेकर) हा देव ! अब तो स्वामीजी भी मर गये ! नहीं तो उन्हींके दरबारमें अपने इन्साफके लिये पुकार करती !

" एक नारिके मरत नर, दूजो करत विवाह ।
तरुण त्रिया विन पुरुषके, कैसे करे निवाह ॥ १ "

दया— दयावान् महाशयो ! गजबकी बात यह है कि, आप लोग अच्छी तरह जानते हुएभी कुछ ध्यान नहीं देते पुरुषोंसे आठ गुणा काम स्त्रियोंमें ज्यादा होता है इस लिये आप साहिबोंको कुछ विचारना चाहिये मेरे ख्यालमें आप लोग सिर्फ आर्य नामको धारण कर " स्वामीजी " के पैरों (शिष्य) बन जगह जगह आर्य धर्मके फैलानेकी फोकी तुनतुनी वजाते फिरते हो ! सो हमारी समझमें यदि ऐसा नहीं तो क्या हमारी यही हालत होती ? हरगिज़ नहीं ! " स्वामीजी " ने हमपर अपनी तरफसे उपकार करनेमें कुछ कसर नहीं रखी ! मगर आप लोगोंने कलयुग महाराजसे ऐसी प्रीति लगाई है कि जिसकी वजहसे रात दिन सिवा आँसू बहानेके और कुछ सूझताही नहीं ! साहिबो सुनो !

" जबसे पती अदमको सिधारा हजार हैफ़ ! ।
तबसे रही न कोइ तमन्ना हजार हैफ़ ॥ १

वह माहरू जुदा है तो जीभी उदास है ।
है रात चांदनी शबे यल्दा हजार हैफ़ ॥ २
मैले कुचैले कपड़े हैं चेहराभी जर्द है ।
अब संदली नहीं वुह रुपट्टा हजार हैफ़ ॥ ३
पट्टी नहीं जमीं न निकाली गई है मांग ।
कानोंमें अब नहीं कोई वाला हजार हैफ़ ॥ ४
सुनिये तबीब मेरे मरज़का नहीं कोई इलाज ।
मुझसे जुदा है मेरा मसीहा हजार हैफ़ ॥ ५
तारीक हो गया है मेरी नजरमें जहां ।
जबसे जुदा है रूफ मुजफ़्फा हजार हैफ़ । ६
सौदा हो जिसको जुल्फ परीशान यारका ।
क्यों कर वो हो इलाजसे अच्छा हजार हैफ़" ॥७

(इस प्रकार 'दया' और 'नंदिनी' का गाना और बोलना सुनकर सभा में बैठे हुए सब महाशयों के दिल पिघल उठे और एक दूसरे के कान में काना फूसी करने लगे कि- देखो ! क्या सुरीला आवाज है ! क्याही चांदसा मुखड़ा है ! क्या ही उछलता यौवन ! मगर अफसोस है कि हमारे आर्य धर्मके होते हुए भी ये इस प्रकार पतिके विना रुझलती नजर आती हैं ! इतने ही में 'नंदिनी' पं० सुन्दर सहाय जज से)

क्या जजसाहब आप ही हैं ?

जजसाहब- हां ! परमेश्वरकी कृपासे !

नंदिनी- अफसोस है कि परमेश्वरने आपको इतने वड़े रुतवे पर पहुचाया मगर इतना तो वतलाइए कि आप

(नंदिनीकी बात सुनकर 'सत्यार्थप्रकाश' हाथमें लिये खड़ी खड़ी सोचती हुई और कभी सभासदोंपर, कभी ब्रह्मानन्दपर, कभी दया और नंदिनीपर, कभी अपने बापपर और अपने दादेपर नजर डालती हुई मायाको देखकर फिर) बहन ! ऐसा क्या बड़ा भारी विचार करती हो लाओ सत्यार्थप्रकाश मुझे दो ! (मायाके हाथ से 'सत्यार्थप्रकाश' लेकर झटपट पृष्ठ ११५ निकालकर) " द्विजोंमें स्त्री और पुरुषका एकही वार विवाह होना "वेदादि शास्त्रों में लिखा है द्वितीयवार नहीं कुमार और कुमारी का ही विवाह होनेमें न्याय और विधवा स्त्रीके साथ कुमार पुरुष और कुमारी स्त्रीके साथ मृतस्त्री पुरुषके स्त्रयं विवाह होनेमें अन्याय अर्थात् अधर्म है" (पंडित मोहनपालसे) क्यों पंडितजी साहब ! ठीक है न !

पं० मोहनपाल– भला इसे कौन बे ठीक कह सकता है ? मैंने खुद ही इस मुताबिक कई नियोग और विवाह कराये हैं !

दया– अजी पंडितजी महाराज ! तो क्या यहां ही आकर आपकी अकल चक्कर खागई जो "स्वामीजी" के कथन को भूल गये ?

नंदिनी– (दयासे) बहन दया ! मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि 'माया' ने पंडितजी की मुठी गरम करादी है (जजसाहबसे) रायसाहब ! अब आपको मुन्सफी का Robe (चोगा) उतार कर पंडितजीसे पूछना चाहिये !

सभाके सब लोग- (जज्जसाहब और पंडित हरदत्त, शिवदत्त आदिकोंसे) भाईसाहब ! "दया" और "नंदिनी" का कहना बिलकुल ही ठीक है ! बेशक हम लोगोंने "स्वामीजी" के कथनको भुलाकर अन्याय किया है "स्वामीजी" के सिद्धान्तके मुताबिक "ब्रह्मानन्द" का विवाह कुमारी कन्याके साथ नहीं हो सकता ! "माया" के लिये किसी दूसरे कुंआरे आर्य नवयुवककोही ढूंढना चाहिये !

ब्रह्मानन्द-(माया तर्फ इशारा कर धीरेसे) देखना संभलना ! यह तो दुनियां ही उलट चली ! अपना दिया वचन याद रखना ! मुझे विधवा रांडके साथ विवाह करना बिलकुल मंजूर नहीं है !

दया- (ब्रह्मानंदसे) साहब ! मैं भी सुन रही हूं ! इसका नाम आर्य धर्म नहीं है ! "स्वामीजी" का यह कथन भी नहीं है इस लिये जरा सोच समझकर ही अपनी अक्लका बाइसीकल चलाना ! क्या कभी कानका मोतीभी नाकमें शोभता है ? इस लिये अपनी आँखे फाड़कर 'माया' पर मेस्मॅरिजम न कीजीये ! जरा रहमका जाम पीकर हमपर ध्यान दीजीयेगा ! (मायासे) बाईजी ! ईश्वरके वास्ते माफ कीजीयेगा ! आपके लिये कारे पुरुषोंका घाटा नहीं ! मगर हम सरीखी दीन दुखिया राँड विधवाओंके लिये "ब्रह्मानंदजी" जैसे रंडवोंका मिलना आज कलके जमानेमें बड़ा मुशकिल हो रहा है

कि—" जैसेके साथ वैसेहीका संबंध होना " सो तुम सामनेहीं देख लो ! करीबन बीस सालका नौजवान, लिखा पढ़ा है इस वास्ते मैं इसके लिये और यह मेरे लिये काबिलही है !

दया— बहन माया ! तुम क्यों निकम्मा " स्वामीजी " का नाम ले लेकर और अपने मन चाहा सो उनके कथनका इसारा बतला बतलाकर अपने आपको " स्वामीजी " के मंतव्य पर चलनेवाली सिद्ध करना चाहती हो ? अगर मानना है तो " स्वामीजी " का लिखा अक्षर अक्षर मानो वरना ढुंढियोंकी तरह (जैसे वह लोग भगवत मूर्तिपूजक श्वेतांबरी जैनोंके साथ विरोध करते हुए एकही शास्त्रमें लिखी हुई बातोंमेसे जो मनको अच्छी लगी वो मान ली और जो न अच्छी लगी व छोड़ दी) तुमभी करती हो ! सो बिलकुल भूल भरी बात है ! याद रखो ! ऐसा करनमें जैसे भगवत मूर्त्तिपूजक जैन श्वेतांबरीयोंसे जगह जगह बहेस मुबाहशः[१] (शास्त्रार्थ) में ढुंढियोंको नीचा देखना पड़ता है वैसेही कहीं आपको भी न देखना पड़े इस लिये बहन ! " स्वामीजी " का कथन सर्वथा ही तुमको मान्य करना चाहिये ! अगर तुम अभी इस प्रकार अपने बापसे या अन्य किसी संबंधिओंसे डरती हो तो हम कैसे यकीन करसके कि तुम " स्वामीजी " के

---

(१) देखो " ढुंढकमत पराजय "

कथनका प्रचार अपने सुसरालमें जाकर करोगी! क्या! इसी "ब्रह्मानंद" की बड़ी बहन "अंगिरा" जिसे अभी एक सालही विधवा हुएको हुआ है उसका नियोग किसीके साथ कराओगी? मुझे तो यकीन नहीं के उस घरमें तुम्हारा पंथ चले! हां इतना तो जरूर है कि जहां तुमने उनके घरमें 'सत्यार्थप्रकाश' खोला कि वहां ही तुम्हारा निरादर हुआ और 'सत्यार्थप्रकाश' के पत्रे उखाड़ उखाड़कर उनसे 'अंगिरा' और 'मालती' जैसी औरतें घरमें छोटे छोटे लड़के लड़कियोंको देकर पतंगे बनवा उड़ा खिलायेंगी! इस लिये तुम 'ब्रह्मानंद' से ऐसे ऐसे सवाल पूछो कि वो जवाब न दे सके! बस फिर इन बैठे हुए बड़े बड़े आर्य महाशयोंके समक्ष हम दोनोंमें से एक इसके साथ नियोग करलेवेंगी! तुम्हारे लिये कुंआरे पुरुषोंका क्या घाटा है? मुशकिलतो हम रांडो को है! देखो! तुमको अगर "स्वामीजी" के कथन का पास है तो तुम अपने लिये पचीस वर्षका वर तलाश करो! यह तो अभी बीसकाभी पूरा नहीं है तुम्हारे लिये "स्वामीजी" के कथनानुसार कुंआरा वर होना चाहिये ये तो रंडवा है! देखो! "स्वामीजी" का कथन है कि—"जैसे लड़के पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या "पढ़ ज्वान होके अपने सदृश कन्यासे विवाह करें वैसे "कन्या भी अखंड ब्रह्मचर्यसे पूर्ण विद्या पढ़ पूर्ण युवती "हो अपने तुल्य पूर्ण युवावस्थावाले पतिको प्राप्त होवे"

(संस्कार विधि पृष्ठ ८८)

बताओ तो "ब्रह्मानन्द" ने किस गुरु कुलमें या किस पाठ शालामें रहकर वेदाध्ययन और ब्रह्मचर्य पालन किया है? फर्ज करो कि कियाभी होतो तुम्हारे पास इसके (ब्रह्मानंदके) ब्रह्मचर्य पालने का और तुम्हारे ब्रह्मचर्य पालनेका ब्रह्मानंदके पास क्या सबूत है? फिर और भी लो-संस्कार विधि पृष्ठ ९२ में "स्वामीजी" कथन करते हैं कि "२०-२१-२२- और २४ वर्ष "की स्त्री और ४०-४२-४६ और ४८ वर्षका पुरुष हो "कर विवाह करे तो वह सर्वोत्तम है" अब कहो! यहां तो तुम्हारी उमर पंदरा (१५) वर्षकी, और ब्रह्मानन्दकी करीबन उन्नीस (१९) वर्षकी है! अब "स्वामीजी" के वचनों पर चलने वाली तुमको, और ये आर्यसमाज के अग्रेसर जो उपाधिओंकी बडी २ पूछें लगाकर सभा में बैठे हैं इनको क्या शरम नहीं आती? अपने गुरुके वचनसे जो करना सो उलटा ही उलटा करना और फिर "स्वामीजी" के कट्टर चेले कहलाना! क्या झूठ बोलने और लोगोंसे दगाबाजी करनेके वास्ते "स्वामी-जी" ने कहीं आज्ञा दी है? या ऐसा करनेसे पुण्य होता है? जरा सोचो तो सही "स्वामीजी" ने तीन प्रकार के विवाह लिखे हैं अधम, मध्यम और उत्तम! सो तुम्हारा 'ब्रह्मानंद' के साथ जो संबंध हो रहा है वो न उत्तम है, न मध्यम और नाहीं अधम!

नंदिनी- (दयासे) बहन! ठहर ठहर मुझे "स्वामीजी"

की एक बात और भी याद आगई ! पहले उसे 'माया' को सुना देने दो !

दया— अच्छा तूं भी सुनाले ! मगर यहां इसवक्त 'माया' को अपना सुनाना निकम्मा है, क्यों कि 'माया' के दिल में तो 'ब्रह्मानंद' बस गया है ! अब "स्वामीजी" के लेख पर तो क्या साक्षात् "स्वामीजी" भी इसवक्त आजावें तो भी यह मानने की नहीं है !

नंदिनी— यह मानो या न मानो मगर हमको "स्वामीजी" का कथन छिपाना ठीक नहीं है ! वरना इसवक्त इस भरी सभामें बैठे हुओंमेंसे किसी न किसीको यहांसे उठकर बाहर निकलेनकी देर है कि, कोई तो अखबारोंमें लंबे लंबे कालम् लिख भेजेगा और कोई ट्रेक्ट बनाकर बांटेगा ! और कोई जगह जगह लेक्चरोंमें सुनायेगा कि—पंडित हरदत्तकी लड़की 'माया' का विवाह शारदाचंद्रके लड़के 'ब्रह्मानन्द' के साथ बहुत अच्छी तरहसे हुआ ! (पंडित मोहनपालकी तर्फ हाथ करके) औरोंकी तो क्या बात ! हमने आर्य विधिसे विवाह कराया—इस बातको सुनाते हुए ये पंडितजी भी फूले नहीं समायेंगे ! इस लिये "स्वामीजी" का लेख इन पंडितजीसे ही प[illegible] वा[illegible]गलरूं (पं० मोहनपालसे) पंडितजी साहब !

म[illegible] ती[illegible]ल— हाँ बहन ! क्यों ?

नंदिनी— ये लीजीयेगा "सत्यार्थप्रकाश" और इसके पृष्ठ ११२ में (उंगलीसे बताकर) यहांसे पढ़कर जरा उं-

कैद्रिनी-अरी तो ले ! "स्वामीजी" ने लिखा है कि "गर्भवती स्त्रीसे एक वर्ष समागम न करने के समयमें पुरुष "वा स्त्रीसे न रहा जाय तो किसीसे नियोग करके उसके "लिये पुत्रोत्पत्ति करदे" अब सोच कि स्त्राके पेटमें एक गर्भ तो पतिका स्थापन किया हुआ है ही ! और उस वक्त भोग करनेकी इच्छा पैदा हो गई गर्भावस्थामें अपने पतिसे तो भोग करना ही नहीं ! क्यों कि "स्वामीजी" ने "स्त्रीसे न रहा जाय तो किसीसे" इस वाक्यसे निषेध किया है ! तो सिद्ध हो गया कि नियोगीसे भोग करे ! अच्छा अब फिर सोच कि, जब दूसरेसे भोग करेगी तो जो विचारा पेटमें आ बैठा है क्या उसे तकलीफ न होगी ? या उसको अंदर ही अंदर सिकुड़कर बैठ जानेके लिये कोई दूसरा स्थान दे दिया जावेगा ? खैर फिर सोच ! कि, कभी किसीको आज तक ऐसा हूआ भी है कि जिसके पेटमें चार पांच महीनेका गर्भ हो और फिर भोग करनेसे दूसरा गर्भ रह जावे ? फर्ज कर कि "स्वामीजी" के कथनानुसार किसी गर्भवतीने अन्य किसीसे नियोग किया और कदापि पेटमें रहे बिचारे कोमल ऊंधे शिर लटके हुए बालकके सिरमें नियोगी जबरदस्त पुरुषसे कोई आघात पहुंच जावे तो बिचारी दूसरा गर्भ धारण करती करती पहलेसेभी हाथ धो बैठेगी ! मैं अच्छी तरह जानती हूं और बहुतसी

दाईयोंसे भी सुना है कि गर्भवती स्त्रीस भोग कभी नहीं करना और शास्त्रकारभी ऐसा काम करनेवालेको दोषी बताते हैं! अच्छा फरज़ कर कि यहभी मान लिया जावे कि एक गर्भपर दूसरा (नियोगीसे) भी रह गया तो फिर यह बताकि जब पांच महीनेका गर्भ धारण करने वाली स्त्रीने नियोगी पुरुपसे भोग करके दूसरा गर्भ धारण किया तो पहला जो पांच महिनेका है वोतो और चार महीने गुजरने पर वह जन देवेगी, लेकिन जो पीछे नियोगीसे धारण किया है उसे अगले पांच महीने बाद जनेगी या एक साथ ही? (एक नौ महीनेका और एक चार महानेका) जनेंगी?

अच्छा! अब एक बात औरभी है कि जो "स्वामीजी" ने 'संस्कार विधि' के पृष्ट ४६ पंक्ति १९ में लिखा है कि–" इन दो मंत्रो को बोल के पति अपनी गर्भिणी पत्नी के गर्भाशय पर हाथ धर के यह मंत्र बोले" ले अब तुंही अपने मनमें अच्छी तरहसें विचार कर कि " गर्भिणी पत्नी के गर्भाशय पर हाथ धरके" यह जो काम है वह उस स्त्री के पति और नियोगीजी दोनों हीं करें या केवल पति ही करे? क्यों कि उसके अंदर तो दो वटेरे हैं एक नियोगीजीका और एक अपने पतिका! और " पुंसवन " संस्कार तो जरूर ही होना चाहिये! कहीं " स्वामीजी " ने यह बयान किया याद नहीं है कि नियोगी के गर्भका पुंसवन संस्कार नहीं होता है! बलकि " स्वामीजी " के न्याय से तो अवश्य ही होना

चाहिये, क्यों कि " स्वामीजी " का संस्कार विधि में फरमान है कि " गर्भ स्थिति के ज्ञान हुए समय "से दूसरे वा तीसरे महीने में पुंसवन संस्कार करना "चाहिये जिससे पुरुषत्व अर्थात् वीर्यका लाभ होवे" वस सिद्ध है कि विवाहित पतिके गर्भ को जैसे वीर्य के लाभ की जरुरत है वैसेही नियोगी पतिके गर्भ को भी वीर्य के लाभ की जरूरत है वरना वो विनावीर्य (नपुंसक) आगेको किस काम आयेगा ? हां ! वेशक इतनी वातका ख्याल तो अवश्यही यहां हो सकता है कि यदि गर्भ में लडका होवे तो उसको तो ' पुंसवन संस्कार ' से वीर्य-का लाभ वकौल "स्वामीजी" के होसकेगा मगर लडकी होवे तो उसके लिये क्या करना ? कोई ' स्त्रीसवन ' संस्कार वनालेना या उसकोभी वीर्यका लाभही होने देना ? अगर ऐसा हुआ तो कुदरत से उलटा क्यों नहीं ? इसका सोचना जरूरी मालुम होता है.

"स्वामीजी" के ख्याल में यह आयाही नहीं है वरना स्वा-मीजी चूकने वाले नथे ! जवकि गर्भस्थिति में भी हमारे (स्त्री वर्गके) लिये न रहाजावे तो नियोगी से हुकम देगये हैं तो क्या वे ऐसी बात में भूलते ? कभी भी नहीं ! मगर एक और भी टंटा वना रहता, अगर फरज करो "स्वामीजी" लडका लडकी के लिये जुदा जुदा संस्कार बनाजाते तो पेटमें लडका है या लडकी ? उसके इमतिहानके लिये धो बैठेगी ! मैं अच्छी विद्या उनको निकालने की

क्यों अब मालूम हुआ कि "स्वामीजी" के पूर्वोक्त लेख में कितनी गलतियां है ? "स्वामीजी" ने जो औरतों के लिये दश पति करने की आज्ञा दी है सो दश के वीश क्यों न आकर जोर लगावें फिरभी पेटमें एक गर्भ के होते हुए दूसरा गर्भ नहीं रह सकता !!! अरी ! और भी इस में एक सवाल पैदा होता है कि, जो नियोगी के संभोग से गर्भ रहा है वह नियोगी को देदेवे यह वात " स्वामीजी " के— "स्त्री पुरुष से न रहा जाय तो किसी से नियोग करके "उसके लिये पुत्रोत्पत्ति करदे" इसकथन से साफ जाहिर है. अब जरा सोच तो सही कि क्या कोई यह नियमही है कि नियोगी से भोग करनेपर जरूर ही गर्भ रह जावेगा ? अगर फर्ज कर कि रहभी गया तो वो जरूर पुत्र ही होगा ? जो लडकी हो पडी तो फिर ? फिर तो पतिका और नियोगी जी का आपस में जगडा हो जानेका अंदेशा है ! क्यों कि नियोगी को तो "स्वामीजी" ने "पुत्रोत्पत्ति करदे" यही लिखा है और नियोगीजी भी "स्वामीजी" की कलम के मुताबिक उससे पुत्रही मांगे गे ! पुत्री को कौन चाहता है ? मगर हां पुत्री की कदर उम्मेद है कि इस हालत में होजावेगी !

दया— (धीरेसे) बस ! चुपकर चुपकर ! मुजे मालुम हो गया अब आगे के लिये मैं सोच समज कर ही बोला करुंगी. मुजे क्या मालूम कि "स्वामीजी" भी भूला करते

थे ! खैर और भी कोई ऐसी गलतियें अपने बनाये हुए "सत्यार्थ प्रकाश" आदि ग्रंथो में कहीं कर गये हों तो वे भी बता छोड नाकि मुजे आगे के लिये ख्याल रहे !

नंदिनी– इसवक्त मौका ठीक नहीं है कि मैं तुजे "स्वामीजी" ने जहां जहां भुलें खाई हैं और विना विचारे अंड बंड लिख मारा है कह सुनाऊं ! क्यों कि यहां इस सभा में कितने एक अधकच्चे समाजी बेठे हुए हैं अगर सुनेगें तो झट इस पंथको छोड देंगे फिर हमारा मनोर्थ भी पूरा न होगा ! और फिर ऐसे ऐसे-स्वयंवरभी अपनेको देखने न मिलेंगे ! इस लिये फिर कभी निश्चिन्त होकर एकांतमें कहुंगी.

इतनी वात "नंदिनी" और "दया" की परस्पर होनेके वाद "नंदिनी" अपने प्रस्तुत विषयको लेती हुई "माया"से) वहन माया ! सुनो पंडित मोहनपालजी "स्वामीजी"के कथनको सुनाते हैं सुनकर विचारनाकि, मैं "स्वामीजी" के कथन को कितनाक मानती हुं और उसपर कितनाक अमल करती हूं ?

पंडित मोहनपाल–("सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ट ११२ को देख मन ही मनमें) अरे ! यह "स्वामीजी"ने क्या लिख दिया है? मेरी तो समझमें हीं नहीं आता ? अस्तु ! अब पढकर सुनाये विना तो छुटकारा नहीं ! (प्रकाशमें) लो वहन ! अब सुनो !

"जिस स्त्री वा पुरुष का पाणी ग्रहण मात्र संस्कार
"हुआ हो और संयोग अर्थात् अक्षत योनी स्त्री आर
"अक्षत वीर्य पुरुष हो उनका अन्य स्त्री वा पुरुष के साथ
"पुनर्विवाह न होना चाहिये किंतु ब्राह्मण क्षत्रीय और
"वैश्य वर्णों में क्षतयोनी स्त्री क्षत वीर्य पुरुषका पुन र्विवाह
"न होना चाहिये" (सुनाकर नंदिनी से) वीवीजी !
मुजेही पहले इसका मतलव समजमें नहीं आया तो
ऊंचे से क्या सुनाऊ ? मैं सच कहता हूं कि
"स्वामीजी" ने वाजी वाजी जगह तो ऐसी गलती
खाई है कि, कुछ भी मत पूछो ! आप तो लिखकर मर
गये मगर आफत हमारी जान को ! जहां कहीं ऐसा
ऐसा अपना मन घडत ढकोसला घसीट मारा है वहां
वहां हम लोगों को हरएक मजहव (मत) वालों से
नीचा देखना पडता है और लजाना पडता है ! मगर
तुमको इस वक्त यह विषय चर्चना योग्य नहीं था !
खैर ! जरा सन् १८८७ का "सत्यार्थ प्रकाश"
तो लाओ !

नंदिनी– मैं क्या "सत्यार्थ प्रकाश" हरवक्त वगलमें दवाये
फिरती हुं ? यह सन् १८८४ वाला भीतो "माया"
से लिया है, इसके पास १८८७ का भी हो तो पूछ
देखो !

मोहनपाल–(मायासे) वाईजी ! सन् १८८७ का "सत्यार्थ
प्रकाश" यदि यहां तुम्हारे पास हो तो दीजीये !

नंदिनी–(ताली बजाकर और हँसकर मायासे) बीबीजी साहब ! आप भी क्यों जानबूझ कर चुप किये खडी हो ? हमारा कुछ जोर थोडा ही है होगा तो वही जो तुम्हारे दिल में बस रहा है मगर सच कहो कि यहां " स्वामीजी " के कथन से विपरीत कार्रवाई हो रही है या नहीं ?

माया–(पंडित मोहनपालसे) पंडितजी साहब ! बीबी नंदिनी का कहना तो ठीकही है, भले हम करे चाहे किसी तरह ! " स्वामीजी " के कथनमें यह तो साफ है कि " ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य वर्णोंमें क्षत योनी स्त्री और " क्षत वीर्य पुरुपका पुनर्विवाह न होना चाहिये " तो यहां अब आप सोचियेगा कि मैं तो क्षत योनी नहीं हु मगर ब्रह्मानंद तो क्षत वीर्य है हा इसमें जराभी शक नहीं ! क्यों कि उसके तो तीन सालका एक लडका है यह सबको मालूम ही है ! (नंदिनी और दयासे बडी नरमाईके साथ) बहनजी ! इस वक्त तुम किसी तरह मेरा इसके साथ विवाह हो जाने दो बादमें मैं तुम्हारे लिए कुछ इंतजाम जरूर ही करूंगी !

नंदिनी–बाईजी साहब ! फिर यूं सीधे रस्ते पर आओ ना ! यूं क्यों बार बार बांग देती हो कि मैं " स्वामीजी " के कथनपर चलती हूं और यूं कहा है ! त्यूं कहा है ! मैं यूं करती हूं. मैं " स्वामीजी " के लिखे मुताबिक यूं करूंगी, त्यूं करूंगी ! बेशक तुमने इतना तो जरूर

" स्वामीजी " के कहे मुताबिक किया जो कि यह स्वयंवर इन आर्य महाशयों को इकट्ठे करके इन के सामने मन माने पति को पसंद कर उसकी परीक्षा ले विवाहकी तैयारी की है !

दया–(बात काटकर बीचमें) जीजी ! " स्वामीजी " ने तो लिखा है कि–" जिस दिन ऋतु दान देना योग्य "समझें उसी दिन " संस्कार विधि " पुस्तकस्थ विधि के "अनुसार सब कर्म करके मध्य रात्रि वा दश बजे अति "प्रसन्नता से सबके सामने पाणी ग्रहण पूर्वक विवाहकी "विधि को पूरा करके एकांत सेवन करें पुरुष वीर्य स्थापन "और स्त्री वीर्याकर्षण की जो विधि है उसीके अनुसार "दोनों करें " * सो बहन ! तुम "माया" से पुछो तो सही कि इन को यह विधि विवाहवाले दिन ही करनी होगी ! सो क्या इन्हों ने " स्वामीजी " के कथनानुसार वीर्याकर्षण आदिकी विधि भी सीख ली है याकि नहीं? और " स्वामीजी "का कथन है कि " जिस दिन ऋतु "दान देना योग्य समझें उसी दिन " संस्कार विधि " "पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सब कर्म करके मध्यरात्री "वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके सामने पाणीग्रहण "पूर्वक विवाहकी विधिको पूरा करके एकांत सेवन करे" सो ऋतुदान देना " ब्रह्मानन्द "ने किस दिन स्वीकार किया है? और विवाहके अनंतर 'माया' के बापके घरपर

---

* सत्यार्थ प्र० पृष्ठ ९३.

ही एकांत सेवन करना मंजूर किया है या अपने घर ला कर ! मगर नहीं " स्वामीजी "ने तो यही लिखा है कि " विवाहकी विधिको पूरा करके एकांत सेवन करे " इस से सिद्ध होता है कि लड़कीके पिताके घर पर ही रातके दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके सामने पाणीग्रहण पूर्वक एकांत सेवन करें !

ब्रह्मानंद- (पंडित मोहनपालसे) पंडितजी साहब ! यह क्या इन्होंने आपसमें घसरपसर लगा रखी है?

पं० मोहनपाल- क्या कहें ? इन्होंने तो " स्वामीजी " का शरण लेकर हम तुम और यहां बैठे हुए कुल आर्य सभासदोंको ही शरामिन्दा करना शुरु किया है ! अगर इनके कहे मूजिब " स्वामीजी " के लेखको माना जावे तो तुमको इस विवाहसे हाथ ही धोने पड़ते हैं ! इस लड़की (माया) से विवाह करनेका तुम्हारा हक्क बिलकुल नहीं सिद्ध हो सकता ! क्योंकि " स्वामीजी " का साफ लिखना है कि, द्विजो में क्षतवीर्य पुरुष या क्षतयोनी स्त्री का पुनर्विवाह नहीं हो सकता और आप के क्षतवीर्य होने में तो शकही नहीं ! " स्वामीजी " के कथनानुसार विधि विधान करना आपको भी मंजूर है और मायाको भी मंजूर है परंतु मुझे जरा कहने में संकोच होता है कि, मैं यहां पर किन वेद मंत्रोंसे विधि विधान कराऊं ? क्यों कि विवाह और नियोग इन दोनों की विधि तो

" स्वामीजी " ने फरमाई है, परंतु विवाह और नियोग से विलक्षण जो इसवक्त होता नजर आता है इस तीसरे प्रकार के संस्कारका न तो " स्वामीजी " ने कहीं नामही लिखा और नाहीं कहीं उसकी विधि ही बत-लाई ! यदि अन्यका अन्यही विधि विधान किया जावे तो हम तुम सबको प्रतिज्ञा भ्रष्ट होना पड़ता है ! इतनाही नहीं, किंतु " स्वामीजी " के लेख को भी कलंक लगाने वालों में हम गिने जाते हैं ! क्योंकि " स्वामीजी " ने कुमार कुमारी का विवाह और क्षतयो-नी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुषका नियोग यह दोही बताये हैं, परंतु क्षतवीर्य पुरुष और अक्षतयोनी स्त्रीका तो मेलही नहीं लिखा ! आपही स्वयं विचार करलेवें ! क्यों कि आप भी तो दयानंदी कहलाते हैं ! और "स्वामीजी" के लेख को स्वीकारते हैं ! हां ! अक्षतवीर्य पुरुष और अक्षतयोनी स्त्रीका तो पुनर्विवाह हो सकता है ! बड़े आश्चर्य की बात है कि आजतक किसी भी आर्यसमाजी ने इस बातका विचार नहीं किया ! कितने हीं आर्यों के घरोंमें वैदिक मर्यादा से विरुद्ध इसी प्रकार से विवाह हो चुके हैं; कितनेक तो मैंने अपने हाथसेही कराये हैं आप दूर मत जाइये इस सभामें बैठे हुए कितनेही महाशय ऐसे हैं कि जिनका क्षतवीर्य होने पर भी कुमारी कन्या के साथ विवाह हुआ है !

(पंडित सुन्दर सहाय जज साहबकी तर्फ इशारा कर के) आप इनसेही पूछ लीजीये !

परंतु क्या करें आजीविका के लिये नाम लिखा रखा है ! काम चलता है ! बाकी " स्वामीजी " के लेख पर इनको कितना अभिमान है वह में सब समझती हुं ! पंडितजीकी बहन इसवक्त भरयौवनमें है, और विधवा है, जैसी हम हैं वैसी ही वह है ! क्या उसका दिल हमारी तरह पतिकी इच्छा नहीं करता होगा ? पंडितजीने उसको कभी कहा ही नहीं कि बहन ! यदि तुझसे न रहा जावे तो वेदकी आज्ञा है " स्वामीजी " का हुकम है तुम बेशक अपने मन पसंद के किसी पुरुष से नियोग करलो ! क्रिया वगैरह सब काम में खुद करादुंगा ! जब कि में औरोंके घरोंमे नियोगादि का काम कराता हुं तो तुम्हारे लिये करानेमें मुझे क्या जोर लगता है ? परंतु मनमें पंडित जी साहब यह अच्छी तरह समझते हैं कि हम उत्तम खानदानके कहेजाते हैं ! यह काम तो गिरे हुए मनुष्योंका है ! इस लिए बहिन ! चुपचाप तूंने जो कुछ करना हो सो करेजा और यहां जो कुछ होता है सो देखेजा !

दया-(पंडितजीसे) क्यों साहब ! यह क्या कहती है !
(पंडितजी चुप. न हां न हूं)

ब्रह्मानन्द- (पंडितजीके बोलने से पहलेही) चलिये पंडितजी ! इधर ख्याल करिये ! ये तो यहां पर दिल्लगी करने आई हैं, इनको तो जरा भी हया (लज्जा) नहीं ! क्या कभी " स्वामीजी " महाराज ऐसा लिख सकते

है ! जैसा कि, ये कहती हैं (नंदिनी और दया से डपट कर) जाओ चली जाओ ! यहां गड़बड मत करो ! हमारे काम में हरजा होता है ! (पं मोहनपालसे) हां पंडितजी साहब ! आपके पहले कथनमें जो " अक्षत-योनी स्त्री " " अक्षतवीर्य पुरुष " का नाम आया है उस से क्या मुराद है ? मेरी समझमें नहीं आया !

दया–(नंदिनी से) बहन ! ख्याल रखना अपनेही मतलब का प्रश्न ' ब्रह्मानन्द ' ने पंडितजीसे पूछा है, देखें क्या उत्तर देते हैं ? कहीं गालमाल न कर जावें !

मोहनपाल– (ब्रह्मानन्द से) वाह साहब ! आप इल्म-दार होकर इतना भी नहीं समझ सकते ? जिस स्त्री पुरुष का संयोग (हम बिस्तर) हो गया, हो उसको क्षतयोनी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुष कहते हैं ! क्षतयोनी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुषका विवाह नहीं होता किन्तु नियोग होता है !

और " अक्षतयोनी स्त्री " और अक्षतवीर्य पुरुष " का पुनर्विवाह हो सकता है इसी वास्ते तो मैंने आप को कहा कि " स्वामीजी " के लेखानुसार इस कुंआरी कन्या (माया) से आपको विवाह करना योग्य नहीं है ! और अगर जबरदस्ती करते हैं तो " स्वामीजी " के लेखका उल्लंघन होता है ! जिस से अधर्म प्राप्त होता है ! (इस बातको सुनकर विचार में पडे हुए ' ब्रह्मानन्द ' को देखकर)

सकती है और वेदीमें की स्त्री मरजावे तो अक्षत वीर्य पुरुष भी सकता है परंतु इस में भी विचार करना पडता है कि जब " स्वामीजी " महाराज ने अक्षतयोनी स्त्री और अक्षतवीर्य पुरुष फरमाये हैं तो वह ठीक " स्वामीजी "के लेखानुसार अक्षतयोनि या अक्षतवीर्य है इस बातका निर्णय किस तरह हो सकता है ? क्योंकि विवाह होने से प्रथम की अवस्था में वो साफ ही रहे हों ऐसा कोई निश्चय नहीं हो सकता ! इस लिये इस बात को यहां अधिक न लंबाकर इतना ही कहना ठीक हो सकता है कि कन्या या कुमार के ' अक्षतयोनी ' या 'अक्षत वीर्य' के होनेका निश्चय किये बाद ही विवाह किया जावे तो वेदानुकूल "स्वामीजी"के लेख को आदर देने वाले हम तुम आर्य सच्चे आर्य कहे जा सकते हैं वरना नामधारी आर्य मात्र ही समझना चाहीए ! (मायाकी तर्फ ख्याल करके) क्यों बहिन ! मैंने जो कुछ कहा ठीक है या कि नहीं ?

माया–बेशक ! आर्य धर्म पालने वाले उत्साही प्राणियों को तो ऐसाही करना योग्य है !

दया–(जरा हँसकर माया से) तो बहन ! तूं ठीक 'अक्षतयोनी है इस बातकी परीक्षा दे सकती है ?

माया– (मनमें शरमिंदी होकर) क्या तेरी अकल ठिकाने नहीं है ? ऐसे सुशिक्षित (इल्मदार) महाशयों की सभा में विना विचारे बोलते तुझे शरम नहीं आती ?

नंदिनी–बहन इस में शरम की क्या वात है ? यदि शरमकी बात होती तो अपने परमब्रह्मचारी "स्वामीजी" महाराज ही अपने पुस्तक में ऐसा क्यों लिखते ? इस वास्ते शरमका नाम लेकर "स्वामाजी"के बचनों का अनादर करना ठीक नहीं है ! जब कि तूं ने "स्वामीजी" के कथनानुसार मन पसंद पति "स्वामीजी"के वर्णन किये– " परस्पर फोटू दिखाना " " जीवन वृतांत कहना " "गुह्य बातोंको लिखकर पूछना" वगैरह वगैरह स्वीकार कर लिया है तो अब अपनी इस बात के जाहिर करने में तुझे क्यों शरम आती है ? अगर मुख से कहना ठाक नहीं समझती हो तो कागज पर लिख दे ! परंतु "स्वामीजी"के कथन का अनादर करना उचित नहीं है आगे तेरी मरजी !

ब्रह्मानन्द–पंडितजी साहब ! यह क्या बनता है ? तुमतो हमारा हक्क खोने लगे थे परंतु इन दया और नंदिनीने तो हमारा ही हक्क साबत करना शुरू किया है (दया और नंदिनीकी तर्फ इशारा करके) वाह ! तुमने खूब " स्वामीजी " के शास्त्रोंका अध्ययन किया है जितनी बाते तुमको याद और ख्याल में हैं पंडितजी विचारोंके तो स्वप्नमें भी इतनी नहीं होंगी ! (पंडितजीसे) अच्छा पंडितजी साहब ! इस टंटेको छोडो इसका तो अंतही आना मुश्किल है अब जो अपना कर्तव्य है सो करो !

हरदत्त– (इस कार्रवाईको देख कर और सुनकर "माया" का पिता ' हरदत्त ' अपने अंदरही अंदर बड़ा क्रोधित हुआ ! और मनही मनमें धिक्कार है इस (आर्य कहना तो ठीक नहीं) अनार्य धर्म पर ! और इसके चलाने वाले पर ! और लख लानत है इन बैठे हुए बड़े बड़े महाशय नाम धारियों पर ! इससे तो बेहतर था कि इस हरामजादी " माया " को किसी भंडेलाके हाथ दे दिया जाता; मगर इतनी बेशरमी तो भांडोंमें भी नहीं होती ! (शारदाचंद्रसे) भाई साहब ! मेरेसे तो यहां अब बैठे बैठे यह कार्रवाई नहीं देखी जाती ! अफसोस कि आपभी बुड्ढे होकर अपने लड़केको इस कलयुगा नंदी पंथसे न हटाकर बैठे बैठे हंसते हो ! शरम ! शरम ! ! शरम ! ! ! बस अब जलदीसे इस मामलेको यहां तै करदो वरना अब मेरे पैरसे खास विलायतका बना फुलबूट उतरता है और अभी इन पंडितजी, दया, नंदिनी, माया और साथही ब्रह्मानंद और सभासदोंके सिरपर फूलोंकी वर्षा करता है ! मैंने आपको जता दिया है लो अब इनको बोलनेसे जलदी बंद करदो वरना मैं अकेलाही (बूट उतार कर) सबको पान बीड़ी देकर विदा करता हूं !

शारदाचंद्र– (हरदत्तका हाथ पकड़कर खड़े हुएको बैठा कर) हैं ! हैं ! एक दम ऐसा साहस मत करो ! आप मुझे कहते हैं कि " ब्रह्मानन्द " को इस कलयुगा नंदी पंथसे क्यों नहीं हटाते? सो भाई साहब! पहले जरा आप

अपनी लडकी की तर्फ ख्याल कीजीये ! पीछे मुझे समझ हुए ! आपके पिता (चाचा) भाई वगैरहको आप क्यों नहीं समझाते ? अच्छा ! अब सबर करो ! जो होना था सो हो लिया ! अब आप चुप करके " माया " को घर ले जाओ ! और मैं इन लोगोंको समझाकर रवाना करता हूं ! (जज साहब और युगलकिशोरको पास बुला कर) अब आप लोग इस वक्त रईसी इज्जत को लेकर चले जाईयेगा वरना यहां अभी रंग विरंगी होली खिल जायेगी ! (अपने बेटे ब्रह्मानंदसे) अब ! इधर देख ! (हाथ लंबा करके) घरको चला जा !

ब्रह्मानंद– (क्यों ? बस क्या इमतिहान होलिया ? मैंने तो अभी कई एक बातोंकी परिक्षा करनी है ! आप अभीसेही कहते है कि घर चला जा ! मैं अपने दिलमें यही समझ रहा हूं कि आजही विवाह हो जाय तो " स्वामीजी " के कथनानुसार सबके सामने से इसको एकांतमें ले जाऊं और " स्वामीजी " का हुकम बजाऊं ! कोई ऋतुदान देनेके लिये मूहूर्त देखनातो लिखाही नहीं है अगर लिखा है तो बताओ ?

(मायासे) क्यों ? तुमको तो तसल्ली होगई मगर तुम्हारी तर्फसे मुझे बिलकुलभी तसल्ली नहीं हुई ! तुम आर्य धर्मसे बिलकुल अनभिज्ञ और कच्ची हो ! तुमको " स्वामीजी " के कथनका बिलकुल पास नहीं है ! मगर खैर तुमने मुझे इतने आर्यसभासदोंके सामने

मंजूर किया है इस लिये मैं भी आगे कुछ नहीं कहता और पूछता ।

माया- (धीरेसे वसवस ! अब आप कुछ भी मत बोलो देखो जरा मेरे बापकी तर्फ ! अगर कुछ और कहा सुना गया तो यहां पर कुछ और का और ही न बन जाय ! जो होगया सो ठीक है आप के साथ विवाह होने पर मेरी सबही कचास निकल जायगी अब तो आप कुछ मत बोलिये चुप करके सभा बरखास्त करने की तदबीर सोचिये । मुझे अपने बापको सकल देखकर बहुत डर लग रहा है और दिल टुकड़े टुकडे होता जाता है ! देखो मेरा बदन कैसे कांप रहा है इस वक्त मेरा दिल बिलकुल काबूमें नहीं है मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि यह आपके साथ आखरी मेला है क्यों कि घर जाने पर मेरे साथ मेरा बाप न जाने क्या करेगा ? यह तो मुझे पका यकीन है कि आज घरमें जो आर्य धर्मके ग्रंथ हैं वो तो राख हुए बगैर बचते नजर नहीं आते !

(बहुतही उदास होकर अपने मनहीं मनमें) हायरे ! मुझे क्या होगया ? यह मैंने क्या किया ? अब मैं अपनी जान कैसे बचाऊंगी ? अरे रे ! धूल पड़ो ऐसे आर्यधर्म पर ! हायरी मां अब मैं क्या करूं ? अगर मेरी जान बचजावे तो धूलगेरूं " स्वामीजी " के कथन पर और ऐसे बेशरमी भरे ग्रंथों पर ! हाय हाय ! आजकी कार्रवाईको शहरकी औरतें सुनकर क्या कहेंगी ? मैं उन्हें

क्या मुंह दिखाऊंगी ? हायरे ! न जाने मेरी अक्ल पर क्या परदा पडगया ? हे ईश्वर ! अवतो मेरी लाज तेरे ही हाथ है ! (ऐसे विचार करती हुई रोने लगी)

या और नंदिनी– (हैं ! हैं ! वाईजी ! यह क्या हुआ ? क्यों रोती हो ? (हाथसे पकड़ कर धीरज देती हुई) अजी तुम ऐसी समझदार होकर यह क्या करने लगी ? क्या कोई हमारी वात चीतसे दिल दुखा ? या " ब्रह्मा-नंद " ने कुछ ऊंचा नीचा कहा ? याकि " मुझे उत्तर नहीं आया " इस वातका अंदर दुःख पैदा हुआ ? कहो तो सही वात क्या है ?

० हरदत्त– (दया और नंदिनीको ऊंचे आवाजसे) अरे ! तुम हट जाओ इसके पाससे ! और रहने दो समझा-नेका ! मेरी लड़की है मैं आपही समझा लूंगा ! (मायासे लाल आंखे करके) एं ! ये कैसी ऊं ऊं और चूं चूं लगाई है ? जरा ठहर जा ! अभी घर चलके तेरी चतु-राई वतलाउंगा ! जिसने तेरेको पढ़ाई है उसके भी धुर्रे उड़ाऊंगा ! क्या करलेगा मेरा भाई और चाचा.

जो विचारी पूर्व किये पाप कर्मसे पतिके मर जानेपर दुःखी दीन मीनकी तरह अधमरी हो तड़फती हैं उन ऐसी अवलाओंको दुखमें धीरज देनेके वदले कलयुगा नंदी ऐसा उपदेश देते फिरते हैं कि जिनके वाक्योंको सुन सुन कर वाज वाज पतिव्रता सतियोंके (जिन्होंने अपने पतिके अलावा जगतभरके पुरुषोंको पिता, पुत्र

और भाईके सदृश समझा है) हृदय टुकडे हो जाते हैं
इन "दया" और "नंदिनी" जैसीयोंने तो ब्रह्मचर्यको तो एक पाप समझ रखा है ये तो दयानंद सरस्वतीके कथनका सहारा ले, दरबदर खराब होती फिरती हैं ! और बिचारे अन्य भोले जीवोंको भी नरकका रास्ता बतला दुःख जालमें डाल हाल बेहाल करनेकाही पेशा पकड़ रखा है !

क्या कोई है इन सभासदोंमें बैठा हुआ जिसने अपनी मां, बेटी, बहेन, बुआ, मासी, चाची, ताई वगैरह किसीकोभी दूसरा पति करलेनेकी इजाजत दी हो ? या स्वयं जाकर उसके लिये कोई दयानंदी पुरुष ढुंढ लाया हो ? या अपनी औरतको यह इजाजत दी हो कि—जा दयानंदके कथनानुसार दूसरा खसम (नियोग) करके पुत्रोत्पत्ति करले ! और आजतक किसी दयानंदिनीने ऐसा किया भी कि ? जिसने दश खसम किये ! या दश लड़के पैदा किये ? और पति और नियोगी दोनोंने मिलकर उन लड़कोंके हिस्से किये ! याने बांट बांट कर लिये ?

(हरदत्तको इस तौर पर बोलते हुए देखकर सभासद तो खिसकने लगे एक के बाद दूसरा दूसरेके बाद तीसरा बस उस जगह (स्वयंवरमें) गिनतीके ही आठ दश जने रह गये ! या मूं लपेटकर रोती हुई " माया " !)

शारदाचंद्र– (पं० हरदत्तसे हसकर) भाई साहब ! अब शांति करो ! जो होना था सो होगया ! अब आगेके लिये सोचो क्या करना चाहिये ? यहतो तुम जानते ही हो कि, हमारे घरमें आर्यधर्म किस खेतकी मूलीका नाम है सो क्या छोटे क्या मोटे कोई भी नहीं जानते ! हां इस " ब्रह्मानंद " को जरा बाहर रहनेसे कुछ कुछ हवालगी है सो सिर्फ जबतक मैं कहता नहीं हूं वहां तक ही ! वरना कहोतो अभी ही हटा दूं !

(दूरसेही खड़े खड़े, रोती हुई " माया " को पुचकार कर) बेटा ! चुपकरो ! मतरोओ ! उठो और मत डरो ! मैंने समझा दिया है तुम्हारे पिताजीको ! मजाल है कि वो तुम्हें कुछ कहें ! उठो उठो ! बस ! चुपकर जाओ !

(अपने बेटेसे) अरे " ब्रह्मानन्द " !

ब्रह्मानन्द– जी हां !

शारदाचंद्र– बतला तो अब तेरी क्या मनशा है ?

ब्रह्मानन्द– जो आपकी मनशा सोही मेरी मनशा है !

पंडित 'हरदत्तजी' की क्या मनशा है ?

पं० हरदत्त– (ब्रह्मानन्दसे) भाई ! मेरीमनशा क्या पूछते हो ? तुम्हारे " स्वामी दयानन्द "के उपदेशको सुनकर मेरा दिल तो जल भुन कर खाक हो गया है ! क्या करुं ? आपके पिताजीसे जबान कर चुका हुं और

अब बात भी बाहर निकल गई है इस लिये लाचार हं वरना इस "माया" को ऐसे माया जाल में फँसाता जो ये भ सारी उमर "बाबा दयानन्द" को ही रोती पीटती रहती औरतो कुछ नहीं मगर मुझे इस बातका बड़ा ही ख्या है कि मैंतो इसे आपको दे चुका लेकिन कहीं ये आप यहां जाकर, आपकी इज्जत में बट्टा न लगा बैठे !

शारदाचन्द्र– अजी नहीं नहीं ! आप क्या बात करते हो ? आखर तो पढ़ी लिखी और समझदार है ! बस अब आप इसे ज्यादह कुछ मत कहियेगा !

पं हरदत्त– हां अगर ये इस ऊत पंथ से बाज आजावे तो मुझे कहने की कोइ जरुरत नहीं ! (मायासे डांट कर) ले अब चुप होती है या कि अच्छी तरहसे चुप कराऊं ?

शारदाचन्द्र– लीजिये साहब अब जाने दीजिये ! अब आप ज्यादह मत डपटिये और घर ले जाइये ! अब आपने व्याह (साहे) का दिन निकल वा भेजना ताकि हम भी अपना इन्तिजाम करें ?

पं० हरदत्त–अच्छा साहिब ! मैं कलरोज आपको पता दूंगा अब मैं जाताहूं मगर यहां जो आज कार्रवाई हुई है उसे आपने किसीके सामने प्रगट मत करना ! वरना इसमें उलटी हमारी तुम्हारी ही बदनामी और नमोसी है ! अच्छा लीजीये अब मुझे इजाजत है ? नमस्ते ! जाता हुं !

शारदाचन्द्र–वाह साहव वाह ! जिनके सिरपर अभी जूत लगानेको तैयार हुए थे उन्ही की दुम पकडे हुए अभी-तक चलते हो ? देखना दुलत्तेसे वचना ! क्या नहीं मालूम के यह जितने झगड़े नजर आते हैं वे सव इस नई नमस्ते के ही हैं ! मेरी तो सवसे प्रणाम करनेकी आदत है सो लीजिये साहव–प्रणाम ! मैं भी जाता हूं.

पं० हरदत्त– (जव सव लोग चले गये तव ' शारदाचंद्र ' से) देखिये साहिव ! मैं तो आजसे इस आर्य पंथको मानना तो किनारे रहा परंतु नाम तक भी न लूंगा ! अफसोस ! इसका नाम धर्म है ? भाई मुझे क्या मालूम कि इस मतमें ऐसी पोलंपोल चलती है ! न मालूम (पास खडे हुए ' ब्रह्मानंद ' की तर्फ हाथ करके) इन्हों ने क्या समझकर यह हठ पकडा था कि मैं आर्य रीति से (स्वामीजीके लिखे मुताविक) सव काम करूंगा ? क्यों ? अवी भी यही विचार है ? कुछ कसर हो तो पूरी करलो ! वडे शरमकी वात है कि तुम पढ़े लिखे दाना होकर ऐसा काम करनेको तैयार हुए ! कुछ तो अपनी इज्जतका ख्याल किया होता ! (शारदाचन्द्रसे) खैर जो होना था सो हुआ अव मैं घर जाकर शीघ्रही किसी पंडितको बुलाकर विवाहका दिन नियत करके आपको खवर दूंगा, विवाह सव उसी रीतिसे होगा जैसे अपने सवके होता आता है, अगर भाइ वगैरह मेरे सामिल न होंगे तो मत हो ! लेकिन एक वात है

कि आप जानते हैं मेरे लडका नहीं है बस जो कुछ समझो, यही दो लडकियां हैं, इस लिये मेरा विचार है कि इनका विवाह खूब धूम धामसे करना. आपतो "ब्रह्मानंद" का यह दूसरा विवाह समझ कर अगर यूंहीं साधारण फेरे फिरा लेनेका विचार रखते हो सो ठीक नहीं! इस समय मेरे कहने से आपको जरुर ही धूम धाम करनी पडेगी, और बरातमें नाच वगैरह के लिये एक दो तायफे साथ लानेही पड़ेंगे! बस मैं अब अपनी मरजी के मुताबिक विवाह करुंगा, मेरे घरमें सबके विवाह में ऐसा होता आया है, अगर ये अब समाजी बन नई रोशनी के चांदनेमें चलने लगे तो क्या हुआ? बस देख लिया इनका समाजीपना! आपसे मैं हाथ जोडकर प्रार्थना करता हूं कि आप मेरी यह बात अवश्य ही मंजूर करें.

शारदाचंद्र— भाई साहब! (हाथ पकडकर) आप यह क्या करते हैं? मुझे आप जैसे कहें वैसे करने को तैयार हूं, मगर बरातमें नाच (तायफे) लानेके लिये मैं आपसे विरुद्ध हुं, क्यों कि मैं इसमें नुकसानके सिवाय कुछ फायदा नहीं समझता! और मैं इस बातका पुरा विरोधी हूं, यह तो आपकी बात तीन काल भी नहीं मानुंगा! हां आप कहें तो लखनऊ के भांड तो जरूर बुलवालूं (वह भी आपको खुश रखनेके लिये) मगर रंडियोंको बरातमें लानेके लिये आप न बोलें!

पं० हरदत्त– अच्छा तो यूंही सही ! आप जिसमें खुशहों वह मैं मानने को तैयार हुं, मगर बरात खूब धूमधामसे आनी चाहिये !

शारदाचंद्र– आपके सगे संबंधी आर्य समाजी इसबातमें आपसे विरोध करेंगे तो ?

पं० हरदत्त– अजी आप भी भोली बात करते हैं ! किसी की मजाल है ? अगर करेंगे तो अपने घर बैठो ! मुझे कुछ परवाह नहीं !

शारदाचंद्र– अच्छा तो ठीक !

(इतना कहकर अपने अपने घरको गये. " हरदत्त " ने भी विवाह का दिन निकलवाकर " शारदाचंद्र" के घर भेज दिया. दोनो घरों में विवाहकी तयारियां होने लगी. "शारदाचंद्र" ने अपने बडे लडकोंकी सलाह लेकर लखनऊ से बढिया भांड बुलवाये ! खूब धूमधाम से संवत १९४४ वैसाख वदि छठ के दिन बरात " पं० हरदत्त" के घर पर पहुंची.

"माया" के दिलसे समाजी ख्याल उसी दिन से ऐसे निकल गयेथे जैसे किसी के शिर भुत आता हो और वह उसे छोडकर भाग जावे ! अपने कमरेमें बाबाजी की फोटो लगी हुईथी वह भी उतार कर सुबह कुडा लेने आई हुई भंगन के टोकरे में फेंकदी और जितने समाजी पुस्तक थे वे सब अपने दादा "कीर्त्तिप्रसाद" के सामने फेंक दिये. यह कार्रवाई देख "कीर्त्तिप्रसाद"

शारदाचंद्र- (हरदत्तकी अत्यंत अभिलाषा देखकर) अच्छा भाई साहब ! अगर आपकी यही इच्छा है तो लो अभी किसीको भेजकर मंगवाता हुं ! बोलो किसे बुलाया जावे ?

पं० हरदत्त- (खुश होकर) बस बुलाना हो तो " आफताब " को ही बुलाईए ! चालीस रुपयेकी जगह पचास सही मगर लोग तो खुश होंगे और कहेंगे तो सही कि किसी के विवाह में रंडी आई थी !

(यह सुनकर "शारदाचंद्र" ने एक अपने खास आदमी को भेजकर " आफताव " को बुलवा मंगाया, मगर " आफताब " के आने स पहले दो भाट कहीं से आ पहुंचे उन्होंने आते ही)

भाट- (कवित्त)

जय हो जजमानकी वात करुं ज्ञानकी
ध्यान दे सुनिये कलयुगकी कमाई है ।
दयानंद सरस्वतीने वेदके प्रमाणसे ।
नई एक रीत मत आपने चलाई है ॥
सुता सुत जायबेको उत्तम प्रकार एही ।
एक दो तीन पति करो सुखदाई है ॥
एकादश पतिलों बनाय उपजावे पुत्र ।
वेदको प्रमाण दोष दीखत न भाई है ॥

(यह सुनतेही महफलमें वैठे हुए लोग एकदम हसपड़े लेकिन दश बीस जो समाजी महाशय वैठे थे वे जरा हिचकिचाये मगर करही क्या सकते थे ? इतनेमें-

शारदाचन्द्र- (भाटसे) अरे भाई ! तेरा क्या नाम है ? और कहांसे आया ?

भाट- (दांत निकालता हुआ आगे बढ़कर दोनों हाथोंसे जुहार करके) हजूर ! मैं " बिजनोर " से आया हूं ! मेरा नाम " कपोल कल्पित " पांडे है ! जजमानकी जय रहे ! (बीचमें बैठी हुइ " आफताब " (वेश्या) को दोनों हाथ जोड कर)

हे स्वर्गकी सीढी ! लक्ष्मी सहोदरे ! हे सर्व प्रिये ! मैं लाडु भट्ट आपकी क्या स्तुति कर सकता हूं ! हे धर्म प्रचारिणि ! प्रत्यंगालिंगनीरंभे ! आपका अनुकरण करानेके लिये भारत वर्षकी स्त्रियोंका पतिव्रता धर्म भ्रष्ट करनेको हमारे बाबाजीने बडे प्रयत्नसे ग्रंथ बनाया है वह आपको मिला कि नहीं ? अगर न मिला हो तो लादूं ?

हे देवि ! आपके समान जगतमें परोपकारी मुझे तो कोई नहीं जान पडता ! हे सभा मंडपकी मन मोहिनि ! धन्य है आपको ! आपके दर्शनसे आज मेरा जन्म जन्मका धर्म कर्म सफल होगया ! (सभासदोंकी तर्फ एक हाथसे " आफताब " को बताता हुआ)

" जात्यन्धाय च दुर्मुखाय च जरा-
जीर्णाखिलाङ्गाय च ।
ग्रामीणाय च दुष्कुलायच गल-

त्कुष्टाभिभूताय च ॥
यच्छन्ती सुमनोहरं निजवपु-
र्लक्ष्मीलवश्रद्धया ।
पण्यस्त्री सुविवेककल्पलतिका-

स्त्रीषु रज्येत कः ? ॥ १ ॥ " (१) (श्लोकटानंद)
वाह ! वाह ! क्या कहना है ? शास्त्र कारकी बलिहारी जाऊं ! कहीं पाऊं तो सीस नवाऊं ! गुन गाऊं ! मर जाऊं ! तौभी पार न पाऊं ! जजमानजी ! आज आपका बडाही पुण्यका उदय है ! देखो तो एक कविने क्या ही अच्छा कहा है—

" यवनी नवनीतकोमलाङ्गी
शयनीये यदि नीयते कथं चित्
अवनीतलमेव साधु मन्ये
नवनी माधवनी विनोदहेतुः ॥ "

अर्थात्—यवनी वेश्या नवनीतके समान कोमल अंगों वाली

---

(१) अर्थात् जन्मके अंधेको, बदसूरतको, सारे अंगोंसे जीर्ण शिथिल अंग वालेको गंवारोंको, दुष्ट कुल वालोंको, गलित कुष्टरोग वालोंकोभी तथा और भी प्रत्येक पुरुषको थोडासा धन लेकर अपना मनोहर स्वर्णके समान अंगको केवल परोपकार और दया करके ही अर्पण-करदेती है ऐसी कल्प लतिका वेश्याको छोडकर दूसरेमें कौन मूर्ख चित्त लगावे !

अगर भाग्य वश शयन कालमें किसीको मिलजाय तो उसी समय उसका पृथ्वीतल पर जन्म होना सफल होता है क्योंकि वह इंद्राणीसे भी अधिक सुख देने वाली होती है!

(अपने मनमें) हाय हाय ! पापी पेटके लिये मैं इनके गुन गाउं ! राम राम यह तो कभी न होगा !

(शेर)–" जो फसे फन्देमें इनके वो गये शुभ कामसे ।
दीनसे औ धर्मसे औ शहर जंगल ग्रामसे ॥
है वही मूरख जो घिसते चाम देखो चामसे ।
जांयगे अग्निमें डाले जो विमुख हैं रामसे ॥
धन वो देकर रंडियोंको वात अभिमानी करें ।
पापके भागी हैं वो जो धर्मकी हानी करें ॥
फिर उसी धनको लेके रंडियां कुर्बानी करें ।
मांस औ मदिरा मंगा भड़वोंकी महमानी करें ॥"

हत् तुमारी ! रंडियोंको धन देनेका अंतमें यही फल ! छिः ! छिः ! कहां आ फसा !

(प्रगट सभासदोंसे) भगवान् आपका तप तेज प्रताप वढ़ावे ! तो यह भाट भी कुछ पावे ! जय हो ! (इतना कहकर बैठ गया तब दूसरा भाट)

गट्टूलाल–"सत्य वरावर धर्म नहीं, नहीं झूठ सम पाप ।
सत्य धर्मका मूल है, झूठ पापका वाप ॥ "
" कोई ले निरूक्त नाम विधवा नियोग करे

वहां भी परंतु नहीं लिखा ऐसा रूल है ।
कोई ले निघन्टु नाम विधवा विवाह करे
वहांभी न लिखी कहीं मित्रो ! ऐसी भूल है ।
कोई लेके व्यास नाम विधवाको वेटा देवे
वो भी गप्प क्यों कि नहीं वेद अनुकूल है ।
न मालूम सेठ और वावू क्यों प्रमादी हुए
विधवा विवाह नहीं ईशको कबूल है ॥
विधवाके प्यारे वावू कामसे मुर्दार हुए
बने हैं बेकारे नारी विधवा निहारके ।
लाते दरबार करें विधवा विचार होवे
विधवा नियोग वावू रोवे चीख मारके ।
होवते बेहाल हाल विधवाको देख देख
विधवा नियोग छापे बीच अखबारके ।
विधवाके भक्त वावू भोगोंमें आसक्त हुए ।
विधवाको कंचनी बनावें ये पुकारके ॥
विधवाके प्रेमी वावू विधवाका जाप जपे
विधवाकी संध्या करें भक्त निराकारके ।
रात दिन सदाकाल विधवाको यादकरे
देखो वावू ध्यानी शुद्ध ब्रह्म निराकारके ।
रूल व्यभिचारके जो नारीके विगार वाले
देखो सेठ ज्ञाता बने ब्रह्म निराकारके ।
न मालूम विधवाके बने क्यों ये वावू वैरी
विधवाको कंचनी बनावें ये पुकारके ॥
माता स्वसा बेटी बैठी विधवा अनेक घर

क्यों नहीं कराते पति वाको गप्प मारके ।
माता आदि बाबू और सेठका सियापा करें
बाबू सेठ बके व्यर्थ बीच जा बजारके ।
घरोंमें अंधेर सेठ विधवासे शादी करें
कामके अधीन बैठे खाक सिर डारके ।
पतिव्रता धर्म न सुनावें सेठ विधवाको
विधवाको कंचनी बनावें ये पुकारके ॥
एक पति छोड पति दूजेका जो नाम लेवे
जान लो वो नारी ठीक वेश्या है बजारकी ।
पति मरे बाद पति दूजेकी जो इच्छा करे
पूंछ बिना मानो उसे गर्दभी कुम्हारकी ।
रोगी पति त्याग जो अरोगी दूजा पति करे
जान लो वो बेटी किसी ढेढ़ या चमारकी ।
मनूका सिद्धांत नारी दूजा न बनावे पति
आज्ञा है ये ठीक शुद्ध ब्रह्म निराकारकी ॥ *

(ज्यों ही भाट इतना कहकर चुप हुआ त्योंही एक महाशय महफलमें से उछल कर आ खडा हुआ और बोला) अरे ओ ! बट्ट के भट्ट ! चुपकर इन चिकने चुपडे बघारों से क्या भारत को रहासहा भी गारत किया चाहता है ? भाड में जाय यह तेरी कविता और चुल्हे में पडे तेरी यह बिरुदावली ! तेरे जैसे झूठे खुशा-मदीयोंने ही देश घातक धर्म नाशक पाखंडियों को

---

* स्वामी आत्मारामसागर संन्यासी । (मनहरछंद)

"जरा तो लज्जासे मुं छिपावे,
"कि मनको हड्डी में स्थिर कराया ॥ १८

(१८) "पति से पहिला हो गर्भ जिसको,
"नियोग फिरभी विहित है उसको।
"कहूं समंजस मैं कैसे इसको,
"महा असंभव वचन सुनाया ॥ १९

(१९) "पति हो जिसकाकि दुःखदाई,
"उसे नियोग विधि विहित बताई।
"यही हैं स्वामीजीकी वडाई,
"कि दुःख अबलाओंका मिटाया ॥ २०

(२०) "किसी का पति जो विदेश जाये,
"नियोग करके वह सुत जनाये।
"ये धर्म कैसा गुरु दिखाये,
"कहो तो शिष्यों के मन भी भाया ॥ २१

(२१) "है सब मनुष्यों से ग्राह्य नारी,
"तो फिर न वर्जित रही चमारी।
"ये कैसी कलयुगकी आई वारी,
"कि धर्म और कर्म सब मिटाया ॥ २२

---

(१७) सत्यार्थ प्रकाश सन् १८८४ पृष्ठ १८८
(१८) " " १२०
(१९) " " ११९
(२०) " " ११९
(२१) " " ९७

(२२) "न कोई ईश्वरका है विजाती,
"ये गाइ वे ताल क्या प्रभाती ।
"बने हो शंकर के तुम घराती,
"तो उनसे फिर द्वेष क्या बढाया ॥ २३

(२३) "जो ग्रंथ भाषाके सब हैं मिथ्या,
"तो होवे 'सत्यार्थ' कैसे सच्चा ।
"जरा तो मन में तुं अपने शरमा,
"तेरे वचन से तुझे हराया ॥ २४

(२४) "किया है कैसा नियोग जारी,
"कि भोगे दश मर्द एक नारी ।
"है स्वामीजीकी ये होशियारी,
"कलंक वेदोंके सिर लगाया । २५

[ब्राह्मण सर्वस्व]

('आफताब' के इस गीतको सुनते ही सब समाजी महाशयों के चेहरे फक्क पड गये ! और इधर उधर झांकने लगे ! मगर उस परी के जादु जमाल व हुसने कमाल के सामने ऐसे मोहनी माया में दबे हुए थे कि कुछ कहने की बात नहीं थी ! बुद्धिमान ताड गये कि हां खूब चोट लगाई ! इतने में कोट पतलून चढाये,

---

(२२) सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २४९
(२३) ,, ,, ,, ७१४
(२४) ,, ,, ,, ११८

मूं में चुरट दवायेहुए पिलपिलीसाहवकी शकलमें उठकर एक)

महाशयजी– (बीबी "आपातात" के काँन पर होंठ लगा कर कहने लगे) बाइजी ! मान लिया कि तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है, में जानता हुं कि तुम्हारी और आर्य समाज के प्रेमी इन [हमारे मिस्टर साहब] की गहरी दोस्ती और हँसी मजाक दिल्लगी में जूती पेजार तक है ! मगर यहां दिन दहाडे भरी महफल में तुम्हें इनकी पोल खोलनी न चाहिये ! देखोतो विचारे शरमके मारे नीची गर्दन किये आंखोंसे जमीन खोद रहे हैं, कहीं मारग मिले तो समा जावें ! बाईजी ! तमाशबीनोंकी माईजी ! हमें अपने भाई जीकी कसम ! इनकी समाज में बडी प्रतिष्ठा है और इस समय शहरके कितने एक छोटे बडे जो इनको इस शहरमें समाजकी नींव डालने वाले होनेसे ईश्वरका भी ताऊ और बाबा आदमका भी किवला समझते हैं ! और ये बहुत कुछ पढे लिखे आलिम, फाजिल, आकिल जहीन व फहिम हैं ! कोई भैंस ... बाबा और बछिया के मौसाजी तो हैं ही नहीं जो कुछ ... समझें हीं नहीं ! बीवी-जी ! ये सब आड़ी टेढी जानते हैं, दबे ढके नुकते पह-चानते हैं, बडे ... ड़े न्याय और इन्साफ करते हैं, इस लिये आपको इनकी खैर ख्वाही करनी चाहिये ! नाकि वे भावकी चोटें लगानी चाहिये ! क्या ... तुम्हें यह चाहियेकी, " उसीके पगोंमें उसीका सिर " ... " उसीकी जूती उसीका सिर " जो ... ऐसा है तो हम ... आप रूपको

और इल्मको क्या करे ? " वह सोना किस कामका जिससे कान टूटें " वीवीजी ! " सोनेकी कटारी पेटमें नहीं मारी जाती " इस लिये मेहरबानी करके कोई उमदा चीज गाईये !

आफताब– (धीरेसे) हैं ! इज्जत ! इज्जत ! ! हमारे गानेसे छिनाल प्रतिष्ठामें दीमक लगती है ! पितिष्ठा पी. पी. या खुदा पितिस, तोवा तोवा कैसा गंदा लफज है कि जुबानसे अदाही नहीं होता ! प्रतिष्ठातो अगर कोई रईस हो, साहूकार हो या भला आदमी हो उसकी घटे तो कुछ हर्ज भी है, और रहे ये महाशयजी ! सो तो जैसें हम वैसे ये ! जैसे हम तेल फुलेलमें रेल पेल रहती हैं, वैसे ये ! जैसे हम बीचमें बालोंकी मांग निकालती हैं, वैसे येबीचमें मांग निकाल ते हैं ! (नजदीकमें जाकर हाथसे बताती है. लोग हंसते हैं) जैसे हमारे पतिका ठिकाना नहीं, वैसे इनके घरवालियोंके !

" स्वामीजी " तो दश तथा ग्यारांकी आज्ञा देते हैं मगर भीतरकी तो हमें सब खबर है. जैसे इनके धर्म ग्रंथोंमें वेशरमी की बातें हैं, वैसी हमारे मूं में ! बस सब तरहसे बराबर हैं ! न ये हमसे कम, न हम इनसे ज्यादा ! कांटेकी तोल ! राई घटे न तिल बढे ! एक वेलके तूंबडे ! सांपोंके सांपही माहिमान ! इसमें मुई परतिष्ठा खरतिष्ठाकी नानीका कौनसा तैमद मैला होता है ?

अजी सुनिये ! मैं किसीके बाबाजान बांके पठानकी लौंडी या गुलाम तो हूं ही नहीं जो तुम्हारे दबानेसे अपना नाम डूबाऊं ! मैंने बडे बडे शहजादे नवाबजादोंकी बड़ी बड़ी महफलोंमें गाया तोभी अपनी खुशीकी चीज गाई है मगर खैर क्या मुजायका है अबके पूरी पूरी सच्ची सच्ची ही कैफियत गाऊं चाहे कुछ हो ! बहुत करेंगे तो मुं बना लेंगे बस हद है !

(गाना)

"कहां सभा और समाज किसका,
आया ये कलयुगका राज क्या है ?
"नया जमाना नई है रंगत,
कलतो क्या था औरआज क्या है ?
" अंगरेज लोगोंकी करके नकलें,
बनाई क्या क्या अजीब शकलें ।
" है कोट पतलून बूट कालर,
चुरट मुंहमें मिजाज क्या है ? "
" टकोर तबला औ हारमोनियम्,
न संध्या वंदनकानाम नेस्त ।
"आप साहिब ये बीबी मम,
ये चक्की चरखा रिवाजक्या है ? ॥
"कहांतो होटल औ कहां अग्निहोतर,
इधर है व्हिश्की बरांडी बोतल ।

"सुनावे खबरें क्या आके लोकल,
नजरमें अरशोंमें राज क्या है ? ॥
"जले हैं भारतके भाग यारो,
हुए जो ऐसे नमूने पैदा ।
"वर्ण व्यवस्थाको तुम ही तोडो,
तुम्हारे शिरपै ये ताज क्या है ? ॥
"गई है विद्या अविद्या छाई,
धर्म कर्मकी हुई सफाई ।
"पढे लिखे नहीं एक अक्षर,
कहें मनूजी महाराज क्या है ? ॥
"उलटे मंत्रोंकी लेके आशा,
बनाई मर मरके पोथी भाषा ।
"कहां वशिष्ट और व्यास आदिक,
कहां " स्वामी " समाज क्या है ? ॥
"हुई है विधवासे क्या अवज्ञा,
कि कैद ग्यारां खसमकी ला ।
"करे जो दिन भरमें ग्यारां ग्यारां,
तुमको इतराज आज क्याहै ? ॥
"कहां पतिव्रत कहां ये व्यभिचार,
रहे न वरकी जरूर हरवार ।
"नशस्त बाजार क्या है बदकार,
तो बेवाका अजूद बाज क्या है ? ॥

पीकदान चपत गट्टू है चग नाम हमारा ॥
दीन इमान बेच बजार बट्टू है नाम हमारा ॥

सबकेसब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥

उस्ताद– गप्पें इधर उधरकी उड़ाते हैं हम सदा ।
यक झूठ नहीं दोस्त है गुलफाम हमारा ।
करते हैं खुशामद हम आमद इसीसे है ।
इन मशखरों में पंडित है नाम हमारा ।
फंदेमें मेरे आन के लाखों फंसे हैं काग ।
इस हाल में गुलशन में बिछा दाम हमारा ।
अजब सांड निखट्टू है बस नाम हमारा ।

सबकेसब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥

उस्ताद– दोनों इमान जर है रामो रहीम जर ।
मादर पिदर बिरादर है दाम हमारा ॥
जरके लिये अदालतमें झूठ बोल दूं ।
जरका गवाह नाम है सरनाम हमारा ॥
हिन्दू से नहीं काम न इसाकी कौम से ।
ज़र वालों की चौखट पै है विश्राम हमारा ।
अल्लाह ज़र खुदा है काबा है जर नबी है ।
बस जर यही है दीन और इस्लाम हमारा ॥
कपडा कहींसे खाना लाते है मांगकर ।
बस है यही रोजगार सुबह श्याम हमारा ॥

सबकेसब –यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥

[ब्लाकूटानं

(इतना कहकर जो सब भांडोका उस्ताद था वो ही खडा हो कर एक दास्तान बयान करनेके लिये महेफल- में तमाशबीनोंका ध्यान अपनी तरफ खैंचता हुआ बोला)

" जनाब ! जरा कांन लगाकर सुनिये ! "

एकभांड– (उठकर उस्तादके मूंके साथ अपना कांन लगा कर खूब ऊंचेसे जी हां......! सुनाईए !

उस्ताद्– (हाथसे परे ढकेलकर) अरे मूर्ख ! ये क्या करता है ? मूंके आगे कांन लगाता है ! (लोग हंसते हैं)

भांड– (धक्का लगनेसे जान बूझकर लोगोंपर गिरता हुआ) या खुदा ! कर खैर ! अभी आपनेही तो कहा कि कांन लगा कर सुनिये !

उस्ताद्– मूर्ख ! तुझको किसने कहा ?

भांड– तो किसको कहा ?

उस्ताद्– इन सब सभासदों को !

भांड– अच्छा ! तो मैं ध्यान लगाकर सुनता हूं (लोगोंसे) आप कांन लगाकर सुनिये ! (सब लोग हंसते हैं)

उस्ताद्– जनाब ! शहर जालंधरमें "लाला घंटनाथ रंगजी" बडे पैसे वाले मालदार आसामी थे ! उनका एक लडका " अमरनाथ नंगजी " बीस बाइस बरसकी उमरका जवान एकका एकही था ! उससे एक दिन किसी बातके लिये " घंटनाथ " से बोल चाल होगई, वोभी बीबी मूंजकी रस्सीके बडे भाई ऐंठखां मिजाजीके पूतले थे !

बस फिर क्या था ? अपने बाप " घन्टनाथ " से गुस्से होकर भाग निकले ! और शहर पूनेमें जाकर एक आर्य विश्रांति होटलके बबरचीकी जगह तीस रुपये महीनेपर नौकर होगये. इधर " घन्टनाथ रंगजी " की उमर पच्चपन वर्षमें ऊपर हो चुकी थी. अपने मनमें विचारने लगे कि–" हे निराकार ! तेरी मूर्तिके देखनेसे मेरी आधी व्याधी और उपाधी सबही दूर होगई है, मगर सृष्टि की आदिमें अनेक जवान स्त्री पुरुषोंको पैदा करने वाले ! निराकार ! अबमें क्या करूं ? मेरा लडका तो भाग गया ! और घरमें दौलत बे शुमार है इसका मालिक किसको बनाऊं ? हे अमूर्त्त ! तूने स्वयं आ आकर अपने सेवकोंकी खबर ली है मैं तो तेरा पक्का सेवक हूं !

" घन्टनाथ " की इस प्रार्थनापर " निराकारजी " को भी चिन्ता हुई कि बेशक ! कोई उपाय अवश्यही करना चाहिये ! तब "निराकार" ने आकर "घन्टनाथ" के अंदर प्रेरणा की, कि यतीमखानेमें " उत्तमकुल भूषण " चमारकी लडकी सुकन्या " गिदौडी " बाईके साथ विवाह कर ! उससे जो पुत्र होगा वह इस जायदातका मालिक बनेगा ! बस फिर क्या था "घंटनाथ" ने लोहेकी अलमारीसे एक थैली निकाल उ... मूं खोल रूपचंद मनीरामकी सुरीली आवाजसे लोगोंके दिल अपने काबूमें करलिये और घंटोंके अंदरही "घन्टनाथ" " गिदौडी " बीबीको व्याह लाये ! जब " गिदौडी बीबी " घर आई तो झाड़, फानुस और तरह तरहके

फरनीचरसे सजे हुए मकानकी शोभाको देख साक्षात् अपने आपको स्वर्गलोकमें आगई मानने लगी.

मगर ज्यों ही " घन्टनाथ " एक हाथमें लाठी लिये, दूसरा हाथ टेढी कमरपर रखे हुए, माथेमें रूईके समान सफ़ेद बालोंको बिखेरे हुए, बिना दांतोंके जबाडे (मूंह) को हिलाते (मानो सुपारी ही खारहे हों) खौं खौं करते हुए " बीबी गिदौडी " के सामने आकर खड़े हुए, त्यों ही " गिदौडी बीबी " के तो प्राण खुश्क होने लगे ! विचारने लगी कि हाय ! हाय ! क्या यही मेरा पति है ? इतनेमें " घंटनाथ " ने बीबीको पकडनेके लिये हाथ लंबाया त्यों ही " गिदौडी बीबी " तो पीछे पैरों हटती हुई, दोनों हाथ ऊंचे करती हुई यूं फाडकर चिल्लाई कि हाय हाय ! दौडो दौडो मुझे इस राक्षससे बचाओ बचाओ ! खा'ली ! खा'ली ! ! (भांड इतना कहते पीछे भार पीठ चूतड़ोंके बल गिरा यह देख सारी महफ़ल हंस पडी आखर उठकर फिर आगे बोला)

जनाबमन् ! जब " घन्टनाथ " ने "गिदौडी बीबी" को इस तरह चिल्लाते देखा तो दोनो हाथ जोडकर गिड़ गिड़ाते हुए और कांपते हुए बोले-चु-चु-चु-चुप चुप-चुप को-को-कोई सु-सु-सु-सुनेगा सुनेगा दरमत दरमत तूं मेरी प्याडी प्याडी मैं कु-कुछ नहीं क-कहेता ले मैं जा-जा....ता हूं ! इतना कहकर " घंट नाथ " नीचे चले गये ! "गिदौडी बीबी" सोचने लगी कि हे, ईश्वर ! तूं बडाही दयालु है जो आज मुझे

यमराजके हाथसे बचाया! खैर बात क्या इसी तरह रोज मर्रा "घंटनाथ" की "गिद्दौडी बीबी" के साथ गुजरती रही! होते हवाते एक सालके बाद "घंटनाथ" की घंटी बंद हो गई और प्राण पखेरू उड़ गये! तब "गिद्दौडी बीबी" ने भी जो नर नर माल था वह तो अपने कबजे किया, और मकानको ताला लगाकर अपने भाई "कुल कलंक" बूत कीपर (मोची) के पास शहर पूने में पहुंची और आनन्दसें रहने लगी. जब दो तीन महीने बीत गये तब एक दिन अपने भाई "कुलकलंक" से कहने लगी कि भाई! मुझ से तो अब रहा नहीं जाता इस लिये "स्वामीजी" के कहे मुताबिक कोई अच्छा आर्य पुरुष मिले तो उसके साथ नियोग करलूं! "कुल कलंकजी" तो थेही "स्वामीजी" के पूरे भगत अपनी बहन से कहने लगे कि, एक मेरा मित्र यहां पर है, उसने मुझसे कहाथा कि, अगर कोई नियोग करनेकी इच्छावाली स्त्री हो तो, मुझे कहना! सो बहुत ही अच्छी बात हूई कि तुमने ही यह बात कही. गरज अगले दिन जाकर "अजरनाथ नंगजी" के साथ बातचीत करके "स्वामीजी" के लेखकी जय बुला दी, मियां बीबी राजी तो क्या करे काजी! कलयुगका जमाना बड़ा ही सस्ता टके सेर खाजा टके सेर भाजी! बापकी औरत और दौलत दोनो बेटेको स्वयं आ मिली! किसमत नाम इसका ही है! मगर न "गिद्दौडी बीबी" को यह खबर कि, ये मेरे ही खाविन्दका लडका है! और न "अजर

नाथ नंगजी" को यह खबर कि, ये मेरे ही बाप की बीबी है! आखिर एक साल के बाद "नंगजी" की मेहरबानी से "गिदौडी बीबी" को पुत्र फलकी प्राप्ति हुई, उसका नाम उन्होंने "जगत उजागर" रखा. एक दिन आनंदमें बैठे हुए "नंगजी" अपनी स्त्री "गिदौडी बीबी" से कहने लगे कि—प्रिये! अगर तुम्हारी मनशा हो तो चलो मैं तुम्हें अपने देशको ले चलूं, क्यों कि वहां मेरा घरबार बाग बगीचा सब है, और मेरा बाप भी बुड्ढा है! वह मेरे वियोगसे बडाही दुःखी हो रहा होगा! बीबीने पूछा कि, तुम्हारे बापका क्या नाम है? "नंग-जी" बोले प्रिये! उनका नाम "घंटनाथ रंगजी" है. यह सुनते ही "गिदौडी बीबी" का चेहरा सफेद पूनी हो गया! विचारमे पडी कि, हाय हाय ये क्या आफत? फिर बोली कि, भला! किस शहेर में? "नंगजी" बोले कि, शहर जालंधरमें! इतना सुनते ही बीबीजी तो चिल्ला उठी कि, हाय! हाय! मैं उन्हीं की तो औरत हूं और यह माल जर जेवर सब उन्हींकी कमाई! जब वो मर गये तब मैं भाग आई! "स्वामीजी" की दु-हाई! मैं तो ठगाई सो ठगाई! मगर तुमने मुझ (अपनी) अम्मा के साथ करके सगाई! कहो तो कौन सी डिगरी पाई? अब तुम्हें अम्माके खसम कह कर पुकारूं या अम्मा के सपूत? यह सुन "नंगजी"! के भी हाथ पैर काँपने लगे और बोले कि, अरी बीबी माई! यह हुआ सो हुआ! मगर अब यह कहे कि, ये जो तेरी

चंपा–तूंने वचके रहना ! मैं तो नहीं डरती ले देख जवाव देती हूं ! (ब्रह्मानंदसे) वन्ने !

" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं कंथ ।
" दुर्गतिका देनेवाला, स्वामीजीका पंथ ॥ और भी लो–
" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं वोल ।
" स्वामीजीने पंथ निकाला, जैसा ढोल पोलं पोल ॥
" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं धाते ।
" स्वामीजीका नाम न लो, छोडो गंदी वाते ॥

वन्ने ! देते हो जवाव या चौथाभी सुनाऊं ! नहीं देते ! आता ही नहीं दोगे क्या ? अम्मा का चोटला ! या आर्य समाजकी डोलची ! या वावाजीकी दुम ! वाहरे !

(औरतोसे ब्रह्मानंदकी तरफ हाथ करके) निरा पुरा आर्य समाजियोंके स्तंजेका डला ही है. (ब्रह्मानंदसे) अरे कुछ तो वोलो ! नहीं वोलते तो लो सुनो मेरा चौथा छन—

" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं दंडी ।
" आरियोंका आदी वावा, खसम करावे रंडी ॥ "

(चंपाकी इस चालाकीसे सव औरतें तालीयां वजाकर हँसने लगीं तव मुसकराकर)

ब्रह्मानन्द– वाहजी वाह ! चित्तौड़का गढ फते कर लिया ! क्या कहना है ! भला यहतो वतलाओ कि यहां पर तुमने आर्य समाजी किसको समझा है ? अगर मुझे आर्य समाजी समझती हो तो वेहतर है कि तुम इस अपनी

"माया" को मेरे साथ मत विदा करो! वरना जाते ही दूसरा खसम करने की इजाजत दूंगा! या मैं खुद ही कहींसे इसके लिये दयानंदीको ढूंढ लाऊंगा! बोलो झट-पट है मंजूर? और तुम में से भी किसीकी मनशा हो तो अपने अपने घरवालोंकी रजा लेलो सबके लियेही बंदो-बस्त करादूं! हां अगर बाबा दयानंदको ही इस वक्त बुरा भला कहने की तुम्हारी मनशा हो तो कसम है तुम्हें अपनी जवानी की, जो चुप करो!

(यह सुनते ही तमाम औरतें शरमिंदी सी होगई. आखर "ब्रह्मानंद" को जो कुछ देना दिवाना था वह देकर बरात विदा होकर घर आगई। "ब्रह्मानंद" विवाह के बाद छुट्टी पूरी होने पर 'इटारसी' अपनी ड्युटी पर चला गया. एक सालके बाद "ब्रह्मानंद" को पांच रुपये की (८५ के ९०) तरक्की होकर 'कानपुर' बदली हुई तब "शारदाचंद्र" ने घर से "माया" को कान-पुरमें भिजवादिया, वहां दो सालके बाद "माया" के एक पुत्र हुआ जिसका नाम "श्रीनाथ" रखा. इधर "विश्वं-भरनाथ" (ब्रह्मानंदके पहले पुत्र) को छठा वर्ष लग चुका था. "शारदाचंद्र" ने किशोरी, मदन, दीप, मुकुट और सुधीश वगैरः जिस स्कूलमें पढ़ते थे उनके साथ "विश्वंभरनाथ" को भी पढ़ने के लिये भेजा, और "ब्रह्मानंद" को लिखा कि आज "विश्वंभरनाथ" को पढ़ने बिठा दिया है. यह समाचार सुन "ब्रह्मानंद" एक दिनकी रजा लेकर घर आया, और "विश्वंभरनाथ" को अपने साथ ले गया.

(इस बातका कारण घर में किसी को मालूम नहीं हुआ "ब्रह्मानंद" की मति में भ्रम हो गया कहो, अथवा "विश्वंभरनाथ" की बद किसमति !

ब्रह्मानंद–(विश्वंभरनाथको धमका कर) देख खबरदार ! जो पढ़नेका नाम लिया ! अथवा मैंने किसी दिन तेरे मुंहसे क–ख–ग या अ–इ–उ भी सुन पाया तो चमड़ी उधेड डालूंगा और खाने खरचनेको भी एक पाई न दूंगा ! वरना सुबह उठ कर रोज एक आना दिया करूंगा बस आनंदसे खेलना और खाना. (मायासे) देखरी ! खबरदार ! इसे एक अक्षरभी जो सिखाया तो तुं जानती है !

माया–हैं ! हैं नाथ ! अफसोस यह कैसी उलटी शिक्षा! आपको क्या कुछ होतो नहीं गया ? ऐसा तो, हिन्दुस्तान भरमें तो क्या दुनियाभरमें भी न निकलेगा जो अपनी सन्तानको मूर्ख बनानेकी इच्छा करता हो ! नीतिवाले तो कहते हैं कि वह माता पिता शत्रू हैं जिन्होंने अपने पुत्रको पढ़ाया लिखाया नहीं ! और फिर लोग भी क्या कहेंगे कि, इनकी अकलको क्या हूआ जो लडकेकी जिन्दगी बिगाडने परही कमर बांध रखी है ! और कुछ नहीं तो लोगाम यह बात तो जरुरही प्रसिद्ध होगी कि, भाई ! इसकी मां (सतेरई मासी) दूसरी है इस लियेही इसके पढ़ानेकी तर्फ ख्याल नहीं दिया जाता ! इस वास्ते आपको यह योग्य नहीं है, आगे आपकी मरजी !

ब्रह्मानंद-(अपनी स्त्री "माया" से क्रोध पूर्वक डपट कर) अरे रांड ! खबरदार ! मैं अब वो "ब्रह्मानन्द" नहीं रहा ! तूं अपनी इस नसीहतको अपने पास ही रहने दे ! अगर हड्डियां तुडवानेकी मनशा हुई होतो वो कह दे । बस जो मेरे दिलमें आयेगा सो करुंगा अगर मेरे कहनेमें जराभी चरड चूं लगाई तो ऐसा रस चखाऊं-गा जो सारी उमर रोते गुजरेगी !

माया-(मन ही मन में बडी दुःखी होकर) हाय ! यह एकदम इनकी अकलमें क्या परदा पड गया ? जो रस्ता मनुष्यको अपनी जिन्दगी के उद्धार के लिये है उसीको ये बंद कर, कांटो की वाड लगाते हैं ! खैर अफसोस ! इसके भाग्यमें जो लिखा है सो होगा ! (प्रगट) प्राण-नाथ ! मुझे क्या जरुरत है ? मैं आज पीछे कभी भी इस विषयमें बात न करुंगी. अब कहा सो कहा आगे के लिये ऐसा न होगा !

ब्रह्मानंद-(विश्वंभरनाथसे) देख बेटा ! जो लडके पढते हैं उन्हें मास्तर मारता है और कान पकड कर उखाडता है इस लिये पढनेका कभी नाम मत लेना ! (प्यार दे-कर) जाओ खेलो ! मगर एक ख्याल रखना ट्रेन (रेल) आनेके वक्त प्लेटफार्म पर मत फिरना वरना कहीं आ-दमीओंकी भीडमें धक्का लगनेसे कचरा जायेगा (गर-ज कि "विश्वंभरनाथ" का समय इसी प्रकार खेल कूदमें व्यतीत होते हुए तीनवर्ष और निकल गये. इस वक्त इसकी उमर ९ वर्षकी होगई, "माया" को

एक लडकी हुई जिसका नाम " शंका " रक्खा. " वि-श्वंभरनाथ " पर " माया " का जो प्रेम था वह अपने पुत्र " श्रीनाथ " के हुए बाद दिनपर दिन कमती होता चला जाता ही था: लेकिन पुत्री होनेके बाद बिल्कुल ही चलागया. सिर्फ पतिके डरसे स्नेह दिखलाने मात्र रखती थी. इतनेमें " ब्रह्मानन्द " को कानपुरसे बदली होकर ' कालपी ' जाना पडा, तब " शारदाचंद्र " ने लिखा कि " विश्वंभरनाथ " को नौवां वर्ष शुरू हो गया इस लिये यहां आकर उसके यज्ञोपवीत डाल जाओ. अपने पिताकी आज्ञासे पन्द्रह दिनकी रजा लेकर अपने घर आकर " विश्वंभरनाथ " का यज्ञोपवित किया और फिर साथही वापस लेगया. " शारदाचंद्र " ने " विश्वं-भरनाथ " की पढाई के संबंधमें " ब्रह्मानंद " से बहू-त कुछ बुरा भला कहा, मगर " ब्रह्मानंद " ने एक वात परभी ध्यान न दिया ! जब " ब्रह्मानंद " कालपी के स्टेशनपर तबदील होकर आये तो यहां के स्टेशन मा-स्टर पंडित " मुरारीलाल " वडे लायक और दयालू थे. उन्ही के हाथ नीचे " ब्रह्मानंद " को काम करना पड-ताथा ! १०-१२ रोजके बाद " पं० मुरारीलाल " ने " विश्वंभरनाथ " को अपने लडके " जयनारायण " के साथ खेलते देखकर अपने मकानपर बुलाया ! (स्टे-शन के पीछे ही स्टेशन मास्तरका बंगला था, और उसी के साथमें एक दूसरा बंगला था, जिसमें " ब्रह्मानंद " तथा और दो बाबू रहते थे.)

पं०मुरारीलाल–(अपनी स्त्री " पद्मा " से " विश्वंरभना-थको बता कर) देखा! यह नव सालका हूआ है, मुझे इसको देखकर बडी ही दया आती है कि, यह इतना वडा हुआ मगर इसके बापको न जाने क्या वेवकूफीका परदा पडा है? जो पढनेसे रोकता है! मुझे तो कल रोज मालूम हुआकि यह बात इस तरहसे है.

पद्मा–अजी आप क्या कहते हो! इसमें " ब्रह्मानंद " की वेवकूफी है या नहीं यह तो परमात्मा जाने! मगर इसकी जो मतरेइ मा है वोही इसकी शत्रु बन रही है, आपको क्या मालूम? वो बाबुआनी इसके साथ क्या क्या सलूक करती है मुझे! तो मिसरानींने उसके मिजाजका सारा किस्सा सुनाया है. यह तो खैर, लेकिन परसोंका जिकर है कि, अपना "जयना" और ये दोनोहीं इन्ही के सहन (बंगलेके आगे) खेल रहे थे कि, इतनेमें इसकी मांने इसे कहाकि, अरे वच्चन! ले " श्री नाथ " को लेजा, और अपने आपाके पास (दफतर) में छोड आ, इसने पासमें खडे हूए घरका कामकाज करनेवाले कहारके लडकेसे कहाकि, जा बे! इसे छोड़ आ, वह भी इतना कहनेपर झट उसे उठा कर दफतरमें ले गया, लेकिन न मालूम उस वक्त इस ऊपर इसकी मांको ऐसा क्रोध आया कि रोटी खा रही थी, एक हाथमें अचारकी मिरच लिये हूए एकदम उठी और जहां यह खेलता था वहां आकर, एक लात इसको पीठमें मारी और झुझला कर, हाथसे पकड थप्पड मा-

रती हुईने यह अचारकी मिरच इसकी आंखमें धुंस दी यह कारवाई देख अपना "जयना" तो भाग आया. और में ऊंचे ऊंचेसे इसका रोना सुन कर वहां गई जाकर देखं तो ये मछली की तरह तड़फ रहा था. मैंने उसे मना किया और उसके हाथसे इसे छुड़ाया ! मैंने और मिसरानीने मिलकर इसकी आंख धोई मगर आंख बिलकुल न खुली तब इसके बापको बुलवाया. उसने आकर पूछा कि, क्या हुआ ? तो बोली कि, क्या करूं कहना नहीं मानता था इस लिये आंख में जरा लग गई ! उस वक्त इसके बापने कुछ डपटा. और रोते हुए इसको हस्पतालमें ले गया, वहां डॉक्टरने आंख धोई. अपना "जयनारायण" भी साथ गया था उसने मुझसे आके कहा कि, अम्मा ! " विश्वंभरनाथ " की आंखम से डॉक्टर साहबने मिरचके तीन बीज साबत निकाले. आंख सूनकर लाल हो गई सो तो अभीतक भी लाल हो रहा है. अब आपही विचार कीजीयेगा कि, जहां यह हाल है वहां इसका सहाई शिवाय दव क आर कान हो सकत है इतना घमंड तो मैंनें किसी औरत म नहा देखा, आज इतने दिन यहां आये को हुए सीधे मुं बातभी नहीं ! मैंने बुलाया और वहां गई तो बोली !

पं० मुरारीलाल– (विश्वंभरको हाथ से खींचकर अपनी गोदमें बिठा) क्यों ? (अपने साथ बाता हुइ बातको सुनकर 'विश्वंभर' का दिलभर आया था, मगर मुरारी-

लालके प्यार से एकदम सिसक सिसक कर रोने लगा) हैं ! हैं ! बेटा ! क्यों ? क्यों ? (पुचकार कर) मत रोओं ! जानेदो गई गुजरी बातको ! भला यह तो कहो कि, तुम्हारा बाप तो तुम्हें प्यार से रखता है ?

विश्वंभरनाथ- (रोना बंद करके) जीहां !

मुरारीलाल- तुम्हे पढाता क्यों नहीं ?

विश्वंभरनाथ-यह में नहीं जानता !

पं० मुरारीलाल-तुम्हारा मन पढनेके लिये करता है ?

विश्वंभरनाथ- जी हां !

पं० मुरारीलाल- (तरस खाकर) अच्छा तो तुम यहां खेलनेके बहाने हमारे " जयनारायण " के पाससे पुस्तक लेकर पढा करो ! तुम्हारे बापको तो बहुत समझाया मगर न जाने उनके दिलमें क्या बैठ रही है ! सारा जहांन तो पढने पढानेको अच्छा समझता है. देखो जो तुम्हारा बाप पढा हुआ है तो ९० रुपये महीना पाता है, और जो नहीं पढे वह देखो कुली (मजूरों) का काम करते हैं. मैं भी पढ गया तो आज १२५ रुपया महीना पाता हूं. इस लिये पढनाही अच्छा है, तुम जब तक यहां हो वहां तक रोज में जिस वक्त " जयनारायण " को पढाता हूं उस वक्त आकर थोडा थोडा पढा करो !

विश्वंभरनाथ–बहूत अच्छा ! मगर मेरे बापको खबर होने न पावे !

पं०मुरारीलाल– नहीं नहीं ! इस बातसे बिलकुल बेफिकर रहो ! (अपने लडकेसे) जयना ! तेरे पास प्राइमर है?

जयनारायण– जी हां है !

पं० मुरारीलाल– लाओ ! (जयनारायणने निकाल कर दी, विश्वंभरसे) यह लो ! इंगलिशमें ये २६ अक्षर होते हैं आज इन्हें याद करो और अच्छी तरहसे पहचानो !

विश्वंभरनाथ– इन अक्षरोंको तो मैं पहचानता हूं, और याद भी हैं.

पं० मुरारीलाल–अच्छा–यह किससे सीखा ?

विश्वंभरनाथ–तीन चार दिनसे " जयनारायण " से ही सीख रहा हूं, हिन्दी के अक्षरभी सीख लिये हैं, और बाराखडी भी याद करली है !

पद्मा– (पं० मुरारीलालकी स्त्री, विश्वंभरके माथेपर हाथ फेरती हूई बोली) बच्चू ! तुम इसी तरह रोज " जय नारायण " के पास पढ़ा करो ! मैं उम्मेद रखती हूं कि, यह प्राइमर दो महीनेमें पूरी हो जायगी ! और हिन्दी तो मैं तुझे बचवाया करूगी..

(इस प्रकार " विश्वंभरनाथ " पर पं० मुरारीलाल और उनकी स्त्री "पद्मा" दोनोंही अपने पुत्रके समान स्नेह करने लगे ! एक डेढ महीनेके अंदर " विश्वंभर-

नाथ " को हिन्दी वांचना आ गया. एक दिन दुपहरके समय "पद्मा" ने विश्वंभरनाथको बुलाकर अपने पास बिठाकर एक पुस्तक हिन्दीकी हाथमें दी.)

पद्मा–लो ! इसमेंसे कुछ पढ कर सुनाओ !

विश्वंभरनाथ–(पुस्तक हाथमें ले कर) हां लो ताईजी ! सुनो–
" संसारमें किसी मनुष्यको बिलकुल तुच्छ या शक्ति
" हीन कभी नही समझना चाहिये. हर एक मनुष्यमें
" इतनी शक्ति होती है कि, किसी न किसी समय या
" किसी न किसी काममें तुम्हारा मतलब उससे निकल
" सकता है, पर जो तुम ऐसे मनुष्यका एकदम तिर-
" स्कार करोगे तो वह कभी तुम्हारे काम नहीं आवे-
" गा, तुमने किसीके साथ बुराई की होगी तो उसे
" वह प्रायः भूल जायगा, पर जो तुमने उसका तिर-
" स्कार किया होगा तो वह उसे कभी नहीं भूलेगा ।"

(विश्वंभरनाथ तो अंदर यह पढकर सुना रहा था मगर होनहार "विश्वंभरनाथ" की सतेरेई मां "माया" गोदमें अपनी लडकी "गंगा" को लिये हुए उसी कमरे के बाहर आ खडी हुई, और जो कुछ "विश्वंभरनाथ" ने पढा वह सब कुछ सुना. यह सुन कर.

माया–(अपने मनहीं मनमें) हैं ! इसे किसने पढाया ? और इसे डेढ दो महीनेके अंदर ही इस प्रकार तडातड पढना एकदम कैसे आ गया ? क्या ये बापसे निडर हो गया ? मालुम होता है कि, इस बाबुआनी ने ही

अपने बेटे "जयनारायण" के साथ प्राइवेट पढा कर इसे ऐसा बना दिया! (इस प्रकार विचार करती हुई अपने कमरे में चुपचाप वापस चली गई और ऊंचेसे "विश्वंभरनाथ" को) अरे बब्बन!

विश्वंभरनाथ– हां जी! ये आया! (पुस्तक छोडकर सामने आकर खडा हो गया) क्या है?

माया–क्या कर रहा था?

विश्वंभरनाथ–करना क्या था? कुछ नहीं! खेलता था!

माया–अरे क्यों झूठ बोलता है? खेलता था? मुझे क्या? जो कुछ तूं अभी वहां कर रहा था सो तेरा 'आपा' (बाप) स्वयं देख गया और सुन गया है. मैं तो जानती ही हूं! देख आज तेरी कैसी चमडी उडघती है!

विश्वंभरनाथ– (कुछक साहस और क्रोध पूर्वक)

Never mind. It matters very little.

(कुछ परवाह नहीं!)

माया–अरे! गजब! मैनेतो हिन्दी ही बांचते सुनाथा, मगर साथ में इंगलिशभी! (हाथसे अपनी तरफ खीचकर कुछक प्यार पूर्वक) सच कह, तूं किससे पढता है? और कौन पढाता है? मैं तेरे आपाको बिलकुल भी जिकर करूं तो मुझे तेरी ही सौगन्द है!

विश्वंभरनाथ–(हाथ छुडा कर) बस! तुझे क्या? तू आपाको कह कर जो कराना हो सो करा लेना!

(इतने में "ब्रह्मानंद" आ पहुंचा और "विश्वंभरनाथ" के पढने की बात को सुनकर एकदम क्रोधमें आकर उसको मारता हूआ "माया" से

ब्रह्मानंद- देखरी! तेरी जान लै डालूंगा! अगर जब तक मैं न कहुं वहां तक इसे खानेको दिया, या घरसे बाहर निकलने दिया! फिर देखूं कि, यह किससे और कैसे पढता है? (इतना कहकर पैर में पडे हूए बूट सहित "विश्वंभरनाथ" की पीठ में एक लात मारी. "विश्वंभरनाथ" के रानकी आवाज सुनकर)

पं० मुरारीलाल-(वहां पर आकर ब्रह्मानंद से) क्यों इस बच्चेको पीटते हो ?

ब्रह्मानंद-अजी ! बडा ही शतान हो गया है!

पं० मुरारीलाल-शैतान बनाने की घूंटी तो तुम खुद हमेशा देते हो! अफसोस कि, फिर शैतान पना करने पर पीटते हो? सच मुच मुझे मालूम होता है कि, वर्तमान आर्यसमाजके पिता "स्वामी दयानंद सरस्वती" जीने अपने दिलमें यही जाना होगा कि, मेरी पदवी को संभालने वाला "ब्रह्मानंद" हो ही गया है इसी लिये वो मर गये ! क्योंकि प्रायः उनका भी यही हाल देखा अपने ही कथनको आप ही मथन कर खंडन करना! जैसे "स्वामीजी" की आदत थी कि, सरासर झूठी बातको भी सच्ची करनेके लीये एसा तर्क घड मारते कि, सच्चे को भी झूठा कर डालते! मगर

अंत में शठ का शठ निकले विना नहीं रहता ! सो भाइ साहब ! तुम उन्हीं के भाइ बडे मियां अमीरअली के बबरचीकी तरह तो मत करो ।

जैसे "अमीरअली" नामके एक मुसल्मान बडे मांसाहारी थे. उसका "बबरची" एक दिन मांस पकानेके समय, एक बुगलेकी एक टांग पहलेही काटकर स्वाहा करगया (खगं खा गया) बाकीका बनाकर मालिकके सामने खानेको ले आया. तब " अमीरअली " ने उसे देखतेही आंखें तार कहा कि क्यों बे ! इसकी एक टांग क्या हुई ? उस बबरचीने बडे अदबसे खडे होकर कहा कि, हजूर ! इस जानवर (बुगले) की एकही टांग होती है ! तब "अ-मीरअली " ने क्रोधमें लाल होकर कहा कि अरे! क्या किसी जानवरको एक पैरभी होता है ? बबरचीने कहा कि, हजूर नास्ता कर लीजीयेगा फिर मैं दिखला दूंगा कि, इस जानवर (बुगले) को एकही पैर होता है ! यह सुन उसका मालिक मनही मनमें झुलस कर चुप रह गया ! और खाना खाये बाद " अमीरअली " ने बबरचीका हाथ पकड कर कहा कि, चल हमारे बागमें तालाबके किनारे बहुतसे बुगले हैं देख एक टांगके हैं कि दो ? यह सुनकर बबरची झटही साथ चल पडा और दोनों ही बागमें पहूंचे, देखें तो तालाबके किनारे बहूतसे बुगले एकही टांगसे कपट ध्यान लगाये खडे हैं यह देखतेही बबरची बोल उठा कि देखिये ! देखिये ! फिर आप मुझेही दोष देंगे ! देख लीजीयेगा इस वक्त

इन बुगलोंको एकही टांग है फिर मुझे दोष मत देना ! तबतो "अमीरअली" को बडाही क्रोध आया और भभक उठा " क्यों बे ! आंखोंमें धूल डालता है ?" यूं कहकर उसने जोरसे अपने हाथकी ताली बजाई ! तब उधर बुगलोंका भी ध्यान टूटा और अपने पेटमें लगी दूसरी टांगको निकाल धीरे धीरे चलने लगे, तब वह अपने बबरचीसे बोले कि, अबे ! ले देख ! अब के टांग हैं ? बबरची ने कहा कि, हजूर ! इस जानबरको एकही टांग होती है, लेकिन ताली बजानेसे दो हो जाती हैं ! अगर जिस वक्त वो तश्तरी (रकाबी) आपके सामने लाकर रखी थी उस वक्त आप ताली बजाते तो शायद उसको भी दो टांग होजाती ! यह सुन वह " अमीरअली " अपनासा मुंह लेकर रह गये !

अब देखो तुम ख्याल करो कि, वो बबरची अमीरको सरासर ठगता है, लेकिन कहोतो, किसी ठिकाने कुछ कसर रही ? इसी तरह " स्वामीजी " की तर्क को एकाएक सच समझ लेना बुद्धिमानोंका काम नहीं है. सो मालूम होता है कि, तुमभी बाबाजीका अनुकरण करने लगे हो ! सो भाई साहब ! तुम्हारा लड़का है चाहे मारो चाहे काटो हमको क्या ? मगर तुम्हारे जैसा अन्यायी सिवा एक " सरस्वतीजी " के अलावा मुझे तीसरा तो कोई नजर नहीं आया ! हां या यह आपकी औरत, जो आपको विपरीत विचार पर मदद देती है !

मुझे अफसोस इसी बातका है कि, अगर तुम लिखे पढ़े न होते तो आज दिन यह मकान रहनेके लिये मुफ्त ! और (९०) रुपये महीना सरकार क्या तुमको देती ? इस वक्त जो लोग तुमको "बाबूजी" कहकर बुलाते हैं वही लोग "ओ कुली" कहकर बुलाते और बोझ उठाते उठाते तुम्हारे शिरमें ताल पड़जाती ! टट्टी लाल हो जाती ! इसवक्त हमें इस लड़केकी बुद्धि देख कर बड़ाही रहम पैदा होता है कि, जिसने तुमसे चोरी छिप कर दो ढाई महीनेमें इंगलिश प्राइमर पूरी करडाली और हिन्दी भी अच्छी तरह पढ़ना आगया है ! मगर ये बिचारा क्या करे ? *" तीर तकदीर अजसिपे तदबीर रदनमी गर्दद (लंबा श्वास लेकर फिर) भाई ! कुछ सोच समझकर लड़के पर हाथ उठाओ, नाहक बेवकूफों की गिनतीमें न आओ ! लोग तो लड़केको न पढनेके लिये मारते हैं मगर आफरीन है जो तुम इसको पढ़ाक्यों? इस बात पर मारते हो ! वाह भाई वाह ! !

ब्रह्मानन्द–आप माफ कीजियेगा ! और यह नसीहत अपने पासही रहने दीजिये गा ! आपको क्या मालूम कि, यह पढ जायगा तो जरूरही सुख पायगा ! अगर पढ-जाने पर भी दुःख हुआ तो क्या तुम इसको सुखी कर दोगे ? क्या आप इस बातका दावा करते हो ? बस इस लिये आप इस विषयमें मुझे कुछभी मत कहिये ! मेरा

* तकदीरके सामने तदबीर कुछ नहीं कर सकती !

लडका है जो मेरे दिलमें आयगा सोही मैं करूंगा !

प० मुरारीलाल- अच्छा भाई ! जो तुम्हारी मरजी !
(मनहीमें)

" सीख वाको दीजीये, जाको सीख सुहाय । "

ऐसे ऐसे आदमी इस दुनियाके अंदर हैं यह मुझे आजही मालूम हुआ ! अफसोस कैसी अज्ञानता ? (मुरारीलालजीतो अपने मकान पर चलेगये. उसी दिन, विश्वंभरनाथ रातके आठ बजे की रेलमें चुपकेसे बैठकर चल दिया और सुबह लश्कर (गवालियर) जा पहुचा. इधर " ब्रह्मानंद " ने इधर उधर बहुत ढूंढा आखर इंद्रप्रस्थ अपने बापको तार दिया कि, जलदी खबर दिजीये कि " विश्वंभरनाथ " घरतो नहीं आया ? यहांसे कल रातको भाग निकला है.

और स्टेशन मास्टर (पं० मुरारीलाल) से तकरार करने लगा कि तुमने ही " विश्वंभर " को कहीं भगा दिया ! (मगर मुरारीलालजी बिचारेको तो कुछभी खबर नहीं थी) चारां दिनतक " विश्वंभरनाथ " का कहीं पता न लगा, इधर एक दिन " ब्रह्मानंद " एक ऐसे जालमें फँस गये कि, नोकरीसे बरखास्त होने लगे थे मगर पं० मुरारीलालजीने अपनी चालाकीसे ऐसा बचा दिया कि, नौकरीसे बरखास्त तो नहीं हुए लेकिन नव्वे (९०) मिलते थे उसके पछत्तर (७५) रह गये ! और वहांसे बदल कर पूनामें जाना पड़ा.

अब इधर " विश्वंभरनाथ " को लश्करमें एक रोज दरबार वाडेके पासमें खडे हुए, रॉली ब्रदर्स एम. डी. पिटन् साहबकी लेडी " मिसिज स्टॉर " ने देखलिया मिसिज स्टॉरको " विश्वंभरनाथ " के भाग जानेका हाल मालूम था, क्यों कि, स्टेशनके हातेके साथ जुडवाँ ही इनका बंगला था, इस लिये परस्परमें अच्छी तरह जान पहचान थी, बलकि पंडित मुरारीलाल (स्टेशन मास्तर) की स्त्रीके साथ इनका व्हेनपना था. इस लिये एकदम टम्टम् से उतर कर अचानक ही पीछे से आकर " विश्वंभरनाथ " का हाथ पकड लिया.

मिसिस स्टॉर- तुम यहां कहां ?

विश्वंभरनाथ- (चमककर, आंखमें आंसू लाकर) आपको मालूमही है कि, मैं भागकर आया हूं.

मिसिस स्टॉर-ये टो मैं जानटी हुं कि टुम भागकर आया है मगर टुम ये बटाओ कि, यहां किसके घर और कहां ठहरा है ? टुमारा बाबुका टो पूनामें बडली होगया है! अब टुम यह बटाओ कि मैं टुमको घर भेजूं या पूना ?

(इतना कह कर वहांहीं खडे खडे मिसिज् स्टारने एक तार लिखकर सहीसको देकर)

वैल ! यह टारघरमें डे आओ !

(सहीस भी तार लेकर गया और देकर पीछे आया. यह तार पूने " ब्रह्मानंद " को दियाथा जिसमें लिखा

था कि–मुझे वच्चन लश्करमें मिला है जव तक तुम्हारा जवाव न आयगा वहां तक इसको मैं अपने कवजेमें रखती हूं. इधर " विश्वंभरनाथ " को धमका कर) डेखो ! मैंने टुमारे फाडर को टार किया है जव टक जवाव नहीं आयगा वहां टक टुमको कहीं जाना नहीं मिलेगा ! चलो मेरे साठ वंगले पर, टुमारा खाने पीने का इंटजाम " डेवीडयाल " जमाडार जो हमारे गोडाम का नौकर है वह करेगा) (इतना कहकर अपने साथ वग्घीमें विठलाकर जिस साहवके यहां आप उतरी हुईथी वहां ले आई.–" विश्वंभरनाथ " ने ये वारा दिन–एक धर्मशालामें रातको जा कर सो जाना और दिनभर शहरमें फिरकर गुजार देना इस प्रकार काटे थे, पासमें कुल सात रुपये थे."मिसिज् स्टॉर" के नाम तीन दिनके वाद पूनासे " ब्रह्मानंद " ने तारमें जवाव दिया कि–" अगर यह घरको जाना चाहता है तो वहां भेज दो अगर यहां आना चाहता है तो यहां भेज दो "

मि०स्टॉर–(विश्वंभरनाथ से) लो टुम्हारे फाडर का टार आया है कि " विश्वंभरनाट " को यहां भेज डो ! सो चलो टूमको टिकट डिलवाकर ट्रेनमें विठला डुं !

विश्वंभरनाथ– नहीं ! मैं पूने नहीं जाऊंगा ! अगर आप यहांसे भेजभी दोंगे तो मैं रास्तेसे कहीं इधर उधर उतर पड़ूंगा ! मि.- स्टॉरको भी यह कुल हाल मालुम था कि, इसका वाप इसको पढता है तो मारता है !)

मि. स्टॉर–अच्छा टो कहो कहां जाओगे ? क्या इस टरह फिर करही जिन्डगी गुजारोगे अभी टुमारा डश सालका उमर है टुम कुछ कमाभी नहीं सकटा नाहीं किसी की नौकरी कर सकटा है इस लिये इस हालटमें टुम को इस टौर पर डर बडर फिरना डुख डाई हो परेगा ! बेहटर है कि टुम अपने बापके पासही चले जाओ !

विश्वंभरनाथ–आपका फरमाना ठीक है मगर वहां रहनेसे भी जिन्दगीको खराबी है, वहां बापके पास रहकर कौनसी मुझे शिक्षा हासिल हो जायगी ! या कोई हुनर आ जायेगा ! बस मैंने अपने दिलमें यही धारा है कि, जो होना होगा सो होगा, मगर अब बापके पासतो नहीं जाऊंगा ! (इतना कह कर एका एक रो पड़ा) (विश्वंभरनाथके रोनेकी आवाज सुनकर अंदरसे दो मम जिनके यहां " मि. स्टॉर " ठहरी हुईथी आकर उसको प्यार देने लगी. मि० स्टॉरने " विश्वंभरनाथ " को हाथोंसे पकड़, प्यार दे कर पुचकारते हुए उन दोनो लेडियोंसे " विश्वंर " का कुल हाल " ब्रह्मानंद " के न पढ़ाने आदिका कहा ! यह सुन वेभी अफसोस करने लगी.)

मि० स्टॉर–(विश्वंभरसे) वैल मट रोओ ! टुम टीन रोज यहां ठहरो ! डेवीडयाल जमाडारके पास रोटी खाओ अपना साहब(एम.डी.पिटिन)आजके टीसरे रोज कालपीसे आयेगा टब उनसे बाट करके टुमको जहां ठीक लगेगा वहां भेज डिया जायेगा ! टुम किसी बाटसे घबराओ मट !

(इस तरह प्यार पूर्वक आश्वासन देकर चुप कराया तीन दिनके वाद ऐम. डी. पिटिन् आये और अपनी लेडीसे " विश्वंभरनाथ " के भाग आने संबंधी कुल हकीकत सुनी. यह हकीकत सुनकर- साहबकोभी वडा भारी क्रोध आया मगर अपनी लेडीसे अपनी भाषामें)

पिटन् साहब–

(१) You ought not to have kept him with you because he has come against the will of his parents, but it matters very little. When I shall go from here after a week, I shall take him with me to his house, but at first his parents must be informed.

मि० स्टॉर–

(२) (Showing the telegraph of " Brahmanand") When he first met me, I sent a telegraph to his father at that very time and this is the answer of it.

---

(१) इसको अपने पास, मा वापसे लड़कर भाग आनेकी वजहसे विलकुल नहीं रखना चाहिये था! मगर खैर मैं एक हफतेके वाद जाऊंगा तव इसको साथ ले जाऊंगा, लेकिन इससे पहले इसके मा वापको खवर दे देना चाहिये !

(२) (ब्रह्मानंदका तार दे कर) मुझे जिस वक्त यह मिला उसी वक्त मैंने इसके वापको तार दियाथा जिसका उत्तर यह है.

युगलकिशोर—अच्छा मैं जाता हुं और उसे तयार करके भेजता हुं !

(गरज रातकी गाड़ीमें दोनों सवार होकर अगले रोज लश्कर पहुंच गये और पिटिन् साहबके पास जा कर उन्होंने "विश्वंभर" की कुल हकीकत सुनी. "जयंतीसहाय" ने साहबको बहुतसा धन्यवाद दिया और "विश्वंभर" को साथ लेकर घरको आगये आतेही "शारदाचंद्र" ने "मुकुटविहारी" आदी (अपने दूसरे पोतों) के साथ इसको भी स्कूलमें भरती करादिया. स्कूलमें एक मान्यवर प्रतिष्ठित रईसके पुत्र "ज्योतिश्चन्द्र" के साथ "विश्वंभर" की दोस्ती यहांतक होगई कि "ज्योतिश्चन्द्र" के पिता रायसाहब और माताभी "विश्वंभर" पर पुत्रवत् स्नेह करने लगे ! उनको "विश्वंभर" के माता पिता संबंधी कुल हकीकत मालुम होगई थी ! इधर जब दो तीन महीने गुजरे तो "विश्वंभर" की चाची और ताईके अंदर भी विश्वंभर पर अकस्मात् द्वेष बढ़ने लगा ! हरएक तरहसे झाड़ पछाड़ पड़ने लगी ! इतना ही नहीं बलकि उसपर हाथभी उठने लगा ! और तरह तरहके ताने मिलने लगे ! लेकिन "विश्वंभर" ने अपने बाबा शारदाचंद्रजी, या काकाजी, या तायाजी किसीके पास चुं तकभी नहीं की ! मगर "ज्योतिश्चंद्र" रोजके रोज कुल कार्रवाई पुछ लेता था, और अपने मा बापको

जा सुनाता था. इतनेमें भावी प्रबल ! " शारदाचंद्र "
जीका स्वर्गवास होगया ! बस ! अबतो "विश्वंभर" बि-
लकुल निराधार होगया ! सिवाय " शारदाचंद्रजी " के
औरोंकी प्रीति उसपर लोक दिखावा मात्रही थी !

" शारदाचंद्र " के गुजरे बाद " ब्रह्मानंद " भी
घरको आया, आपसमें दोनोंही भाई (वंश गोपाल
और जयंतीसहाय) अपनी अपनी औरतोंके कहनेमें
लगकर अलग अलग होनेका विचार करने लगे ! आखिर
कार अपनी औरतोंके दबावमें आकर अपने भाविको
बिनाही विचारे दोनों भाई अलग २ हो गये ! "ब्रह्मा-
नंद " भी अपना हिस्सा लेकर अलग हो गया ! फिर
तो क्या था ? एक हवेलीमें तीन चुल्हे सिलगने लगे !

(कुछ दिनके बाद छुट्टी पुरी होनेपर)

ब्रह्मानंद- (विश्वंभरसे) बता मेरे साथ चलेगा या यहां
रहेगा ?

विश्वंभर-नहीं ! मैं यहां ही रहुंगा !

जयंतीसहाय-(ब्रह्मानन्दसे) इसको यहां छोडजाना अच्छा
नहीं ! क्योंकि इसकी सार संभाल लेने वाला यहां नहीं
जो इसका ख्याल रखे ! बाकी जो औरतें हैं उनसे
तो इसकी जानको क्लेशही क्लेश रहेगा ! मेरा रहना
यहां होताही कम है जो मैं ख्याल रखुं ! और तो सुबह
ही दुकानो पर जा बैठते हैं ! अरे अपनेही लड़कोंका
किसीको ख्याल नहीं है कि, कौन क्या पढ़ता है ? बस

इतना जानते है कि, १० बजे स्कूल जाते हैं और पां
बजे घर आते हैं ! भला वो इनकी क्या संभाल लेंगे
आगे तुमारी मरजी !

ब्रह्मानंद–भाई ! आपका कहना ठीक है, मै इसे ले जाताहूं
मगर यहांसे ज्यादाही दुःख रहेगा ! और अब इसक
मेरे पास ठहरना भी मुशकिल है ! बेहतर है कि आ
अपने पास रखलो ! मैं दश रुपये मासिक भेजता रहूंगा
मगर मैं इतना तो जरूरही कहुंगा कि, अगर इसको
पढ़ाओगे तो दुःख पाओगे ! हां दुकानका काम का
सिखाओ तो बेशक ! आगे आपकी मरजी !

जयंतीसहाय–अच्छा तो तुमारी मरजी ! छोड़ जाओ ! मै
तो अपने लड़के और इसमें कुछभी फर्क नहीं समझता !
लेकिन घरमें औरतोका काम ऐसाही वैसा है ! जो ब-
नेगा सो देखा जायेगा, तुम तो अपनी नौकरी पर
पहुंचो ! लेकिन " श्रीनाथ " को तो कुछ पढाना है
या उसकोभी इसकी तरह रखनेका विचार है ?

ब्रह्मानंद–भाई साहब ! आपने पढनेमें क्या सार समझा है,
यह मुझे नहीं मालूम पड़ता ! आप ख्यालतो कीजीयेगा
कि, अपने पिता " शारदाचंद्रजी " कुछ भी नहीं पढ़े
थे तोभी सारी उमर सुखी और स्वतंत्र रहे ! हमारे
तुमारेसे पैसाभी अच्छा पैदा किया ! आज उन्हींकी
बदौलत इन तीनो दुकानोंका काम ऐसा दृढ़ जम गया
है कि, उसका पाया हिले ऐसा नहीं मालूम देता !

अगरच आप दोनों भाई जुदे २ हो गये हो, तोभी आज दिन उनकी महेरबानीसे सुखी हो ! वरना ये दुकानेभी न चलती ! अगर मेरी तरहसे नौकरी पर होते तो दिखा देता कि, जो इज्जत आपकी इस वक्त है फिर कितनी रहती ! मैं क्या करूं ? लाचार हूं कि, मैंने दुकानका काम कुछ नहीं सीखा ! वरना इस खुसरी नौकरीको कभीका तिलांजली देदेता ! अगर मैं आजही नौकरी छोड़ दुकान पर बैठुं तो मुझे कोई रोकतो नहीं सकता मगर पढ़ जानेसे मेरे अंदर जंटल मैनीकी टैसका ऐसा समावेश हो गया है कि, मुझे कोट पतलून पहन दुकान पर बैठ सलमा सीतारा ले " कारचोवी " का काम करते वड़ीभारी शरम आती है ! यह मैं अच्छी तरहसे समझता भी हूं कि, जो सुख दुकानदारीमें है वह नौकरीमें (चाहे कैसे वडे औहदेकी हो) नहीं है ! मैं यह सामने देखता हूं कि, जो लोग विलकुलही पढे लिखे नहीं, इस वक्त दुकानदारीके सववसे लक्षाधिपति और करोड़ाधिपति वने नजर आते हैं ! वीसीयोंही आदमी उनकी टहल करते हैं और गादी तकीया लगाय वैठे रहते हैं ! हर किसी पर हुकम चलाते हैं ! और ' हमारे सिरपर कोई अपसर है ' इस वातकी भी उनको चिन्ता नहीं कि, ' नौकरीका वक्त होगया जल्दी चलो ऐसा न हो कि, देर हो जाये ! ' ज्यादा तो क्या ! जो सातसौ सातसौ तनखाह पाते हैं और जजसाहव कहाते हैं उनकोभी यह चिन्ता वनी रहती है तो जो उनके

हुं तेरे आपाजाकी आदतसे " तो इसमेंतो शक नहीं वेशक ! तुम मेरे आपाजीकी आदतसे लाचार हो औ आगेको लाचार ही रहोगी ! ! " मगर खैर मैं तुः बुला लुंगी " सो परमात्मा तुम्हें दुःखमें दुःख न दे क्यों कि, एक तो तुम मेरे बापकी आदतसे लाचार हो और फिर मेरीभी आदतसे लाचार होना पड़ेगा ! इस लिये परमात्मा वो दिन नाही दिखावे ! जिस दिन तुम को मुझे बुलानेका काम पड़े ! रहा " किसी वातसे घवडाना मत " सो अब घवडाहटको तो तुमही लेचली हो ! फिर घवडाऊंगा किससे ? और यह जो तूने कहा कि " अगर किसी चीजकी जरूरत पड़े तो अपने मामुंके अलावा और किसीको मत कहना " सो मरतो जाऊंगा मगर मामुसे तो एक दमड़ीभी मांगने न जाऊंगा ! भीख मांग खाऊंगा, लेकिन तुमसेभी एक पाई न मगाऊंगा ! वस मैंभी आजसे अब अपनी किसमत पर ही खेल खाऊंगा ! अब क्यों नाहक मेरे सिरपर हाथ फेर तकलीफ उठाती हो ? जाओ देर हो जायगी ट्रेनका वक्त आया, बग्घी वाला जलदी कर रहा है !

(" माया " विश्वंभर " के यह वचन सुन कर मन में बड़ी दुःखी हुई ! मगर जलदीके लिये कुछ बोल न सकी ! सब बग्घीमें बैठ स्टेशन पर पहुंचे और टिकट ले रेलमें बैठ विदा हो गये. इधर " ब्रह्मानन्द " के चले जाने पर "विश्वंभरनाथ " अपने मित्र " ज्योतिश्चंद्र "

के मकानपर पहुंचा और उससे कुल हकीकत कह सुनाई और " ज्योतिश्चंद्र " ने वह कुल हकीकत अपने मां बापसे कही.)

रायसाहब-(ज्योतिश्चंद्रका पिता विश्वंभरसे) देखो बेटा ! तुम किसी बातसेभी तकलीफ मत पाना, जैसा मन्न चाहे वैसा पहनो और खाओ, तुम " ज्योतिश्चंद्र " के साथ साथ पढो, अगर इससेभी आगे पढनेकी तुम्हारी मनशा होगी तो मैं तुमको पूरी मदद दूंगा ! बस ज्यादा क्या कहुं ? तुम मुझे और " ज्योतिश्चंद्र " की मांको अपने माता पितासे अधिक समझो. मेरे लिये जैसा " ज्योतिश्चंद्र वैसाही तूं, बस ! किसी बातसेभी फरक न समझना (इतना कहकर दरवाजे परसे एक चपड़ासी को बुलाकर कहा कि) तूं कोठी पर जा और " अल-ताफ़हुसैन " दरजीको साथ लेकर आ ! (यह सुन चपरासी दरजीको बुला लाया) दरजीके आनेपर " रायसाहब " ने जिन जिन कपड़ोंके शूट " ज्योति-श्चंद्र " के थे उन्हीं उन्हीं कपड़ोके आठ शूट एक दम " विश्वंभरनाथ " के लिये बनानेको दे दिये, और दरजीसे कहा कि, सब काम छोडकर पहले यह तयार करदो. दरजी भी बहुत अच्छा ! कहकर चला गया.

विश्वंभरनाथ-(रायसाहबसे) यह आपने जो मुझपर मेह-रबानी की सो तो ठीक, मगर इन कपड़ोंको पहन कर

जिस वक्त मैं घर गया उस वक्त मेरे तायाजी वगैरह क्या अपनी छाती माथा पीटकर हाय किये विना रहेंगे?

रायसाहब–बब्बन! अब तुझे उनसे डरे ठीक न होगा! अगर तेरेसे पूछे तो तूंने "ज्योतिश्चंद्र" का नाम ले देना और कहना कि मैं क्या करूं? मैं उसे वहुत हटाता हूं मगर वो कहता है कि, मैं अपने मित्रके लिये जो चाहे सो करूंगा! अगर आपको इसमें ठीक नहीं लगता तो आप जाकर "ज्योतिश्चंद्र" के वापको कहदीजिएगा. जिस वक्त वो मेरे पास आयेंगे तव मैं आपही समझ लूंगा! और मेरा तो विचार है कि इस आते ऐतवारके रोज जो वड़े वड़े रईस कमेटी घरमें इकट्ठे होते हैं उनके सामने ही तेरे संवंधमें "ब्रह्मानंद" की हालतका फोटो खैंच कर वतलाऊंगा, जोकि वह लोग जाने कि पढे हुओंकाभी यह हाल होता है!

विश्वंभरनाथ– ना साहब! ऐसा मत करना! क्यों कि उसमें तो पंडित सुन्दरसहाय जज्ज भी मेम्बर हैं और वो मेरे फूफाजी हैं अगर सुनेंगे तो मुझे ही बुरा भला कहें गे!

रायसाहब–हां! बस बस! अब कोई डर नहीं! मेरा और उनका रोजही अपने क्लबमें आना जाना होता है तूं ने देखा ही है कि वहां शामको रोज ही आकर वो टैनिस खेलते हैं. अब कुछ हरकत नहीं. वह तेरे फूफा-

जी हैं ? ओ ठीक" ! (वस इतनी वातचीत होते ही दश वज गये, सवने रोटी खाई स्कूलका वक्त हो जाने पर राय साहवने जान वूझके ही "ज्योतिश्चंद्र" से तो कहा कि विक्टोरिया वागमें होकर सीधा स्कूलको चला जा, और उसके (ज्योतिश्चंद्रके) लिये जो दो घोड़ की वागनेड गाड़ी स्कूल ले जानेको वाहर आकर खड़ी थी उसके लिये "विश्वंभर" से कहा कि) "वव्वन ! इस वग्घीमें वैठ कर दरीवेमें अपने तायाजीकी दुकानोंके सामनेसे होकर फव्वारेके रस्ते स्कूलको जाओ ! तेरी किताबें कहां हैं ? घर या दुकान पर ?

विश्वंभरनाथ-मैंने आज तक जोड़ीकी वाग (लगाम) हाथमें भी नहीं ली ! एक होता तो लेभी जाता ! और फिर दरीवेमे ! वाजार तंग है, आती जाती वग्घिओंसे संभालना वडा मुशकिल है ! ना साहव मैं तो पैदलही चला जाऊंगा. मेरी किताबें दुकान परही हैं.

रायसाहव-(पीठपर थापी देकर) अरे वाहरे डरू ! तूं जातो सही वैठ वग्घीमें ! मैं सहीसों को समझा देता हूं. तेरेसे छोटे छोटे भी लडके कैसी भीड़मेंसे अपनी असली चालमें वे धडक वग्घियां निकाल ले जाते हैं ! तो तूं धीरे धीरे सिर्फ वाग पकड़े हुए न ले जा सकेगा ? (ज्योतिश्चंद्र तो अपना वस्ता उसी वग्घीमें रखकर पैदल ही चलागया और राय साहवके इतना कहने पर "विश्वंभर" वग्घीमें वैठ गया और जोडीकी वागडोर

हाथमें लेली ! मगर कभी ऐसा काम न करनेसे हा
धूजने लगे ! रायसाहबने सहीसोंको अच्छी तरह समझ
दिया और कहदिया कि तुम घोडोंके बराबर रहना
" विश्वंभर " बग्घीको लेकर दरीबमें अपनी दुकान
सामने पहुंच कर बग्घी खडी करके नीचे उतरा औ
दुकानके अंदर जाकर अपने पढ़नेकी किताबें लेक
अपने ताया (जयंतीसहायसे) " मैं स्कूल जाता हूं"
इतना कहकर फिर बग्घीमें आ बैठा और बाग पकड़क
चल दिया ! " विश्वंभरनाथ " की यह हाल
देखकर, क्या ताया, और क्या काका, और क्य
चचेरा भाई सबके सबही बिचारमें पडगये कि " हैं
यह विश्वंभर ! " श्यामके वक्त फिर " विश्वंभर "
स्कूलसे छुट्टी हुए बाद उसी जोडीमें " ज्योतिश्चंद्र "
के साथ दरीबेमें पहुंचा और बग्घीसे उतर कर दुकानपर
बैठ गया और " ज्योतिश्चंद्र " अपने घर चला गया.

जयंतीसहाय–(विश्वंभरसे) अरे बब्बन ! यह तेरे लिये
अच्छा नहीं ! कि तूं एक दम इस तरह उन रईसोंके
लड़कोंके साथ मिल, अपनी बुनियादसे बाहर होकर
अपने भाई बिरादरोंको उंगली करनेका वक्त देवे !
आज तीसराही दिन " ब्रह्मानंद " को गये हुए हुआ
है कि, तूं कुछ और का औरही नजर आता है ! अरे !
ख्याल तो कर कि, वो जातके खत्री और हम ब्राह्मण !
उनके साथ इस प्रकारका खान पान कैसा ?

मुझे " मदन " " दीप " और, " मुकुट " ने आकर सुनाया है कि " ज्योतिश्चंद्र " के लिये घरसे रोज दो बजे उनका मिस्सर टिपन (सेव संतरा वगैरह फ्रूट और दाल सेव व मिठाई वगैरह खानेको) लाता है तो " ज्योतिश्चंद्र " उस वक्त " विश्वंभर " को बुला ले जाता है और दोनों ही मिलकर खाते हैं. बब्बन ! जरा सोचनेकी बात है कि, वो यह वर्त्ताव तेरे साथ क्या सारी उमर कर सकेगा ? क्या वह अपने बापकी मिलकतमेंसे तेरेको हिस्सा बांट कर देदेवेगा ? आज तूंने कई दिनसे खरचनेको पैसेभी नहीं मांगे ! बेटा ! " ब्रह्मानंद " एक आना रोज देनेके लिये मुझे कह गया है, सो सुवह स्कूल जाते हुए (वह तो स्कूल भेजनेको मना कर गया है मगर खैर) ले जाया कर, और रोटीभी घर खाया कर ! मैंने सुना है कि तूं कलसे घर रोटी खानेभी नहीं गया सो ठीक नहीं ! मेरा इतना ही कहना काफी होगा ! (हाथमें एक दुअन्नी देकर) जा उठ और घर जा !रोटी खा !

विश्वंभरनाथ—बस तायाजी साहब ! खतम है आपको मेरे लिये इस नसीहतसे ! मैं वहां ही रहूंगा जहां मेरा जी चाहेगा ! मैं वही करूंगा जो मेरे जीमें आयगा ! मुझे आपसे खर्च लेनेकी जिस दिन जरूर. पड़ेगी तो मांग लूंगा ! मैं जिसके साथ रहता हूं या जिनके यहां रहता हूं शहरमें वह विरलाही होगा जो उन्हें न जानता हो !

आप क्या ? और आपके भाई क्या ? सबको ह
उनकी खुशामत करते देखता हूं ! हां ! अगर मैंने
किसी चोर या ज्वारीके साथ दोस्ती की हो तो कहो !
मुझे इस बातका रोना आता है कि, आज मुझे दशव
साल पूरा होने लगा मगर मैं कुछ नहीं पढ़ा ! सचत
यह है कि, थोडेही अरसेमें मुझे " मदन " के बराबर
होते देख आपको ईर्षा हो रही है ! तायाजी ! आप
खामोश होकर बैठियेगा ! न मुझे आपकी परवाह है
और नाही बापकी है ! यहभी सिर्फ आपका मुझपर प्रेम
है इस लिये दुकानपर आता हूं कहो तो आगेको यहांभी
न आया करूं !

(" विश्वंभर " की इस तरहकी बातोंको " जयंतीसहाय " नीची गर्दन डाले सुनते रहे, मगर मूंसे कुछ नहीं बोले ! बोल कर बनाते भी क्या ? खैर एक घंटेके बाद उधर " रायसाहब " ने उसी बागनेड गाडीमें घोडोंकी दूसरी जोडी जुडवाकर कोचवानसे कहा कि, जाओ " शारदाचंद्र " की दुकानपर बग्घी ले जाओ और यह लो चिठ्ठी वहां पर " विश्वंभरनाथ " होगा उसको देदेनी. " रायसाहब " के हुकमको सुनतेही साईसनेभी गाडी लेकर " शारदाचंद्र " की दुकान पर आके चिठ्ठी " विश्वंभरनाथ " को दी. " विश्वंभर " चिठ्ठीको बांचतेही दुकानसे उठकर बग्घीमें बैठ जोडीकी बाग मोड़ चल दिया ! थोडीही देरमें " रायसाहब " की

कोठी पर आ पहुंचा. कुल हकीकत उनसे कह सुनाई जिसको सुनकर)

रायसाहब–भाई ! एकदम उनसे तडाक फडाक करना ठीक नहीं ! मगर खैर जो हुआ सो हुआ ! रोटी खाई कि नहीं ?

विश्वंभर–नहीं ! मैं घर गया नहीं ! (पासमें खड़ी हुई ज्योतिश्चंद्रकी मां)

चंद्रप्रभा–(विश्वंभरसे) अच्छा तो चल अभी "ज्योतिश" खाही रहा है (यह सुन " विश्वंभर " उठा और हाथ पैर धो चौकेमें " ज्योतिश्चंद्र " के पास जा बैठा. मिसरानीने थालमें खानेको परोस कर दिया, दोनोंही आनंदसे खाने लगे. इतनेमें " मैन्युअलपाल " जो रोज " ज्योतिश्चंद्र " को पढ़ाने आया करते थे, आ पहुंचे. आप " क्रिश्चियन " थे, हाईस्कूलमें डेढसौ (१५०) रुपये महीने पर सैकिन मास्टर थे, इनको "रायसाहब" " ज्योतिश्चंद्र " को शामको सात बजेसे नव बजे तक प्राईवेट पढ़नेके लिये पैंतीस रुपये माहवारी देते थे. मास्टर साहबके भी दो लड़के " ज्वैनपाल " और " ईशपाल " साथही आया करते थे. क्यों कि, ये ज्योतिश्चंद्र " के हम जमाती थे.)

रायसाहब–(मास्टरसे) मॉस्टर साहब ! " विश्वंभरनाथ" इन तीनोंके साथ पढ़ता तो है, मगर अब आप इसपर

जरा ज्यादाही ख्याल रखेंगे तो वेहतर होगा !

(इतना कहकर " विश्वंभर " की कुल हिस्टरं मास्टरजीसे कह सुनाई मास्टरजी भी एक वडे लायव और रहम दिल थे. "विश्वंभर" की हैरत भरी हालतकं सुनकर " रायसाहव " से)

मॉस्टर–रायसाहव ! शावास है ! धन्य है ! आपको जो इर पर अपने लडकेसेभी वढकर आप महब्बत रखते हैं, ि अपनी तरफसे किसीभी तरहकी कसर नहीं रखूंगा वस अगर यह इसी तरह महनत करता रहा तो मैं अ वके इसको एकदम ' डवल परमोशन ' दिलाऊंगा.

(मास्टरका यह कहना सुनते ही " ज्योतिश्चंद्र ' और " ज्वैनपाल " भी वोल उठे कि, हमभी डवल परमोशन देंगे !

(दो जमायतोंका एकदम इम्तिहान देनेका नाम डवल परमोशन है.) " ज्योतिश्चंद्र " की उमर दश वर्षकी और " ज्वैनपाल " की सात वर्षकी थी. गरज तीनों हीं पढ़ते रहे " विश्वंभर " ने घर जाना बिलकुल छोड दिया, मगर ताया " जयंतिसहाय " से स्कूल जाता हुआ मिल जाया करता था. ! " विश्वंभर " को इस प्रकार सुखी देखकर घरके सबही जलने लगे ! इसी लिये स्कूलमें आये हुए चचेरेभाई किशोरी, मदन,मुकुट, दीप, चंद्रसेन आदिकोंने भी " विश्वंभर " के साथ

बोलना छोड दिया ! इसी तरह आठ महीने बीते बाद दिसंबरमें सालाना इम्तिहान शुरू हुआ, जिसमें " ज्योतिश्चंद्र " " ज्वैनपाल " और " विश्वंभर " यह तीनोंही डबल परमोशन देकर चौथी जमातमें चढ़गये ! यह बात जब " जयंतीसहाय " को मालूम हुई तो वे स्वयं आकर "रायसाहब" को मिले, और "विश्वंभर" संबंधि बहुत कुछ बात चीत करके कहा कि, आपकी इसपर बड़ीही मेहरबानी है ! मगर इसको इतना तो जरूरही समझाना चाहिये कि, रोटी घर जाकर खा आया करे ! फिर भले यहांपर सारा दिन और रात रहे ! और तो कुछ नहीं, मगर बिरादरीके लोग तरह तरहकी बातें करते हैं ! आप दाना हैं ! आपकेही कहनेसे मानेगा, हमको तो यह कुछ नहीं समझता ! जिस किसीने एककी चार सुननी हों वो इसे समझावे !

रायसाहब-(जान बुझकर) हैं ! क्या यह घर नहीं जाता ? रोटी यहांही खाता है ? भाई ! मुझे तो मालुम नहीं ! " ज्योतिश्चंद्र " जाने ! यह इसका दोस्त है ! बच्चे हैं इनको क्या कहा जाय ? मुझे तो आपसमें हिल मिल कर पढ़ते नजर आते हैं ! मास्टर " मैन्युअल पाल " भी तारीफ ही करते हैं ! अबके जो इन्होंने डबल परमोशन दिया है यह औरभी खुशीकी बात है (विश्वंभरसे) अरे " विश्वंभर " ! ये तेरे तायाजी क्या कहते हैं ? तूं घर रोटी नहीं खाता ?

विश्वंभर–मैं घर रोटी नहीं खाता तो क्या जंगलमें खा हूं ? मालूम होता है कि, इनको भी मेरे बाप वा कसर है ! अथवा भांग पीकर आए होंगे ! "बुलाकी अचार वालेके यहांसे निंबू मंगाकर खिलाओ ! वरन अभी कुछ औरका औरही कह बैठेंगे !

रायसाहब–(डपटकर) ओ यू डेम फूल ! क्या अपने तायाको ऐसे बोलना चाहिये ? इससे मालूम होता है कि, तू बडा शैतान हो गया है !

("जयंतीसहाय" "रायसाहबसे" प्रणाम कर घरको आये और "ब्रह्मानंद" को कुल समाचार लिखभेजा ! "ब्रह्मानंद" ने भी उनके लिखनेपर कुछ गौर न किया ! बलकि लिख भेजा कि जो उसकी मरजीमें आये सो करने दो ! मैं आकर क्या बनाऊंगा ? कभी मैं आकर साथभी ले जाऊं तो अब वो मेरे पास नहीं ठहरेगा ! इत्यादि.

१५।

परमोशन "रायसाहब" की अपने ऊपर आगेसे और "जै मेहरबानी है यह समझ कर "विश्वंभर" हीं पढ़ते रहेमें बहुत खुल गया, दिनपर दिन दिया, मगर स्वभाव बढने लगा और उसके मनमें हुआ मिल जाका डर न रहा ! सच है ! बचपन सो र सुखी देखसमें विवेक और विचार कहां ? अब समें आपने ताया और काका जात भाइयोंको आ तो एकही दफा दुकानके सामने

से बग्घी में बैठ कर निकलता था अबतो स्कूल जाना जबभी जोडी (बग्घी) में वहांसे जाना और आना जबभी जोडीमें वहांसेही आना, शामके वक्त फिरनेको जाना जबभी जोडीमें बैठ दुकानके सामने होकर जाना! ये लोग " विश्वंभर " को इस तरहके मौज शौकमें देख कर आगेसेभी ज्यादा जलने लगे ! और हरएक तरहके ताने और बोलियां मारने लगे ! इनकी इस प्रकारकी ईर्षाको देखकर " विश्वंभर " ने भी क्रोधमें आकर इनको कुछ बुरा भला बक मारा ! मगर यह बातें रायसाहबको मालूम नहीं हुई !

एक दिन " विश्वंभर " के काका "वंशगोपाल" को बड़ा क्रोध आया ! वो " विश्वंभर " के फसानेके इरादेसे आठ आनेके भुने हुए चने लेकर ठंडी सड़क पर आ खड़ा हुआ ! इतनेमें सामनेसे आगे आगे बाई-सीकल पर " ज्योतिश्चंद्र " और पीछे बग्घीमें घोडोंकी चालको तेज किये हुए " विश्वंभर " को आते देख, सड़कके किनारे खड़ा होकर, भीख मांगने वाले कंग-लोंको आवाज दी कि, लो रे चने ! उसकी आवाज सुनते ही एकदम इधर उधरसे २०-२५ कंगले इकट्ठे होगये और अपना पल्ला फैला कर " लालाजी ! मुझे ! पंडितजी ! मुझे ! तेरे बच्चे जियें मुझे ! " इस प्रकार बोलते हुओंको " वंशगोपाल " एक एक मुठी चनोंकी बांटने लगा और बांटते बांटते सड़कके बीचमें आ गया,

इतनेमें " ज्योतिचंद्र " तो नाईमीकल्को किनारेसे ले कर निकल गया और " विश्वंभर " जिस वक्त पासमें आया उस वक्त वग्गीके पीछे खडे हुए दोनो सहीसोंने " बचो, बचो ! " " हट जाओ, हट जाओ " बहुत पुकारा लेकिन " वंशगोपाल " चने बांटना हुआ आगे से न हटा, इस लिये वो कंगलेभी बीचसे न हटे. अपनी चालमें एक दम छुटे हुए घोड़ोंकी वागडोरीको " विश्वंभर " ने अपनी ताकतके मुताबिक बहोत खींचा मगर वे न रुके, जब पीछे खडेहुए सहीसोंने देखा कि इनसे घोड़े नहीं रुकते तब दोनोंही जने कूदकर आगे आनेको दौंडे, इतनेमें " वंशगोपाल " ने बहुतसे इकट्ठे हुए कंगलोंको जान बुझकर एकदम ऐसा जोरसे धक्का मारा कि उनमेंसे दो आदमी और एक बुढ़िया उन घोड़ोंके पैरोंमें आ पड़े ! मगर सहीसोंने एक दम घोड़ोंको आगे होकर रोक लिया ! उन कंगलोंको वग्गीके नीचे आया [illegible]र " विश्वंभर " ने वाग खींचते हुए बड़े जोरसे चीख [illegible]पारी, उसकी चीखको सुनकर " वंशगोपाल " के मुं[illegible]र एक दम यह आवाज निकली कि, " मर सुसरे ! [illegible]ले और ले वग्घीमें बैठनेका स्वाद ! " इसवक्त " गुरु मुख[illegible]सिंह " नामा एक आदमी एक दुकान पर बैठा हुआ इस [illegible] कार्रवाईको देख रहा था, उसने उठकर " वंशगोपाल " [illegible]को पकड़ पीठपर थप्पड़ ठोक कहा कि अबे ! क्या बोला [illegible]? फिर तो बोल ! यह भी जानता है कि, यह लड़का कि[illegible]सका है ? क्या रायसाहबको

नहीं जानता ? (यह यही जानता था कि, ये लड़का "रायसाहब" का ही है. क्यों कि, यह रोज उनकेही साथ और उन्हींकी बग्घियोंमें आता जाता था, उसे यह मालूम नहीं था कि, यह इसीके भाईका लड़का है.)

विश्वंभर- (अपने काकाको पिटा जाता देख उस थप्पड़ मारने वाले से) ए ! खबर दार ! अब हाथ उठाया सो उठाया, मगर अब संभालना !

गुरु मुखसिंह-वाह साहब वाह ! अच्छी कही ! मैं अच्छी तरह जानता हूं कि, इसकी जबानसे आपके लिये जो गाली निकली है वो अगर आप सुन पाते तो हरगिज भी मुझे न धमकाते ! आप इसे गरीबोंको चने बांटते देख धर्मी जान कर मुझे धमकाते हो ! यदि आप इसकी हिमायत न लो तो अभी इसको कोटवालीमें ले जाकर बता दूं कि, चने किस तरह बांटे जाते हैं !

("ज्योतिश्चंद्र" ने आते ही, बड़े ऊंचे ऊंचे "हाय मारडाला" "हाय मारडाला" इस प्रकार चिल्लाते हुए उन तीनों कंगलोंको चुप कराया, बहुतसे लोग इकट्ठे हो गये, उस जमातको देख सहीसोंने "विश्वंभर" से कहा कि, आपतो बैठ कर चलिये, ये आपही सुलट लेंगे ! कौनसी किसीकी जान निकल गई है ! यह सुन-तेही "विश्वंभर" तो बग्घीमें बैठ कर चल दिया. इतनेहीमें दो तीन सिपाही जो दूर दूर अपने पहरे पर

खडे थे आ गए, उनको " गुरु मुखसिंह " न चन बांटने वाले (वंशगोपाल) का हाथ पकड़ा दिया ! और कहा कि, यह सडकके बीचमें खड़े होकर चने बांटता था (बग्घीमें जाते हुए विश्वंभरकी तर्फ उंगली करके) इन्होंने बहुत पुकारा, सहीसोंने बडी आवाज़ दी, मगर यह न हटा, और इसने कंगलोंको जान बुझ कर घोड़ोंकी तर्फ धक्का दिया. गनीमत समझो कि बग्घी-का पहिया आगे नहीं बढ़ा वरना इन तीनोंही कंगलोंका काम हो लिया था ! उस वक्त बाजारके सब लोगोंनेभी इसी तरहसे कहा ! यह सुन " वंशगोपाल " का हाथ पकडकर सिपाहियोंने कहा कि—लालाजी चलो सीधे कोतवालीमें, उन तीनो कंगलोंको भी साथ ले लिया. सब कोतवाली को चल पड़े, उनमेंसे एक जो बुढ़िया थी, उसके पैरकी एडी पर घोडेकी टाप पडनेसे कुछ चौट आई थी, सो वह चलते हुये बहुतही चिल्लाती थी ! सामनेसे " डाक्टर हेमचन्द्र " आ रहे थे, उन्होंने पूछा कि, यह क्या मामला है ? एक सिपाईने कहा कि, ये तीनों " रायसाहबकी जोडी (बग्घी) के नीचे आगये ! यह सुन उन्होंने कोतवाली जानेसे रोका, कंगलोंको पांच पांच रुपये और उस बुढ़ियाको दश रुपये देकर लौटा दिया और अपने दवाखानेमें ले जाकर उस बुढ़ि-याके पैरको धोकर दवाई लगा दी, और सिपाईयोंके हाथसे पंडितजी (विश्वंभरके काका वंशगोपाल) कोभी छुडवा दिया ! यह लीला देख पंडितजी मनही मनमें

पछताते और हाथ मसलते अपनी दुकान पर आ बैठे ! सच कहते हैं कि, जो दूसरेका बुरा चाहता है वह अपनाही बुरा कर बैठता है " जो खाडा खोदे सोही पड़े ! "

यह कार्रवाई जब " रायसाहब " को मालूम हुई तो उन्होंने उसी वक्त एक आदमीके हाथ बीस रुपये डाक्टर हेमचन्द्रको भेज दिये ! और एक पत्र लिख भेजा कि " आपने बड़ी मेहरबानी की ! मैं आपका ऐसानमंद हूं ! " अगले रोज खुद मिलकर कुल कार्रवाई कह सुनाई कि यह " विश्वंभर " के लिये उसके काकाने जानकर की थी ! तब उन्होंने कहा कि, अब " विश्वं-भर " को होशियार कर देना ! क्यों कि जिनका उस-के लिये ऐसा बुरा ख्याल हो रहा है वो कभी न कभी अपना दाव खेले बिना न रहें गे !

इधर " विश्वंभर " के दिलमें उस वक्तसे कुछ ऐसा दहल बैठ गया कि, खुद बागडोर पकडकर बग्घीमें बैठनेका कभी इरादा नहीं होता था, लेकिन " रायसा-हब " ने उसके इस बुजदिल ख्यालको निकाल कर उसको इतना निडर बना दिया कि भरे बाजारमेंसेभी निडर बग्घी भगानेका उसमें हौसला खुल गया ! घोड़ेपर चढ़नाभी अच्छी तरहसे जान गया, एक दिनका जिकर है कि " विश्वंभर " घोडे परसे गिर पडा,

हाथकी कुंहनी उतर गई और सारा बदन छिल गया ! "रायसाहब" ने उसी वक्त डाक्टर हेमचन्द्रको बुला कर दिखलाया, उन्होंने कहा कि, घबडानेकी बात नहीं है, यह दो हफतेमें ठीक हो जायगा, इस तरह कह कर हाथकी हड्डी चढ़ाकर बांध दी. इस दशामें "विश्वंभर" का स्कूल जाना कुछ दिन के लिये बंद हो गया ! पांचे सात दिन तक "विश्वंभर" को "मदन, दीप, किशोरी" आदिने स्कूलमें न आते देखकर अपने बापको जाकर कहा कि, कई दिनसे "ज्योतिश्चन्द्र" तो स्कूलमें आता है, मगर "विश्वंभर" नहीं आता ! यह सुन "जयंतीसहाय" कहने लगे कि, मैंने भी कई दिनसे उसको दुकानके आगेसे निकलते नहीं देखा ! न मालूम क्या कारण ?

अगले रोज जयंतिसहाय" ने रायसाहब" के यहां जाके ड्योढी पर पूछा "विश्वंभर" कहां है ?

दरवाजे पर बैठे हुए एक चपडासीने कहा कि, अंदर रही हैं ! यह सुन "जयंतीसहाय" ऊपर आये कि, सामनेही कमरेमें पलंग पर "विश्वंभर" को लैटे हुए देख, पासही एक कुरसी पर बैठ गये ! इतनेहीमें "डाक्टर हेमचन्द्र" भी अपने आनेके नियमित समय पर आये, और हाथका पाटा खोलकर दवाई लगाई और "जयंतीसहाय" को उन्होंने सब हाल मालूम

कर दिया, मगर " विश्वंभर " कुछ नहीं बोला ! थोडी देर ठहर " जयंतिसहाय " उठकर चले गये !

इधर " विश्वंभर " के इम्तिहानमें सिर्फ दो महिने रह गये थे, अबकी बार भी इसने डवल परमोशन देनेका विचार कर रखा था, यद्यपि पास होनेका यकीन तो नहीं था तोभी डवल परमोशन देनेका नाम लिखाही दिया, राजी हो जाने पर स्कूलमें जाने लगा, मेहनत करके " ज्वैनपाल " "ज्योतिश्चंद्र" के साथही इम्तिहानमें बैठ गया. आखिर तीनोंही पास हो गये ! (चौथी और पांचवीं क्लासमें पास होकर छठीमें दाखिल हुए.) इम्तिहानमें पास होनेके बाद " रायसाहब " ने "ज्योतिश्चन्द्र " और " विश्वंभर " को कहा कि, तुम एक महीनेके लिये मेरठ जा आओ ! " रायसाहब " के इस हुकमको मंजूर करके, हवा फेर करनेके लिये " ज्योतिश्चंद्र " और " विश्वंभर " दोनोंही मेरठ को गये. वहांपर हाईस्कूलके हैड मास्टर, कालपीके रहने वाले बाबू "चंद्रशेखर" थे. उन्होंने "विश्वंभर" को देखकर उसकी कुल पिछली स्थिति और मा बापका बर्ताव सबकुछ किसी दूसरे आदमीसे सुना और इन्द्रप्रस्थ जाकर "रायसाहब" से कुल बात चीत पूछी, मगर इस तहकीकातका सबब उन्होंने किसीसे नहीं कहा ! फिर जब मेरठ आये तो एक दिन " विश्वंभर " फिरनेके लिये बाहर जाता था उसको रास्तेमें रोक कर.

चंद्रशेखर–क्या तुम्हारा नाम " विश्वंभर नाथ " है ?

विश्वंभर–जी हां !

चंद्रशेखर–मैंने सुना है कि, तुम ढाई सालमेंही छट्ठी जमातमें आये हो !

विश्वंभर–मैं क्या ? चौदां लडकोंने डबल परमोशन दिया है ! इसमें क्या तअज्जुबकी बात हुई ?

चंद्रशेखर–क्या तुम एक दफा पांच मिनटके लिये मेरे मकान पर चल सकते हो ?

विश्वंभर–क्या काम है ?

चंद्रशेखर–चलने पर तुमको आपही मालूम हो जायेगा !

विश्वंभर–(सहीस से) ठहर तूं यहां ! मैं आता हूं ! (मास्टरसे) चलिये साहब ! (चलते हुए) आपका इसम्‌शरीफ ?

चंद्रशेखर–(मुसकराकर) मेरा नाम " चंद्रशेखर " है. (दोनों जने मकानके दरवाजे पर पहुंचे, मास्टरने " विश्वंभर " को बाहर खडा कर दिया, आप अंदर जाकर अपनी मां और स्त्रीको साथ लेकर बाहर आये.

चंद्रशेखर–(अपनी मां–गंगासे " विश्वंभर " की तर्फ इसारा करके) मां ! यह वही है जिसके लिये मैंने तुझसे कहा था !

गंगा- (विश्वंभरसे) वेटा आओ आगे और इस कुरसी पर वैठो !

विश्वंभर- जी वहुत अच्छा ! (कहकर वैठ गया. दूसरी कुरसी पर मास्टरजी और उनके सामनेही नीचे उनकी मां और स्त्री भी वैठ गयीं.)

गंगा- वेटा ! तुम्हारा नाम क्या है ?

विश्वंभर- मेरा नाम " विश्वंभर " है !

गंगा- अगर तुम्हारा वाप तुमको छे सात वर्षकी उमरसे ही पढ़ना शुरू कराता तो अव तक कितना पढ़जाते ?

विश्वंभर- (यह सुन मनही मनमें हैं ! इनको मेरे घरका पता कैसे ?) प्रगट- इस पूछनेसे आपका क्या मतलव है ?

गंगा- तुमको अगर " रायसाहव " अपने यहांसे जवाव दे देवे तो तुम क्या करो ?

विश्वंभर-आपको, मुझसे इन वातोंके पूछनेका मतलव क्या है ? सो कहो !

गंगा- भला, तुम्हारा " दादा " (शारदाचंद्र) जो तुम्हारे नाम पर छ हजार रुपया वंकमें जमां करा गया है, अगर तुम्हारा " ताया " या " काका " न देवें तो तुम क्या करोगे ?

विश्वंभर– (झुझलाकर) आपको क्या ? (उठ कर चल पडा कि, मास्टरजीने हाथ पकड कर फिर विठा लिया.)

गंगा– अरे वावा ! हम तुम्हे मारते थोडेही हैं अच्छा यही कहो कि, तुम्हारा " वाप " तुम्हारे लिये जो दश रुपये महीना भेजता है वह तुमको तुम्हारा ताया देता है, या कि, नहीं ?

विश्वंभर– इससे आपको क्या ?

गंगा– वेटा ! तूं तो वांकाही वांका बोलता है ! (अपने लड़के चंद्रशेखरसे) लडका तो ठीक है वाकी रही इसकी स्थिति सो तूं जान !

चंद्रशेखर– अरि ! उस वातकी कोई चिंता नहीं, मैं कुल बंदोबस्त " ब्रह्मानंद " से मिल कर करलूंगा ! मुझे उम्मेद है कि " रायसाहव " अब इसको हाथसे नहीं छोडेंगे ! अगर छोडेंगेभी तो अब पूरा लिखा पढाकरही छोडेंगे ! मेरेको उम्मेद नही कि, " ज्योतिश्चंद्र " इसको अपनेसे जुदा होने देवे ! " रायसाहव " मुझसे साफ कहचुके हैं कि, मैं अपने जीते जी अपनी जबानसे इस को अपने घरसे चले जानेके लिये कभीभी नही कहूंगा ! और आठ नौ सालकी देर है कि, यह स्वयं ही वालिग हो जावेगा वरना हम बैठे ही हैं !

गंगा- अच्छा तो एक मिठाईकी टोकरी लाओ, खाली हाथ भेजना मुनासिब नहीं !

(यह सुन मास्टरने नौकरको भेजा वह थोडीही देरमें मिठाईकी टोकरी ले आया. मास्टरकी मां ने उठकर " विश्वंभर " के सिरपर प्यार दिया, हाथमें टोकरी और दो रुपये देकर बोली कि, लो बेटा ! अब जाओ.

विश्वंभर- (टोकरी और रुपये जमीन पर रखके) आप न मालूम कैसे हैं ? मैं आपसे पूछता हूं कि, आप मेरे कौन हो ? और मुझे कैसे जानते हो ? और यह टोकरी किस बातकी देते हो ? (इतना कहतेही एक दम हाथ छुडा कर चला, सडकपर पहुंच बग्घीमें बैठ कर "रायसाहब" की मीलमें जा पहुंचा और " ज्योतिश्चंद्र " को सब हकीकत कह सुनाई !

थोडी ही देरके बाद " चंद्रशेखर " का भेजा हुआ एक कहार टोकरी लिये हुए वहांही आ पहुंचा ! " ज्योतिश्चंद्र " के पूछनेसे उसने कहा कि मास्टर जीका विचार अभीतक क्या आपको मालुम नहीं हुआ ? अजी वाहजी वाह ! " मास्टरजी " तो इनके लिये इन्द्रप्रस्थभी जा आये ! इनका कुल हालभी पूछ आये हैं ! अबतो उन्होंने सिर्फ अपनी मां को और स्त्रीको, इन्हें दिखलाना था इस लिये इनको घर बुलाकर ले गये थे ! उनका इरादा है कि, अपनी लड़कीकी मंगनी

रहने दोगे तो आपके पासभी अब मै एक घडी न रहुं-
गा ! (जरा जोशमें) और रहना तो क्या आप लोगोंकी
शकल तक भी न देखूंगा ! पिताजी ! मैने पढ़ा है कि,
मां वापका बड़ा अदव करना चाहिये ! और उनकी हर
तरहसे टहल करनी चाहिये और जो वो कहें उनके
हुकमको सिर माथे पर लेना चाहिये ! इस लियेही मुझे
आज आपके साथ इस वे अदवी और वत्तमीजीसे पेश
आना पड़ा है ! में आपका ऐसान सारी उमरमें भी न
भूलूंगा कि, जो आपने मुझे सारी उमर मूख रखनेके
लिये, न खुद पढ़ाया और नाही पढ़ने दिया ! मै पर-
मात्मासे प्रार्थना करता हुं कि, मेरे वापके जैसा जहांनमें
भूलकर भी किसीका वाप मत हो ! ! !

ब्रह्मानंद– (विश्वंभरकी वातोंको सुनकर अपने वड़े भाई
“ जयंतिसहाय ” से) देखा भाई ! और सुना !

जयंतिसहाय– तुमही देखो और सुनो ! अपने हाथ कांटे
वीज अब मुझे क्या पूछते हो ?

ब्रह्मानंद– (विश्वंभरसे) तुझे मेरे साथ पूने चलना होगा !

विश्वंभर– बेशक ! मुझे आपके साथ पूने चलना होगा !

ब्रह्मानंद–बस तो जा उस चपड़ासीको कह दे कि, चला
जावे !

विश्वंभर– वस तो जाता हुं उस चपड़ासीको कह देता हुं कि चला जावे ! (उठकर बाहर गया और चपड़ासीसे) भाई ! इस वक्त तो तूं चला जा और " ज्योतिश्चंद्र " को कहना कि, मै कल सुवह आऊंगा ! (उसको तो इतना कहकर रवाने किया और आप अंदर जाकर अपने वापके पास आ वैठा !)

ब्रह्मानंद– (हंसकर) अच्छा अब यह बता कि, तूं क्या पढ़ा है ?

विश्वंभर–जो अपने साथ भला करे उसके साथ बुरा करना और जो बुरा करे उसके साथ भला करना ! और आप जैसे मांवापोंको सुवह उठकर प्रणाम करनेके बदले पांच जूते लगाना ! अगर हिम्मत न हो, तो मन मानी जितनी बने उतनी गालियां देना ! (ब्रह्मानन्दने यह सुन, हाथसे पकड एक तमाचा मारा, दूसरा मारनेके लिये हाथ उठाया ही था कि " विश्वंभर " ने कहा) अरे तमाचोंसे क्या बनेगा ? कोई लकडी हाथमें लो ! लकडी ! (इतनेमें बाहरसे आवाज आई) " ब्रह्मानंद " हैं क्या ? (बाहर जाकर एक आदमी को देखा)

ब्रह्मानंद– क्यों भाई ! क्या है ?

आदमी– आपको कोतवाल साहब बुलाते हैं !

ब्रह्मानंद– क्यों ?

आदमी- ये तो मुझे क्या मालूम कि क्यों ? (अंदर जा कपडे पहन नकलपडे, " विश्वंभर " भी साथही चलने लगा तो.)

ब्रह्मानंद- नहीं तूं मत चल ! बैठ घरमें !

विश्वंभर- (रोताहुआ) बस अब चाहे जान ले डालों एक घडीभी तुमसे अलग न होऊंगा ! (बहुत समझाया मगर न माना, दोनोंही कोतवाल साहबके मकान पर पहुंचे)

ब्रह्मानंद- (कोतवाल साहबको सलाम करके आगे एक कुरसी पर बैठ गये " विश्वंभर " को आंखोंमें आंसू भरे हुए देखकर)

कोतवाल- (विश्वंभरसे) क्यों ! क्या बात है ? (कोतवाल साहबके पूछने पर " विश्वंभर " ऊंचे ऊंचे रोने लगा. " विश्वंभर " को इस प्रकार रोते देख, उठकर कोतवाल साहबने अपनी गोदमें बिठालिया और अपने रुमालसे " विश्वंभर " के) आंसू पोंछते हुए " ब्रह्मानंद " से

अफसोस है तुम्हारी समझपर ! भाई ! तुमने अपने बाप " शारदाचंद्र " की इज्जतको बहुतही बढ़ाई है ! वाह वाह ! क्या कहना है ? इस बाबु पने पर ! बस अब मैं तुमसे कुछभी नहीं पूछता और कहता, फक्त इतनाही

कहता हूं कि, इस बच्चेपर हाथ मत उठाना ! तुम्हारे दिलमें अगर यह घमंड हो कि, मेरा लड़का है मैं जो चाहे सो करूं ! तब तो कुछ हरकत नहीं जो होगा सो देख लिया जायेगा ! मुझे कुल हकीकत मालूम है, यह यही लड़का था जो आज इतना भी पढ़ा ! शाबाश है " रायसाहब " को जिन्होंकी मेहरबानीसे आज ये मेरी गोदमें नजर आता है ! क्या शहरमें औरभी तो लड़के हैं हीं ! इस लिये बेहतर है कि, इसको यहां पढ़ने दो ! अगर अपने साथही ले जाना है तो वह पढ़ाना ! मुझे सिर्फ इस बातकाही तरस आता है कि, अगर इसकी मां बचपनमें न मरी होती तो, इसपर जो तुम्हारी इस वक्त बेवकूफीकी नजर है हरगिज न होती !

ब्रह्मानन्द- (अपने मनही मनमें) हैं ! इसपर इनकीभी ऐसी नजर है ! बस अब मुझे इसको साथही ले जाना ठीक है, इसके इन्द्रप्रस्थमें रहनेसे किसी न किसी वक्त हमें जरूर मुश्किल हो पड़ेगी ! (प्रगट) अजी साहब ! यह मेरे सामने बुरी तोरपर बका, इस लिये मैंने हाथ उठाया, वरना मैं तो इससे हंस हंस कर प्यार पूर्वक पूछता था ! आप फरमाइयेगा कि, यही काम था या और कुछ ?

कोतवाल- कुछ औरभी खानगी बात है, चलिये अंदर चलकर सुनाऊं !(ब्रह्मानन्दके साथ अंदर जाकर बहुत

देर तक बातें की, मगर न मालूम कि क्या थी. "विश्वंभर" को साथ ले "ब्रह्मानंद" घर आये. और रातकोही उसको साथ लेकर पूने चल दिये ! अब तो "विश्वंभर" हर वक्त उदास रहने लगा, लिखना पढ़ना छूट गया, इस तरहकी उदासी में ही "विश्वंभर" ने वहां पांच महीने गुजारे. संवत् १९६२ फाल्गुन शुक्ला दशमी का दिन है, श्यामके वक्त कितनेक मित्रों के साथ बैठे हुए "ब्रह्मानंद" हँसी मशकरीकी बातें कर रहे हैं, इतने में उनके किसी एक मित्रने कहा कि—भाई! सुना है कि, आप गाने में बड़े चतुर हैं, कुछ सुनाइये तो सही ! यह सुनकर "ब्रह्मानंद" ने एक ध्रुपद गानेके लिये ज्यों ही जोरसे स्वर निकाला त्योंही वह ऊपर का स्वर ऊपर और नीचेका नीचे ही रहा! यह देख सबके सब एकदम घबडा उठे ! बस क्या था ? सबके देखते ही देखते "ब्रह्मानंदजी" ब्रह्मानंद में मिल गये ! याने इस फानी दुनियां से चल बसे ! आपकी उमर इस वक्त अठाईस (२८) सालकी थी ! "विश्वंभर" थोडोसी दूर पर खेल रहा था उसे बुलाकर लोगोंने कहा कि, अरे! तेरा बाप तो मर गया ! यह सुन "विश्वंभर" वहां पहुंचा और खड़ा खड़ा पिताकी लाशकी तर्फ देख अपने मन में विचार करता है कि, यह मेरे पिता थे ! मगर इनकी इस दशाको भी देखकर मुझे रोना नहीं आता ! यह बड़े आश्चर्य की बात है ! इधर लोकोंने "ब्रह्मानन्द" की लाशको उठाकर उनके रहने के मकान पर जा रखा !

पतिको अचानक मरे देख " विश्वंभर " की मां (मतेरई) छातीको पीट पीट कर रोने लगी ! " श्रीनाथ " और " शंका " भी ढाः मारकर रोने लगे ! " विश्वंभर " सबको रोते देख स्वयं भी कुछ रोने लगा, परंतु अंदरसे वह हंसताही था ! इसका कारण क्या होगा ? यह बुद्धिमान स्वयंही विचार लें !

आखिर घरको तार दिया और पूनेके स्टेशन पर जो और और बाबू रहते थे उन सबने मिलकर " ब्रह्मानंद " का अग्नि संस्कार किया ! घरसे दूसरे रोज " जयंतिसहाय " पहुंचे और दो रोज रहकर " माया " (ब्रह्मानंदकी स्त्री) "विश्वंभर" "श्रीनाथ" और लड़की " शंका " को अपने साथ लेकर घरको चलने लगे ! उस वक्त "विश्वंभर" ने "जयंतिसहाय" से कहा कि, अब मेरा घरमें रहना न होगा ! इस लिये बेहतर है कि, आप मुझे यहीं छोडदो ! अगर आप मुझे घर ले जाओगे तोभी मैं वहांसे भाग आऊंगा !

जयंतिसहाय– (दुःखी होकर) तेरी मरजी ! जहां तेरा जी चाहे वहां रह ! (उस वक्त कुछ रुपये "विश्वंभर" के पास थे और बीस रुपयेका नोट उसको "जयंतिसहाय " ने दिया. " विश्वंभर " तो वहांही रहा, और " जयंतिसहाय, " " माया " " श्रीनाथ " और " शंका " को लेकर घरको आये !

इधर कलकत्तेके पासका रहने वाला " कृष्णचंद्र " नामका जादूगर एक बंगाली बाबू यहांपर रहता था " विश्वंभर " के सब हालसे वह वाकिफ था. एक दिन वह)

बाबू- (विश्वंभरसे) अब तुम क्या करोगे ?

विश्वंभर-जनाब ! मैं वही करूंगा जो मेरी तकदीर मुझसे करायेगी !

बाबू-क्या मुझे जानते हो ?

विश्वंभर-आपको सिर्फ इतना जानता हूं कि, आपने कितनेक जादूके खेल एक दिन दिखलाये थे, और श्यामको रोज स्टेशन पर फिरनेके लिये आते और मेरे पिताजी के साथ बातचीत किया करते! बाकीतो मैं आपके बारेमें कुछ नहीं जानता !

बाबू-क्या तुम मुझसे यह हुन्नर लेना चाहते हो ?

विश्वंभर-यह तो मेरे मनकी ही कही ! अगर आप बतलाये तो इससे परे और मुझे क्या चाहिए ?

बाबू- (अपने साथ एक ब्राह्मण चपड़ासी था उससे) वसंतराम ! देखो आजसे यह मेरा पुत्र है ! और इसको जो कुछ मुझे आता है वह मैं सबही सिखादूंगा (विश्वंभरकी स्थितिको सुन " वसंतराम " को भी बड़ा तरस आया.)

वसंतराम (वावूसे) आप मालिक हैं ! (मनमें) लड़के का नसीव उघडा !

(कुछ दिनके बाद बावू, " विश्वंभर " को साथ लेकर पूनासे लश्कर आये, वहांसे तीन कोस पर मुरारकी छावनीमें कमान्डून् चीफ साहबके यहां जाकर उन्होंने अपना खेल दिखलाया, खेल देख कर वे बोले कि मैं आपको महाराजके सामने कराऊंगा ! अगलेही रोज "चीफ साहब" ने राजा साहबसे उनका जिकर किया. राजा साहबने भी हुकम दिया कि अच्छा आइतवारके दिन दो बजे इन्द्र-भुवनमें उनका खेल होना चाहिये ! सबको इस बातकी खबर करदी.

बस तीसरे रोज इन्द्रभुवनमें राजा साहब और बडे २ अहलकार व अमलदारोंसे दरबार भर गया था कितने-एक अंगरेज भी हाजिर हुए, बस ठीक समय पर बावूने खेल दिखलाना शुरू किया. खेल एकसे एक चढ़ता था, लोक देखकर हैरान होते थे ! बावूजी क्या कर रहे हैं ? इसमें किसीकी अकल काम नहीं करती थी ! आखिरमें बावूजीने एक लड़केको एक मेज पर विठला दिया ! और पासमें खड़े एक सिपाहीसे तलवार मांग कर उससे लड़केका सिर काट अपनी हथेली पर रख लिया ! और " विश्वंभर " को अपने पास बुलाकर कानमें कहा कि, क्या तुझे इसका सिर कटाहुआ मालूम देता है ?

भूखके मारे मुख करमा गया था, चलते हुए पगभी लडथडाते थे, शहरमें फिरने २ थक कर शामके वक्त शेठ लक्ष्मीचंदजीके मंदिरके सामने यमुनाजीके घाटमें पानी पीनेकी इच्छासे किनारे बैठ कर दो चूल्हु पानी पिया, लेकिन कुछ चक्करसा आनेसे वहीं लेट गया! कुछ देरके बाद उठकर जमनाजोके किनारेही किनारे जाते हुए एक कीकर (बबूल) के वृक्षके नीचे उसी वृक्षके गूंदके चमकते हुए छोटे २ सफेद डले गिरे हुए देख कर "विश्वंभर" ने वे उठा लिये. और भूखके मारे एक मूंमें डाला! मगर कच्चा गूंद दांतोंमेंही चिपक गया! आखिर "विश्वंभर" ने इधर उधरसे और थोडासा गुंद चुग कर इकट्ठा करके एक पथ्थर पर रखा और कुछ सूकी हुई लकडियां वीन कर उस गुंदके ऊपर रखके दिवासलाईकी एक कांडी (तीली) लेनेके लिये सामने एक मंदिरके पुजारीके पास पहुंचा! मगर अपने मनमें विचारने लगा कि, "इससे क्या कहकर तीली मांगू? अगर देनेसे इन्कारही करदे तो?" इस तरह कई प्रकारके विचार करता हुआ वहां खडाही था कि, इतनेमें थोडी दूर बैठे हुए बाबाजीने अपनी चिलम तमाखूकी पीकर जमीन पर उंधादी "विश्वंभर" जाकर झट वह आगकी चिनगारियें एक वडके पत्ते पर ले आया और उनकों लकडियोंमें रखकर आग जलाई उससे वह गूंद फूलकर मखाने बनगया, उसे ठंडा करके "विश्वंभर" ने अपनी भूख मिटानी चाही! लेकिन वह भी खाया

न गया ! तव तो वह वड़ाही निराश हुआ ! कभी अपनी पूर्व अवस्थाको याद् करता ! कभी घरसे भाग आनेकी अपनी भूलको धिक्कारता ! आखर कार वहांसे उठा और शहरमें चलकर पापी पेटके लिये किसीके सामने हाथ पसारनेका निश्चय करके वाजारमें आया, लेकिन वाजारमें आतेही आते मनका चक्र फिर गया ! (हाथकी उंगली दांतोंके वीच चवाकर मनही मनमें) हे ! मै हाथ पैरोंके होते हूए भीख मांगु ? धिक ! धिक ! !

चलता २ एक सरांयके सामने वहूतसी घास वेचने वाली वैठी थीं, उनमें दो तीनके पास इमलीके पत्तोंका भारा भी रखा हुआ था. वहां खड़ा होकर विचारने लगा कि–" भला घासतो घोड़ोंके लिये है, लेकिन यह इमलीके पत्ते किस जानवरके लिये और कौन लेता होगा ? " इतनेमें थोडी ही देरमें एक मुसलमानने आकर उस भारे वालीसे पूछा कि "अरी ! इस भारेका क्या लेगी ? " उसने उत्तर दिया कि " छे आने ! " आखर होते हवाते मियांजी साढ़े चार आनेमें लेकर चले तो " विश्वंभर " ने पूछा कि, " जनाव ! यह पत्ते किस काम आयेंगे ?" मियांजी वोले "मेरे यहां दो तीन वकरीयें हैं उनको खिलाऊंगा ! " यह सुनतेही " विश्वंभर " का हौसला वढ़ा और झटही अजमेरी दरवाजेसे निकलकर सडकके किनारेही किनारे आधा मील निकलगया ! वहां एक कवरस्तानके नजदीकमें

कई इमलीके झाड थे उनमेंसे एक झाडपर चढ़ गया और इमलीकी छोटी २ टहनियें तोड कर नीचे गेर उतर कर एक भारा बनालिया ! मगर बांधनेके लिये रस्सी न थी ! अपने कमरकी धोतीको खोल उसकी एक तरफ की किनारी फाडकर, उससे उस भारेको अच्छी तरह बांधकर मनमें यह चार रुपयेका बूट, शरीरपर यह कमीज, कमरमें यह बारीक कोर वाली धोती, और कहां यह सिरपर चारेका भारा ! यह सोचकर गलेसे कमीज उतार कर बगलमें दबाली और धोतीको कमरमें लंगोटेकी तरह बांध कर उसीमें बूटभी बांध लिया और जनेऊभी छिपा लिया ! भारेको मुशकिलसे उठाकर अपने सिरपर रखके, जहां उन घसियारोंको बैठे देख गया था वहांही आनेके इरादेसे चलता हुआ शहरके दरवाजेमें प्रवेश करके अभी २५-३० कदमही आगे गया होगा कि, एक दुकानदारने " विश्वंभर " को आवाज दी कि " ओ चरीवाले ! "

विश्वंभर- (पीछे फिरकर देखने लगा कि) किसने आवाज दी ? (इतनेमें फिर)

दुकानदार -अरे इधर आ इधर !

विश्वंभर- (बुलाने वालेको देखकर पासमें जाके आगे खड़ा होगया !)

दुकानदार- क्या लेगा ?

विश्वंभर—छै आने !

दुकानदार— (विश्वंभरके सिरसे भारेको नीचे उतारकर वजन करता हुआ) अरे सच बता क्या लेगा ? तीन आने लेने हों तो यहां रखदे ! नहीं तो जा लेजा !

विश्वंभर— नहीं ! (दुकानदारने भारेको उठवा विश्वंभरके सिरपर रखवा दिया ! " विश्वंभर " चार पांच कदम गया होगा कि—

दुकानदार— अरे साढ़े तीन आने लेगा ? ले ले आ !

विश्वंभर— (पहलेही तीन आनेमें हां करने लगा था, लेकिन अपने मनमें विचारने लगा कि एकदमही देदेना ठीक नहीं ! पीछे लौटकर दुकानदारके सामने भारेको गेर कर) लाइये पैसे !

दुकानदार— अरे तो यहां कहां डालता है ? घर ले चल !

विश्वंभर—घर कितनी दूर है ? (इस वक्त "विश्वंभर" का चेहरा गरमीके मारे लाल होगया था ! जी घबडा रहा था ! भूखके कारण अब भार लेकर चलना बड़ाही मुशकिल था ! आंखोंमें आंसू डब डबा रहे थे ! धीरज धर कर—) अच्छा चलिये !

दुकानदार— (विश्वंभरकी शकलको देख कर—) अरे तूं किसका लड़का है ?

विश्वंभर-जनाब ! अब आपको चोरसे काम है ? या मैं किसका हूं इससे काम है !

(दुकानदार विश्वंभरके सिरपर भारा उठवा घर ले गया. विश्वंभर वहांसे साढ़े तीन आनेके पैसे लेकर फिर जमना किनारे पहुंचा, वहां अच्छी तरह स्नानकर कपडे पहन एक हल्वाईकी दुकानसे एक आनेका दूध पी और कुछ खा, अपने दैवको धन्यवाद देता हुआ. चंद्रमासे खिडी हुई उज्वल रात्रिमें घाटके किनारे चट्टानपर आनंदसे सोगया !

अगले रोज सुबह उठकर बाजारमें गया, वहां एकने दरजीने अपनी दुकानको साफ कर जो कुछ कपडोंका कतरन था वह निकाल कर बाहर फेंक दिया. " विश्वंभर " ने उसे उठा एक धेलेकी पेचक मोल ले, उस कतरनकी रंग बेरंगी तीन सौ गोलियां बनाकर एक पैसेकी लोहेके तारकी गुच्छी लाकर उसके उतनेही टुकडे कर डाले जितनी गोलियां थीं. पीछे एक गोलीको उस तारके साथ बांध कर ठीक बनालिया, स्टेशनसे उतरते हुए " विश्वंभर " ने सडकके किनारे किनारे लगेहुए मूजके जो सरकंडे-(बूजे) देखे थे वहां जाकर उनके बीचकी छडें निकाल लाया और उनके एक एक बालिस्तके सौ टुकडे करके वोह तारमें बींधी हुई गोलियां उस एक एकके साथ चढ़ाव उतारमें तीन तीन गोलियां बांध कर तयार करलीं दुपहरको बाजारसे दो पैसेका

कुछ खाकर जमना किनारे सारा दिन व्यतीत कर दिया ! श्यामके वक्त जब दीवे जल चुके तो "विश्वंभर" उस अपनी बनाई हुई चरखड़ियोंमेंसे एक चरखड़ी, एक जगह कूडेमें फूटी पडी हुई बोतलको ले उसके पेंदेमें घेलेका मिट्टीका तेल ले कर उसमें उसको डबो कर दीवेके साथ जलाकर हाथमें घुमाने लगा और आवाज देने लगा कि " ये आतशबाजीकी चरखी एक पैसेको ! बारूदसे बनी हुई चरखी चार आनेकी पांच मिनट या सात मिनटमें भस्म हो जाती है, मगर यह मेरी चरखी एक बार तेलमें डुबाई हुई घंटों चलती है और महीनों तक ऐसीकी ऐसी रहती है ! "

" विश्वंभर " एक चरखी अपने हाथमें फिराता था जिसे देखकर बचेही नहीं बलकि, बड़े २ लोग भी अपने लड़कोंके लिये ले ले कर जाते थे ! सिर्फ उसमें खूबी यही थी कि, वह गोलियां लाल सफेद काली रंगकी होनेसे फिरती हुई आबेहूब आतशबाजीकी चक्रीके माफकही मालूम देती थी ! गरज डेढ़ कलाकके अंदर " विश्वंभर " के पास सौ चरखीयोंमेंसे एकभी बाकी न रही. तब " विश्वंभर " जिस दरजीकी दुकानके सामनेसे कतरन उठालाया था उसीकी दुकान पर पहुंच कर.)

विश्वंभर– (दरजीसे) भाई ! मैं तुम्हारे उपकारको न भूलूंगा !

यहां मिले, इससे मैं बेहतर समझता हूं कि, अब य
पानी भी न पीऊं !

बालमुकंद- (विश्वंभरके अभिप्रायको समझ गया, एकद
अपनी छातीसे लगाकर बडेप्यारके साथ) "विश्वंभर"
बेटा ! शाबास तुझे ! अभीतक मैं तेरे कहनेको नहीं
समझा था ! (पुचकार कर) चुपकर ! यह याद
रखना कि " बालमुकंद " का सर्वस्व नष्ट क्यों न हो
जाये लेकिन तुम्हारे दादाके निसबत इस " बालमुकंद"
के मुखसे एक अक्षर भी न निकलेगा ! तुम यहां रहो
और आनंदसे अपनी दुकान पर बैठो !

विश्वंभर-अगर हरामकी रोटियां खाकर ही दिन काटने
होते और फिर लोगोंके ताने सुनने होते तो "रायसा-
हव" के पुत्र "ज्योतिश्चंद्र" के साथ एक आला
दरजेकी अमीरी भोगते हुए छोड़कर मुझे इस प्रकार
से भटकनेको क्या किसीने कहा था ? हां ! बेशक मैं
दुकान पर बैठूं तो सही मगर जबतक अपने हाथसे
आठ दश आनेके टके रोजके न पैदा करूं वहां तक
दुकान पर बैठना भी मूर्खता है और रोटी खाना भी
हराम !

बालमुकंद- (अपने दिलमें " विश्वंभर " के इरादेको
अच्छी तरहसे समझ कर) अच्छा ! हाल तो तुम मेरे
कहनेसे दो चार दिन दुकान पर बैठो पीछे देखा जाय-

गा ! (विश्वंभरको अब किसी बातकी चिंता न रही ! अपने घर जैसा मामला होगया ! " विश्वंभर " ने " बालमुकंद " से चोरी दो तीन घंटेकी फुरसत निकाल कर सौ सवासौ वही चरखीयें बनाकर एक भरतपुरके रहने वाले " अलीमहमद " मुसलमानसे कहा कि तूं रातके वक्त ये बेचाकर डेढ़ रुपयेका बिकै तो आठ आने तेरे और रुपया मेरा ! उसने भी यह बात बड़ी खुशीसे मंजूर करली ! वह रोज युंही करने लगा. पांच सात दिनके बाद यह बात " विश्वंभर " ने " बालमुकंद " के आगे छै रुपये रखकर कह सुनाई और कहा कि, मैं खुद इस कामको नहीं करता मैं ने एक " अलीमहम्मद " नामके मुसलमानको यह धंधा सिखला दिया है, आपसे इस चोरी रखनेकी मैं माफी चाहता हुं ! " बालमुकंद " को "विश्वंभर " की इस बातसे बड़ाही आश्चर्यसा हुआ ! आखर " विश्वंभर " दुकान पर बैठने लगा और दिल लगाकर काम सीखने लगा ! अनुमान तीन महीनेके अंदरही उसने अच्छी तरह सलमें सितारेके भरत कामको अपने काबूमें कर लिया ! और " बालमुकंद " की गैर हाजरीमें दुकानका कामभी अच्छी तरहसे करने लगा ! यह बात " जयंतिसहाय " को मालूम हुई कि " विश्वंभर " मथुरामें है तो उन्हों ने " बालमुकंद " को लिखा कि, अगर " विश्वंभर " यहां आजावे तो अच्छी बात है क्यों कि, भाई "वंश-

गोपाल " बहुत बीमार हैं और मुझ एकलेसे तीनों दुकानोंका काम नहीं संभाला जाता ! मुनीमजी अपने लडकेकी शादी करने हापडको गये हुए हैं. यह समाचार सुन कर " बालमुकंद " ने समझा कर " विश्वंभर " को घरको भेजा और " जयंतिसहाय " को लिखदिय कि, अगर इसके साथ किसी प्रकारकी कोई खट प[illegible] हुई तो याद रखना ! तुम इस लड़के से हाथ ध[illegible] बैठों गे !

" विश्वंभर " घरको आ[illegible] [illegible]ान पर बैठने लगा, तीन महीने तक अच्छी तरहसे अपना [illegible]म किय[illegible] लेकिन अपनी सतरेइ मां के कारण फिर वहांसे इसक[illegible] चित्त उखड़ा !

" तकदीरके लिखेको तदबीर क्या करे ? " घरसे बाहर रहकर जिन सुखोंको अनुभव करता था उससे हजार गुने दुःख " माया " के कारण इस घरमें अनुभव करने पडते थे ! एक दिन—

बंशगोपाल– (दिवालीकी रातको आठ बजे दुकान बंद कर किसी आढ़तीयेके बारासौ रुपये लेकर घर आये और चुप चाप " माया " की कोठडीमें जाकर क्या कर रही हो ?)

माया– (उठकर) युंही बैठी हूं ! कहो !

बंशगोपाल–ये लो रुपयोंकी थैली ! अंदर रखलो ! सुबह जाते हुए मुझे या वडे भाईको देना !

माया–(रु० की थैली हाथमें लेकर मुसकराती हुई) किस के हैं ?

बंशगोपाल–एक आढ़तियेके हैं !

माया–मैंतो कुछ औरही समझी थी !

बंशगोपाल–क्यों नहीं ? (इतना कहकर वैठ गये और थोड़ी देरके वाद कुछ खस पीकर अपनी वैठकमें चले ग[illegible]ग छे रुपये र[illegible] रुपयोंकी थैली लिये हुए [illegible]ग पर वठी हुई थी इतनेमें "विश्वंभरनाथ" अंदर आया और कपडे पहन कर विना वोले चाले वाहर चला गया ! उसवक्त "माया" ने माया जाल रचा ! वह रुपयोंकी थैली लेकर घरके पीछे जिस तवेलेमें गउएं वांधी जाती थी वहां गई ! इतनेमें "वंशगोपाल" की लड़की "लीला" ने देख लिया अपने मनमें सोचने लगी कि, इस वक्त चाची तवेलेमें क्यों गई है ? यह विचार कर "लीला" झट छतपर चढ़ गई वहांसे नीचेका सब कुछ दिखता था सो चुप करके देखने लगी ! "माया" ने वह रुपयोंकी थैली लेकर एक तर्फ घोडेके लिये खानेका घास भरा हुआ था उस के पीछे भींतके एक आलेमें रख कर, उस पर अच्छी तरहसे घास ढक कर झट अपने कमरेमें चली गई !

ज्योतिश्चंद्र– (एकदम दौड़ता हुआ नीचे आया और सहीसको देख कर) अरे क्यों ? क्या है ?

सहीस– मुझे " रायसाहब " से मिलना है !

ज्योतिश्चंद्र–चल आ ऊपर ! (जीनेमें चढ़ते चढ़ते) खैर तो है ?

सहीस–खैर होती तो इस वक्त क्यों आता ?

ज्योतिश्चंद्र– (घबरा कर) हैं ! क्या बोलता है ? भाई कहां है ?

सहीस–बारां सौ रुपये लेकर भाग गये !

ज्योतिश्चंद्र–अबे ! सच सच कह न ! बात क्या है ?

सहीस–हजूर ऊपर तो चलो !

(दोनों जने बैठकमें गये, सहीसको वहांही खड़ा करके " ज्योतिश्चंद्र" ने अंदर जाकर अपने बापसे कहा कि " विश्वंभर " के यहांसे एक आदमी आया है. " रायसाहब " एक न्यूज पेपर (अखबार) बांच रहे थे उठकर कोठीमें आये और उसको देख कर)

रायसाहब–क्यों भाई ?

सहीस– (झुक कर दोनों हाथोंसे सलाम करके) हजूर ! यह बारां सौ रुपये ! (थैली आगे रखदी.)

रायसाहब–यह कैसे रुपये ?

सहीस–हजूर ! आप बैठ जाइयेगा तो मैं कहूं ! (रायसाहब एक कुरसी पर बैठ गये और सहीसने जो कुछ " लीला " ने कहा था वह सब कह सुनाया.)

रायसाहब–(दांत किट किटाकर) ये कैसे कमबख्त लोक हैं ? जो इसके पीछे हाथ धोकर पड़े हैं ! (सहीससे) अच्छा भाई ! तू तो जा ! जो बनेगा सो देखा जायगा (सहीस तो आकर अपने तबेलेमें सोगया ! और "राय साहब" ने उसी वक्त कोतवाल साहबको एक पत्र लिख कर वह रुपया अपने खास आदमी के हाथ दे भेजा और कहला दिया कि, सुबहमें " ज्योतिश्चंद्र " बाकीका कुल समाचार लेकर आपको मिलेगा ! कोतवाल साहब सैये-खां, बडेही नेक और इन्साफ पसंद, लोक प्रिय आदमी थे ! " शारदाचंद्र " के साथ आपकी बडी गहरी दोस्ती थी ! और " रायसाहब " के साथ तो घर जैसा मामला था ! लेकिन कभी किसी काममें आपने किसीका लिहाज नहीं किया ! गरज आपकी लायकी जग जाहिर थी ! " विश्वंभर " पर " माया " के झुठा तौहमत लगानेका समाचार सुन कर उन्हे बड़ाही गुस्सा आया और समाचार लाने वाले उस आदमीसे बोले कि " रायसाहब " को कहना कि, मैं सुबह उनके मकान पर जाकर जो ठीक लगेगा वह करूंगा, मगर "विश्वंभर " का पता मिल जाव तो बहुतही अच्छी बात है !

मालूम है कि, वह ऐसेही आदमी हैं ! आपकी लायकी कातो कुछ पार नहीं ! उस " विश्वंभर " परतो आप लोगोंने बड़ी ही जिगर तोड़ मेहनत कीथी कि, यह पशुही बने ! मगर देखो " रायसाहब " की कैसी बे समझी कि उन्होंने उसे पशु बनानेके बदले मनुष्य बनानेका तन, मन और धनसे प्रयत्न किया ! यह उनकी कितनी बड़ी भूल ! खैर जो होना था सो हुआ ! मगर अब आप यह कहिये कि " विश्वंभर " को मिलने पर क्या किया जावे ? (कोतवाल साहबके) इस व्यंग भरे कथनको सुन कर पंडितजी बड़ेही तअज्जुबमें पड़गये !)

वंशगोपाल–हजूर ! आपकी बात सुन कर मेरा दिल कांपता है ! आप न जाने क्या फरमाते हैं ?

कोतवाल– (एक दम क्रोधमें आकर अपने दोनों हाथ मेज पर पछाड़ते हुए) अरे दिल क्या कांपता है अभी सब कुछ कांपेगा जरा ठहरो ! दिखाता हूं तमाशा !

(इधर " ज्योतिश्चंद्र " सुबह उठतेही जगन्नाथजीके मंदिरमें " लीला " से मिला और कुल कार्रवाई जो कुछ रातमें बनी थी सब सुनी, विशेषमें " लीला " ने यह भी कहा कि " विश्वंभर " घरमें ही है मगर मेरे सिवाय किसीको खबर नहीं है, क्यों कि मुझे भी अभी आते हुए इशारोंसे उसीने कहा कि, मैं घरमें हुं ! " लीला " तो अपने घर चली गई और "ज्योतिश्चंद्र"

कोतवाल साहबके यहां पहुंचा. " वंशगोपाल " पर कोतवाल साहब तेज हो रहे थे ! इतनेमें—

ज्योतिश्चंद्र– (आगे बढ़कर कोतवाल साहबसे) जनाब ! आदाब अरज !

कोतवाल–साहब ! आदाब ! आईये (कुरसी तरफ हाथ करके) बैठिये !

ज्योतिश्चंद्र– (बैठते बैठते वंशगोपालसे) पंडितजी ! आप सुबही सुबह यहां कैसे ?

कोतवाल– (ज्योतिश्चंद्रसे) वाह साहब क्या आपको नहीं मालूम कि, आपका मित्र (इनका भतीजा "विश्वंभर") रातको बारां सौ रुपये लेकर भाग गया ! ये उसकी रिपोर्ट लिखाने आये हैं !

ज्योतिश्चंद्र– (चमक कर, हैं ! ऐसा ? " विश्वंभर " बारां सौ रुपये लेकर भाग गया ? जबी वो सारी रात अपने घरसे बाहर नहीं निकला !

कोतवाल– (आश्चर्य पूर्वक) अच्छा ! वो अपने घरमें है ? यह तो कहते हैं सारेही ढूंढ मारा कहीं पता नहीं मिला !

ज्योतिश्चंद्र–हजूर ! इन्होंने घरके बाहर ही ढूंढा अगर अंदर ढूंढते पताभी लगता और रुपया भी मिलता ! अबतो वो जुएमें हार गया अब मिलेगा कैसे ?

" विश्वंभर " चाहता था कि मैं अपनी इस मतेरई (मां) का जो मारग है वह निष्कंटक करदूं, मुझे अपने पिताकी संपत्तिके दो हिस्से करने बिल्कुल मंजूर नहीं ! भले इस जायदातका मालिक " श्रीनाथ " ही क्यों न बने ! मैं लिख दूं कि मेरा कुछभी हक नहीं परंतु " माया " को शान्ति हो ! लेकिन " विश्वंभर " के इन निष्कपट सत्य विचारोंको " माया " के हृदयमें हजारहां मेहनत करने परभी कोई सीधा बिठाने वाला न था !

" माया " के मनमें तो हमेशां यही विचार रहताथा कि, अब यह " विश्वंभर " दो सालमें बालिग (अठारा सालका) हो खुद मुखत्यार बन जायगा मेरे पतिके स्टेटका मालिक ये होगा ! तब मेरा " श्रीनाथ " किस गिनतीमें ? ट्रस्टी लोगभी इसीका पक्ष और इसकी तारीफ करते हैं ! इस खोटे विचारोंने "माया" के मनको मलीन कर " माया " [illegible] कर दिया !

नाश होगया ! "विश्वंभर" का कोमल हृदय "माया" के भीषणकांडसे चूरचूर हो जानेके बदले वज्र जैसा बन गया. इसका कारण " अब मैं मां (माया) के दुःख का अंत ला चुका " इस बातकी खुशी ! " पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्तिका आनंद ! इससे परे और क्या चाहिये ? " विश्वंभर " आज आखीरी घरसे विदा होता है, माघका महीना, कमरमें एक धोती, शरीर पर कमीज, बस इन तीन चीजोंके सिवाय पास कुछ नहीं,

कॅप अंबालेके स्टेशनके बाहर जाकर एक हलवाईकी भट्ठीके सामने आग सेकने बैठ गया ! उस वक्त मारे शरदीके सारा शरीर थर थर कांपता था, रूमटे खड़े हो रहे थे, होंट नीले पड़गये थे, सारी रातकी हवाने रेलमें परेशान कर दिया था ! बस दशबजे धूपकी तेजीने भी जोर पकड़ा कि " विश्वंभर " ने अंबाला छावनीका रास्ता लिया ! और बाजारमें पहुंचा कि, एक मकान बड़े बड़े झंडों और बंदरवालोंसे सजाया हुआ उसने देखा, दरवाजे पर बैंड बाजा बजरहा था, उपरके भागमें मोटे मोटे अक्षरोंमें " वैलकम् " लिखा हुआ था, वहा पर खड़े होकर " विश्वंभर " ने एक दुकानदारसे पूछा कि, क्यों भाई ! यहां क्या है ?

दुकानदार—यहां है ! दयानन्दियोंका स्यापा !

कारण एक समाजीके लड़केके विवाहमें तीन दिन रह-
नेथे. जब सब लोग उठ २ कर चले गये तो एक कुरसी
पर अंगरेजी पोशाकमें बैठे हुए एक बाबूजीसे)

विश्वंभर—Please I do not ask anything from you
but I lete you this much "I am mungry."

बाबू—भाई ! मैं अंगरेजी नहीं जानता !

विश्वंभर—जनाब ! मैं आपसे कुछ मांगता नहीं हूं मगर
इतना ही कहता हूं कि, मुझे भूख लग रही है !

(बाबूने " विश्वंभर " को अपने पास बिठा कर
सब बात पूछी, मगर " विश्वंभर " ने सिवाय घरसे
भाग आनेके एक भी बात सत्य न कही ! उसने अपने
लड़केसे कहा कि, इन्हे घर ले जाकर अच्छी तरह रोटी
खिला लाओ ! उसने " विश्वंभर " को घर ले जाकर
विवाहकी मिठाई लाकर खानेको दी और साथही वापस
ले आया ! उस रोज " विश्वंभर " ने वह रात वहांही
काटी और अगले दिन स्टेशन पर आ, फिर गाडीमें बैठ
जालंधर जा उतरा ! उस वक्त रातके दश बजे थे, मुसा-
फर खानेमें आकर सोना चाहा था मगर सिपाहीने
कहा कि, जाओ सरांयमें, यहांपर इस वक्त कोई मुसा-
फर दिखता है ? उस वक्त " विश्वंभर " सरदीके मारे
बडाही तंग हो रहा था ! मनमें विचारने लगा कि,
सरांय वाला तो बिना पैसे सोने न देगा, और कहींका

ठिकाना नहीं मालुम ! क्या करूं ? ऐसा विचार कर सीधा पूछता पूछता कोतवालीके अंदर जाने लगा तो दरवाजे पर खड़ा हुआ)

सिपाही–ए ! कहां ?

विश्वंभर–भाई ! मैं अंदर कोतवाल या दरोगासे मिलना चाहता हुं ! (इतना कहता हुआ अंदर जाकर जहां कोतवाल साहब दो चार आदमियोंसे बैठे बातें कर रहे थे वहां जा खडा हुआ)

कोतवाल–(विश्वंभरको देख कर) क्यों भाई ! क्या है ?

विश्वंभर–है क्या देख लीजीये ! सरदीके मारे दांत बज रहे हैं ! आवाज नहीं निकलती ! इस लिये यहां कोई कोठडी हो तो रात सो जानेके लिये मेहरबानी कीजीये क्यों कि सरांयमें जाऊं तो एक पैसा चाहिये सो पास कौडीभी नहीं ! अगर बाजारमें किसीकी दुकानके आगे पड रहूं तो आपके सिपाही चोर समझ कर और भी मुसीबतमें डालें तो फिर क्या बने ?

कोतवाल–(विश्वंभरके कहनेको सुनकर बडे रहमके साथ) अच्छा वह सामने कोठडी है उसमें सो जाओ ! और सुबह तुमने अपना कुल नाम ठाम हमको बतलाना !

(एक सिपाहीसे) भाई ! इसको अंदरसे दो तीन बरान् कोट (कंबलके ओवर कोट) निकाल दे ! एक नीचे बिछा लेगा और दो ओढ लेगा ! (सिपाहीने उसी वक्त निकाल दिये और एक को-ठड़ी खोल दी जिसमें घास बिछा हुआ था उसमें सो आरामसे सारी रात सो रहा, जब सुबहके वक्त उठा तो कोतवाल साहबने अपने पास बुलाकर पूछा कि, क्या नाम है ? कहांसे आये और कहां जाना है ?

विश्वंभर– (साफर) मैं भाग कर आया हूं और मेरे साथ यह यह बीतक बीता है, मगर मैं अपने गामका नाम और मां बापका नाम तो हरगिज भी न बताऊं गा ! आपकी मेहरबानीसे मैंने रात बड़े आरामसे निकाली, अब आ-पसे रजा लेता हूं !

कोतवाल–अरे भाई ! इस तरह तुम क्या करोगे ? कपड़ा तुम्हारे पास नहीं, सरदी कसरतसे पड़ रही है ! खा-ओगे क्या ? पैसा भी पाससे नहीं है ! परदेशका मामला किसीसे जान पहचान भी नहीं है !

विश्वंभर–आपसे तो जान पहचान हो चुकी है ! अब कुछ न कुछ ठिकाना लग जायगा !

कोतवाल–अगर मेरा कहा मानो तो अपने घर चले जाओ ! वरना दुःख पाओगे !

विश्वंभर–अगर दुःखसे डरता तो घरसे क्यों निकलता ?

कोतवाल–क्या कुछ पढ़े हो ?

विश्वंभर–नहीं जैसाही ! दो भी तीन सालसे किताब नहीं देखी !

कोतवाल–भला फिरभी ?

विश्वंभर–सिक्स क्लास तक इंगलिश, लेकिन लेङ्ग्वेज हिन्दी !

कोतवाल–अच्छा ! मेरे एक दोस्त फोरस्ट ओफिसर आये हुए हैं मैं उनसे जिकर करूंगा, लेकिन वो आर्यसमाजी हैं ! वो जरूर तुमको किसी न किसी जगह लगा देवेंगे ! आज तो तुमने मेरे घर रोटी खा लेनी, दुपहरको उनसे मिला दूंगा !

विश्वंभर–(हँसकर) क्यों साहब ? अभी तो आप मुझसे पूछते थे कि, पास पैसा नहीं खाओगे क्या ? सो मेहरवान मेरी तकदीरही आपके पास मुझे ले आई है जो खाना पीना देनेको एक दीनका तो क्या जिन्दगीका बन्दोवस्त करनेके लिये आप तरद्दत करते हैं !

(दश बजे " विश्वंभर " कोतवाल साहबके घर रोटी खा शहरमें फिरता हुआ एक " नयनानन्द " को अपने मकानके चबूतरे पर बैठे हुए देख कर)

भोलानाथ–(नयनानंदसे) नमस्ते साहब !

नयनानन्द–नमस्ते ! नमस्ते ! आईए ! बैठिए !

भोलानाथ- (ठंडा श्वास छोड़कर) अजी क्या बैठुं !

नयनानन्द-क्यों क्या हुआ ? कहो तो सही !

भोलानाथ- (बैठकर) अजी कुछभी मत पुछो ? मेरी तो जानको बन रही है ! बस जबसे अजमेर छोडा तबसे ही मुझ तो इस बिमारीने हैरान कर दिया है ! शहर कोई हकीम नहीं छोड़ा, कोई वैद्य नहीं छोडा, कई डॉक्टरोंको भी दिखला चुका, जम्मूमें एक फकीर सुने थे उनके पासभी जा आया मगर हाथसे यह नींबकी टैनी न छुटी !

नयनानन्द-मैं भी आपको दिन पर दिन दुबले होते जाते देखता हुं ! ऐसी क्या बीमारी है ?

भोलानाथ-अजी बिमारी क्या है ? बस मोतकी सहेली है ! गरमीसे बदन गलता है ! इसे हकीम लोग सुजाक व जिरियाने रिकत बतलाते हैं ! घरवाली बिचारी " नन्दकोर " का कुछ हालही न पूछो ! मेरे दुःखसे वोभी अति दुःखिनी बन रही है ! क्या करूं ? बड़ीही चिन्ता में पड़ रहा हूं !

नयनानन्द-भला आपतो बिमारीसे दुःखपाही रहे हैं, मगर अपने घरवाली विचारी " नंदकौर " को क्यों दुःखी कर रहे हैं ?

भोलानाथ-वो आपही मेरे दुःखसे दुःखी होती है, मैं तो उनको जराभी तकलीफ देनी नहीं चाहता ! सच पूछों

तो मुझे अपनी विमारीका इतना दुःख नहीं है जितना कि उनका !

यनानन्द-अरे भाई ! ऐसा काम करो जिससे " नंदकौर " का दुःखभी दूर हो और तुम्हारा काम भी बने !

ोलानाथ-मैं यही तो चाहता हूं !

नयनानन्द-वाह साहब वाह ! आपको " स्वामीजी " का लेख याद नहीं ? कहांसे रहे ! छै सात साल तो हो लिये !

(इतनेमें अंदरसे हाथमें लकडी थांबे हुए और भीतका सहारा पकड़ कर " नयनानन्द " की स्त्री दमेंकी विमारीसे खौं-खौं करती हुई डयोढीके बाहर जहां दोनों बातें करते थे आकर वैठ गईं)

भोलानाथ-अरे मिस्टर ! नहीं नहीं मुझे अपने परम गुरु " स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी " का लेख (" सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ११७ में-ऋग्० मं० १०, सू० १०, मं० १० ॥)

" अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् " इस वेद मंत्रका अर्थ अच्छी तरहसे याद है !

नयनानन्द-तब तो अफसोस कि आप उसपर अमल नहीं करते ! भला तुम्हारा यह याद किया हुआ किस काम आया ? अगर ऐसे मौकेपर भी वह " स्वामीजी " का

लेकिन इसे हालमें न लाया जावेगा तो फिर किस वक्त ?

भोलानाथ—माई डियर मिस्टर ! सच बात तो यह है कि, आज कलका जमाना कुछ ऐसा नाज़ुक आगया है कि, किसी पर विश्वास नहीं आता ! क्यों कि कई एक ऐसी वारदातें बन चुकी हैं कि, ईमानदार समझ कर अमानत रक्खी मगर आखीरमें अच्छी चीज देख, मोहित हो बेई-मान बन जवाब दे देते हैं ! इस लिये मेरा दिल आज्ञा देते हुए झिझकता है ! हां अगर आप किसी ईमानदार शख्सको अपनी जमानत पर तलाश कर देवे तो वेहतर है ! मेरी तकदीरमें तो दुःख लिखा है मगर वो विचारी दुःखी क्यों होवे ?

नयनानन्द—की औरत— (अपने पतिसे) अ—रे प्रा—ण—ना—थ ! आपके इन मित्रको क्या विमारी है ? (श्वास) हाय—हाय—हाय अरे राम अरे राम ! आह—आह (खौं खौं खुरर खुर्खुः) और इ—नकी स्त्री " नन्दकौर " को अभीतक इन्होंने किसीसे नियोग करनेकी आज्ञा दी है, या कि नहीं ? अ—ग—र ना—ना दी हो—हो—होवे तो मेरी तरफसे आपको इजाजत है, वेशक आप "नंदकौर" के साथ नियोग कर लीजियेगा ! हा—य—हाय—हाय मैं मैं तो मरली—मरली आह रे (छाती दवाकर) खौं खौं मरी मरी उः ऊ—ह.

भोलानाथ— (नयनानन्दसे) अजी साहव ! इनको तो बड़ीही तकलीफ हो रही है ! किसीका इलाज भी कर

वाते हो या नहीं ? इनको कितना आरसा हुआ बीमार हुए ?

नयनानन्द–अजी कुछ मत पूछो इसकाभी बहुत कुछ इलाज करालिया मगर दिनपर दिन दया बढताही जाता है ! तीन वर्ष होनेको आए, सूककर शरीरकी देखो हड्डियां हड्डियां निकल आई हैं ! बैठा जाता नहीं, न दिनमें चैन, न रातको नींद ! मुझे कई दफा कहचुकी कि, तुम किसी अन्य स्त्रीसे नियोग करलो ! मगर अभीतक ऐसी कोई औरत मिली नहीं, और नाहीं मैंने तलाश करनेकी कोशिस की !

भोलानाथ–भाइ ! "स्वामीजी" के लिखे हुए वेद मंत्रमें यह अर्थ तो निकलता है कि–"पति अपनी स्त्रीको अन्य पुरुषके साथ नियोग करनेकी आज्ञा देवे" परंतु यह मेरे ध्यानमें नहीं है कि, स्त्रीभी अपने पतिको आज्ञा देवे या कि नहीं ? जरा अंदरसे "सत्यार्थप्रकाश" तो लाओ ! देखूं वहां क्या लिखा है ? अगर ये आपकी स्त्री आपको आज्ञा देवें तो बड़ी ही अच्छी बात है ! मुझे अपनी स्त्री "नंदकौर" के लिये किसी दूसरे आदमीकी तलाश करनी मिटी ! आप जैसा ईमानदार (और फिर मेरे जिगरी दोस्त) दूसरा कौन मिलेगा ! इससे परे और क्या चाहिये ?

नयनानन्द– (जल्दीसे) उठकर अंदर गये और सन् ८७का

" सत्यार्थप्रकाश " उठा लाये और पृष्ठ ११७ निकाल कर) लीजिये !

भोलानाथ-(पूर्वोक्त मंत्रका अर्थ जो " स्वामीजी " ने लिखा है वह पढने लगे) "जब पति सन्तानोत्पतिमें असमर्थ " होवे तब अपनी स्त्रीको आज्ञा देवे कि, हे सुभगे " सौभाग्यकी इच्छा करने हारी स्त्री तूं (मत्) मुझसे (अन्यम्) दूसरे पतिकी (इच्छस्व) इच्छा कर ! क्यों कि " अब मुझसे संतानोत्पत्तिकी आशा मत कर परंतु उस " विवाहित महाशय पतिकी सेवामें तत्पर रह. " वैसेही स्त्री भी जब रोगादि दोषोंसे ग्रस्त होकर " सन्तानोत्पत्तिमें असमर्थ होवे तब अपने पतिको " आज्ञा देवे कि, हे स्वामी ! आप सन्तानोत्पत्तिकी " इच्छा मुझसे छोड़के किसी दूसरी विधवा स्त्री से " नियोग करके सन्तानोत्पाति कीजिये ! "

(इत्यादि पढ़ कर नयनानन्दसे) भाई साहब ! ठीकही निकला ! यह मेरे ध्यानमें न था कि, स्त्री भी अपने पतिको रोगादि कारण अन्य स्त्रीसे नियोग करनेकी आज्ञा देवे !

नयनानंद-अच्छा तो अब आपकी क्या मनशा है ? मेरी घरवाली तो मुझे इजाजत देती है ! और मैं भी तयार हुं ! अब आप फरमाईयेगा कि, आपकी " नंदकौर " मेरे मकान पर आया करेगी ! या कि मैंही उनके पास पहुंचा करूं !

भोलानाथ- (कुछ विचार करके) भाई ! इसमें ऐसा लिखा है कि " किसी दूसरी विधवा स्त्री से " सो मेरी स्त्री विधवा तो है नहीं ! फिर आप उससे नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कैसे कर सकते हो ?

नयनानंद- तुमतो बेसमझीकी बात करते हो ! जहां पर पति अपनी स्त्रीको दूसरेसे नियोग करनेकी इजाजत देता है वहां रंडवे पुरुषसे नियोग कर, ऐसा क्यों नहीं कहा ? वहां तो साफ इतनेही अक्षर लिखे है कि, जब पति संतानोत्पत्तिमें असमर्थ होवे तब अपनी स्त्रीको आज्ञा देवे कि " हे सुभगे ! सौभाग्यकी इच्छा करने हारी स्त्री तू मुझसे दूसरे पतिकी इच्छा कर " देखो तो इसमें कहीं रंडवा शब्द आया ?

भोलानाथ- नहीं !

नयनानंद- तो फिर उनके लिये नियोगी पुरुष कैसाही हो ! चाहे रंडवा, चाहे व्याहा !

भोलानाथ-अच्छा तो मैं जाता हूं और अपनी " नंदकौर" को कहता हूं कि, आजसे तेरे पास " नयनानंदजी " आया करेंगे ! " स्वामीजी " की आज्ञानुसार उनसे नियोग करके संतानोत्पत्ति करलेना ! लेकिन उनके मुखसे यह वाक्य मैं कई बार सुन चुका हूं कि, आर्य महिलाओंको चाहिये कि, अग्निमें पडकर मरजाये ! मगर पर पुरुषकी मनसे भी इच्छा न करे ! जिस स्त्रीने

अपना पतिव्रत धर्म नष्ट कर शीलको मलीन किया इसके जीनेको धिक्कार है ! इस विषय पर उन्होंने एक निबंध भी लिखा है !

नयनानंद–अजी ! नहीं नहीं ! " नंदकौरजी " का क्या कहना है ? वो तो आर्य धर्म पर बड़ा प्रेम रखने वाली पूरी पतिव्रता और नेक चलन है ! असल पूछो तो आपने बड़ी गलती खाई जो छ बरससे आजतक उनको इजाजत नहीं दी ! वरना अबतक तो दो तीन लड़के हो जाते !

भोलानाथ–बेशक ! उनको आर्य धर्मही प्रीय है ! मगर पर पुरुषके साथ संभोग करके वर्णसंकर पैदा करना वो इसको आर्य धर्म थोड़ेही मानती है ?

नयनानंद–तो क्या मेरी आशा पूरी न होगी ?

भोलानाथ–मुशकिल ! (जोडा पहन कर चलते हुए) अच्छा नमस्ते !

नयनानंद– (उदास होकर) नमस्ते !

(भोलानाथ वहांसे चलकर थोडीही दूर गये थे कि, इतनेमें पीछेसे आवाज देकर)

विश्वंभर– (साथ साथ चलता हुआ) लालाजी साहब ! आपको यह बिमारी कबसे है ?

भोलानाथ- क्यों भाई ! तुम्हारे पुछनेका क्या मतलब ?

(उस वक्त लालाजीने " विश्वंभर " को बंगाली समझा था ! क्यों कि, उसका पहनवेश वैसाही था)

विश्वंभर-मुझे यही मकसद है कि, आप इस बिमारीसे राजी हो जायें तो अच्छी बात है !

भोलानाथ- अच्छा तुमको मुझे बिमार देखकर इतना रहम आया, क्या तुमने मेरी मर्जको पैछान लिया ?

विश्वंभर-हां ठीक ठीक !

भोलानाथ-अच्छा तुम मेरे साथ मकान पर चलो !

विश्वंभर-बेशक चलिये ! मगर आप जानते हैं कि, मैं परदेशी हूं, न आप मुझे जाने और न मैं आपको ! और फिर उमर भी मेरी आपको लडकपन की नजर आती है इस लिये मेरी बातपर आपको परतीत आना भी मुशकिल है, मगर इतना तो मैं दावेके साथ कहता हूं कि, आपने इस बिमारीके इलाजमें सैकडोंही रुपये खो दिये होगें ! लेकिन मैंने तो आपसे न कुछ लेना है और नाही मुझे किसी चीजका लोभ है ! अगर मेरी बात पर यकीन हो तो विना कौडी खरचके मैं एक वृक्षकी पांच चीजें बतलाता हूं उसका आप सेवन करें ! अगर न आराम होगा तो आपका कुछ बिगाड भी न होगा ! आराम होने पर जो आपकी मरजीमें आवे सो गरीब

पूछते बाबूजीके मकान पर आकर बैठकमें बैठे हुए बाबूजीसे)

भोलानाथ– बाबुजी साहब ! आपके यहां कोई परदेशी लडका आया है वो कहां है ?

बाबूबद्रीनाथ–क्यों तुमको उससे क्या काम है ?

भोलानाथ–अजी साहब ! काम क्या है ? वह तो मेरे लिये परमेश्वरका अवतार है ! जनाब ! मैं छे सात सालसे इस बिमारीसे लाचार था ! सैकड़ों रुपये खर्च कर-डाले, सैकड़ों दवायें कर डाली, मगर मुझे कुछभी फा-यदा न हुआ ! इसने बिना कौड़ी पैसेकी दवाई न जाने क्या कोई पत्तेसे पिस पास कर दिये कि, आज पांच रोजमें ही मुझे फायदा होगया ! लालाजीकी यह बात सुन बाबूजीने " विश्वंभर " को अंदरसे बुलाया.)

विश्वंभर– (लालाजीको देखकर) कहो लालाजी ! क्या हाल है ?

लालाजी– (एकदम उठ कर) साहब ! आपकी मेहर-बानी गरीबपर होगई ! आपने मुझपर जो उपकार किया है उसके बदलेमें अगर मैं आपको अपना सर्वस्व भी दे दूं तो थोड़ा है !

विश्वंभर–भाई ! इसमें मैंने कुछ क्या किया है, करने वाला तो गुरु है !

लालाजी–आप मेरे मकान पर चलो !

विश्वंभर–आपको दवाईसे काम है कि, मुझे अपने मकान पर ले चलनेसे ?

लालाजी– साहब ! दोनों ही से !

विश्वंभर–आप शामको दवाई ले जाना, मकान पर आनेका भी मौका मिल जायगा तो आ जाऊंगा ! (इतना कहकर " विश्वंभर " बाबूसे पूछकर पहलेकी तरह उसे दवाई लाकर जब वो शामको आये तो उन्हें देकर कहा कि, इसकी चौदां खुराक कर लेना बादमें देखना क्या बनता है ! बस ! लालाजीकी बिमारीका तो उन चौदां पुडियोंसे जड़ामूलसे नाश होगया !)

लालाजी– (आराम हो जानेपर ७५ रुपये लेकर "विश्वंभर" को देनेके लिये बाबूजीके मकान पर आये और " विश्वंभर " के आगे रुपया रखकर) मैं आपको कुछ देने लायक़ तो नहीं हूं तो भी मेरी यह अदना भेट मंजूर कीजियेगा !

विश्वंभर– लालाजी ! यह रुपया मेरे लिये हराम है. मैंने तो तुमसे पहलेही कह दिया था. सो लेजाओ और लूले लंगड़े, अंधे, अपाहज गरीबोंको सबका अनाज और कपड़े लेकर बांट दो !

लालाजी–आपने मुझपर जो उपकार किया है उसका बदला मैं नहीं दे सकता !

बाबूजी--पास बुक नहीं मिलेगी ! तुझे खरचनेको दो चार रुपये चाहिये तो मुझसे लेजा !

विश्वंभर- (जिद करके) मुझे दो चारकी जरूरत नहीं है, ९८ रुपये चाहिये !

बाबूजी- मैंने सुना है कि, तूं एक बावाजीके पास आता जाता है ! सो किसीके सिखे सिखायेमें आकर नाहक क्यों रुपये खोना चाहता है ?

विश्वंभर-जनाब ! मुझे आप पासबुक दे दीजिये गा ! रुपया मेरा है, जो चाहे सो करूंगा (बाबूजीने बहुत समझाया, मगर भावीको कौन टाल सकता है ? पास बुक लेकर बंकसे ९८ रुपये ले आया और बावाजीके आगे आकर रख दिये ! बाबाजीने कितनी एक बातें हाथ चालाकीकी दिखलाई और बतलाई, मगर रसायनको बतलानेके लिये बोले कि, कलको मेरे साथ चलना ! "विश्वंभर" को विश्वास होगया था कि, यह ठीक कुछ जानते हैं और मुझे सिखा भी देंगे इस लिये शामको घर आया तो)

बाबूजी- क्यों ! सीख आया ? हमको तो बता !

विश्वंभर-सीखलूंगा ! तब आपकोभी बता दूंगा !

(अगले रोज जब "विश्वंभर" वहां गया और देखे तो बाबाजी पत्राही वांच गये ! बहुत कुछ तलाश

की, मगर पता न लगा ! बाबाकी इस ठग बाजीको देखकर " विश्वंभर " ने विचारा कि, और तो कुछ नहीं, मगर लोग चिढ़ावेंगे कि, ले ! और सीख ले रसायन ! ! यह विचार कर दो दिन तक बाहर ही रहा ! तब बाबूजीको फिकर हुआ कि, कहां चलागया ? उन्होंने पुलिसके एक अपने मित्र से कुल बात कही, तब दो आदमीयोंने फिरकर " विश्वंभर " का पता निकाल उसे साथ लाकर बाबूजीके सामने खड़ा कर दिया ! उस वक्त " विश्वंभर " नीची गर्दन करके रोने लगा ! तब धमकानेके बदले प्यार दे कर)

बाबूजी—अरे ! वाहरे वाह ! उदास क्यों होता है ? तुनेही कमाये थे तूंनेही देदिये ! चिन्ता क्यों करता है ? चुपकर ! जा अंदर ! आगेके लिये नसीहत समझना !

(मगर " विश्वंभर " को लोगोंने चिढ़ाना न छोड़ा दश पंदरां दिनके बाद सब बात भूल भुला गई ! पहलेकी तरह " विश्वंभर " आनंदमें रहने लगा ! बाबूजीका ख्याल तो पक्का आर्य धर्म पर था, लेकिन उनकी स्त्री वैश्नव धर्म पालती थी ! यह दूसरे व्याहकी थी. इंगलिश और गुरमुखी पढ़ी हुई थी, इनका स्वभाव बड़ाही कतुहली और हँस मुखा था ! ये दान पुण्यभी अच्छा किया करती थी, मगर बाबूजीसे छिपकर ! इनके दो लड़के थे "विश्वंभर" को भी अपना तीसरा पुत्रही समझती थी ! जब कभी बाबूजी फुरसतके वक्त " विश्वंभर " से

" स्वामीजी " के बनाये हुए " सत्यार्थ प्रकाश " आदि ग्रंथ सुना करते थे उस वक्त आपभी पासमें बैठ जाया करती थीं, मगर पीछेसे " स्वामीजी " को बड़ी गालियां निकाला करती थीं कि, " स्वामीजी " ने सनातन धर्मसे जुदाही क्या यह विचित्र पंथ निकाला है ? हांसी हांसीमें बाबूजीको भी ताने दिया करती थे कि, अगर आप पूरे पूरे " स्वामीजी " के भगत हो तो तुम्हारी फलानी फलानी जवान रांड होकर बैठी है उसको दूसरा खसम क्यों नहीं करा देते ?

" विश्वंभर " के अंदर बाबूजीके कहनेका असर न होनेका कारण आपही थीं ! क्यों कि, बाबूजीके पीछे " विश्वंभर " को यही कहा करती थीं. कि, आर्य धर्म (जो " स्वामीजी " ने निकाला है) बिलकुल वाहियात और नयाही है. सिर्फ जो जरा अंगरेजी पढ़े लिखे लोग हैं (और वहभी जिन्हें बचपनमें धर्मकी शिक्षा नहीं मिली) उनको मंदिरोंमें जाना, प्रभु परमात्माकी पूजा भक्ति, दान पुण्य करना अच्छा नहीं लगता, इस लिये सनातन धर्म छोड " स्वामीजी " को रोते फिरते हैं ! क्या करूं ? मुझे बड़ी चिढ़ आती है ! जिस वक्त तूं " सत्यार्थ प्रकाश " सुनाने बैठता है. तूं सिर्फ उन (बाबूजी) की हां में हां मिलाए जाया कर और कुछ नहीं ! मैंने अपने भाईसे सुना है कि " स्वामीजी " पहले शैव धर्मको मानने वाले थे और " शिव भजन "

नाम था, सोलां वर्षकी उमर तक तो वे स्त्री का वेश पहन कर नाचते रहे, देखनमें वडे खूबसूरत थे ! इस लिये एक चौवीस वर्षकी उमर वाला राजपूत इनपर मस्तथा ! अगर तुझे इस वातका निर्णय करना हो तो मेरे भाईको पत्र देकर " दयानन्द छल कपट दर्पण " मंगाकर देख ले, उससे मेरी कही ऊपरकी वात प्रगट हो जायगी ! और " दयानन्द सुमाने उमरी " से यहभी प्रगट होता है कि, उनके मा वाप तवला सारंगी वजाते थे ! और आर्य समाजमें न धोवीका परहेज ! न मुसलमानका, न तेलीका, न तंवोलीका, न कहारका, न कोलीका !

विश्वंभर–अजी जाने भी दो, कभी मुसलमानभी हिन्दु हो सकता है ? आपभी तो क्या वात करती हो ? यह तो आपका कहना झूठा है !

वहूजी–तुझे मेरे कहनेका इतवार नहीं आता तो अपने वावूजीको पूछ देखना ! मगर तरकीवसे पूछना, यूं कहना कि, साहव ! अपने आर्य समाजमें " धर्मपाल " जातका मुसलमान है, उसका पहले क्या नाम था ? तो झट वता देवेंगे !

अरे तु तो भोला है ! मैं क्या कहूं ? " स्वामीजी " ने जैसा जैसा उपदेश दिया और पोथां थोथोंमें लिख गये हैं, वह तेरेको कहूं तो तूं झट वावूजीको कहदेगा ! जिस वक्त शामको तुं उनको सुनानेके लिये वैठता है, उस वक्त मेरे जिमें ऐसी आती है कि, इसके हाथसे यह

निकम्मी पोथी लेकर फेंक दूं ! अगर तूं मेरे भाईके पास एक महीना भी रह आवे तो तेरेको इन नये आर्य और इनके गुरुकी सब पोल अच्छी तरहसे मालूम हो जावे !

इनके स्वामी दयानन्दने हर एक मजहब (धर्म वालोंकी निन्दाकी है " दयानन्द " कृत जितने ग्र हैं उन सबमेंही जन्मसे जातिको नहीं मानी, बाबाजी तो गुण कर्मोंसेही जातिकी नीव डाली है, जब घरमें तब तो घरोंसे आटा मांग मांग कर लाते और खाते थ जब घरसे बाहर निकले तो वही दोष वैश्नव संप्रदा वालोंपर लगाने लगे ! इतनाही नहीं ! बलकि, उनक कंजर, चंडाल, भंगी, मुसलमान कहनेसे भी जर संकोच नहीं किया ! सच पूछे तो " बाबाजी " बिल्कुल लाल बुझक्कडही थे !

जैसे कि एक दिन गधीको देखकर चेलोंने सवाल किया कि, गुरुजी ! यह कौनसा जानवर है ? तो बुझक्कडजीने जवाब दिया कि—

" बूझे बुझे लाल बुझक्कड, और न बुझे कोय ।
निराकारकी है ये लड़की, अथवा जोरू होय ॥ "

यह सुनके चेलोंने धन्यवाद दिया ! यही हाल दयानंदियोंका समझना—जो गुरुजीने कहा उसीको हांजी हां करते हैं, मगर यह नहीं विचारते कि, इसमें हमको नफा होगा या नुकसान ?

इस तरह " विश्वंभर " के अंदर वाबूजीके बिठलाये हुए समाजी ख्यालको वे झट उखाड दिया करती थीं, वे अपने लड़कोंको भी इसी प्रकारका उपदेश दिया कर-तीथीं, जिससे आगेको उनपर " दयानन्द " के उपदे-शका असर न हो ! इस प्रकार " विश्वंभर " को वाबूजीके यहां डेढ साल हुआ कि, उसकी एक "थिए-टरलीकल कंपनी " के प्रोफेसर और चीफ ऍक्टरके साथ मित्रता होगई ! " तुखम तासीर सोवत असर " कईएक कारणोंके मिलनेसे वाबूजीके यहांसे "विश्वंभर" का चित्त उखड गया. वाबूजीके लड़कोंका "विश्वंभर" पर सगे भाईसेभी वढ़कर प्रेम होगया था, यहां तक कि, १५-१५-२०-२० दिन तक " विश्वंभर " के साथ लाहौर रहजाते, मगर इसके वगैर अपनी मांके पास रहना दो दिनभी भारे हो पड़ता था. जब "विश्वंभर" नौकरीसे इस्तीफा देने लगा, लड़के वहुत रोए. वलकि, फिकरके मारे छोटे लडकेको वुखार होगया. तवतो वाबूजीकी स्त्रीने " विश्वंभर " से कहा कि, तुं किसकी सिखावतमें आकर ऐसा करता है ? तुझे यहां क्या तक-लिफ है ? तूं ऐसा मत कर! क्या इन वच्चोंका तरस नहीं आता ? वहुत कुछ समझाया मगर " विश्वंभर " ने एक न मानी, तव फिर उन्होंने कहा कि, अगर तुंने जरूरही इस्तीफा देना है तो भले तेरी खुशी, हमारा कुछ जोर नहीं है, मगर जवतक इस छोटे लडकेकी

तबीयत अच्छी न होले तब तक तुं ठहर ! "विश्वंभर" का दिल अगरच बिलकुलही उखड गया था, ताहमभी इस बातको उसने मंजूर किया, और दो महीने औरभी वहांपर गुजारे, लेकिन कंपनीमें आना जाना ज्यादा हो गया, प्रोफेसरकी वजहसे वहांके दीवान साहबके पुत्रके साथ इसका मेल हो गया, आखिर नौकरीसे बिलकुल ला परवाह होकर एकदम सुचालको छोड कुचालकाही पकडना " विश्वंभर " की बुद्धिने मंजूर किया बाबूजीका कुछ थोडा बहुत भय था वहभी निकलगया

यहां पर वाचक वृन्दको ख्याल रखनेकी जरुरत है कि, जो नेक चलन, इज्जतदार आबरूवाले अमीर लोगोंकी लिखी पढी हुइभी संतान बद चलन होकर अपने मां बापकी इज्जतको धब्बा लगा देती है, उसके कारणोंमेंसे मुख्य कारण यह है कि,—

(१) अपनी संतानको बचपनसेही स्वच्छंदता देनी !

(२) जिस उस्ताद–मास्टरका दबाव लड़के पर न पड़े उसके पास पढ़ाना !

(३) नौवेल–नाटक या अन्य इश्किया किताबोंके पढ़नेसे न हटाना.

(४) नाटक या वाहियात तमाशोंमें जानेसे न रोकना.

(५) सबसे बडा सबब यह है कि, संतानके बालग होने पहले उसकी सोहबतका पूरा पूरा ख्याल न रखना । प्रायः

आजकल अमीर लोग अपने लड़कोंको नौकरोंके भरोसे छोड देते हैं, नौकर भी कैसे ! कोई कहार, कोई नाई, अनपढ़, मूर्ख, बे अक्ल, निर्दयी ! अब विचारना चाहिये कि, कोमल दिलके बच्चे, जैसा उस नौकरको करते देखेंगे वैसाही करनेको तयार हो जायेगें ! इस लिये जिनको अपनी संतान प्रिय होवे, वो अपने बच्चोंको हरगिजभी आजादी न देवे ! " विश्वंभर " दीवानसाहबके पुत्र रत्नके साथ लग कर एकदम अधर्मके मारगमें सवार होगया, लेकिन " विश्वंभरनाथ " का पूर्व संचित पुण्य आ सहाई हुआ, वरना उसे दुर्गतिके द्वारपर पहुंचनेमें कुछभी संदेह न था ! क्योंकि इस समय "विश्वंभर" को अपने घरसे निकलनेका कारण भूल गया था ! जिस हृदय भेदक घटनासे आघात पहुंचा था वह आज सर्वथा नष्ट प्राय हो गया ! मानों मुझे जन्मसे लेकर आजतक कोई दुःख पडाही नहीं ! जो " विश्वंभर " किसी आदमीको बंदूक लिये अनाथ जीवों पर हाथ उठाते देखता तो क्रोधमें आकर उन्हें गालियां देता और उनसे लडाई लेता था, वह, आज स्वयंही बंदूक ले विचारे अनाथ प्राणियोंके प्राण लेने लगा ! मानो इसमें कुछ पापही नहीं ! कुसंगतके कारण इस प्रकार हौसला खुलगया कि, न किसी का डर रहा, न भय ! पुलिसके कितनेही लोगोंके साथ मेलजोल होगया था, एकतो चढ़ती अवस्था, दूसरे अमीरोंके लडकोंका सिरपर हाथ, फिरतो कहना ही क्या ?

सबकी आंखोंमें रडकने लगा ! बाबू बद्रीनाथने देखा कि, यह तो गया हाथसे ! उन्होंने पहले तो प्यारपूर्वक बहुत कुछ समझाया, लेकिन समझना तो क्या था ? उलटा बाबूजीसेही ऐंठने लगा ! तबतो बाबूजी भी म खती और हरएक तरहका करडापन दिखलाने लगे लेकिन इसकोभी ऐसी जिद चढ़गई कि, जान बूजक हरएक काममें देरी करने लगा, और करना तोभी बि गाड़ कर रख देना ! कहां तो बाबूजीके घरका कु प्राइवट काम खुश होकर करता (क्यों कि बाबूजी इसीके विश्वास पर कुल भार छोड दिया था, और भी महीनेके महीने घरका कुल खर्चेका हिसाब पाई पा का ऐसा देता कि, जो इसके पहले नौकरोंकी अंधाधुंध अच्छी तरह मालूम हो गई थी) कहां कहने परभी ध्यान न धरता ! इस तरह करते हुए भी बाबूजीने इसको अपने यहांसे (" विश्वंभर " के इस्तीफा मांगने परभी) जानेको इनकार किया !

एक दिन बाजारमें जाते हुए " विश्वंभर " ने एक दुकान पर दश बारां आदमीको इकठे हुए देखकर-

विश्वंभर- (एक आदमीसे) क्यों भाई ! यहां क्या जलसा है ? यह मकान क्यों सजाया जाता है ?

आदमी-जैनियोंके पजूसन आए हैं न !

विश्वंभर- (कुछ न समझ कर) भाई ! मैं पूछता हूं कि,
यहां क्या जलसा है ?

आदमी-पजूसनोका जलसा, कहता तो हूं !

("विश्वंभर" ने पजुसण शब्द ही कभी नहीं सुना था, समझता क्या ? आखर उन आदमियोंकी भीडमें मूं डालकर देखा तो एक कागजके गत्ते पर वे लोग हिन्दी अक्षरोंमें यह लिखा रहे है कि, "श्री आत्मा॰ नन्द जैन सभा" "विश्वंभर" उस लिखने वालेके टेढे मेढे अक्षर बहुतही खराब राइटिङ्ग देखकर हंस कर बोला कि, क्या यह कीड़ मकोड़ेसे लिखे हैं ?

एक लालाजी- (खिजकर "विश्वंभर" से) ले तो, तूं
ही इससे अच्छे लिख दिखा !

(यह लोग, "विश्वंभर" को सुप्रीन्टेन्डेन्टके यहां नौकर है इतनाही जानते थे, यह किसीको खबर नथी कि, ये हिन्दी लिखा पढा है. क्यों कि, पंजाबमें हिन्दी पढ़ने लिखने वाले बहुत थोडे और उर्दू फारसीके पढ़ने लिखने वाले सैंकड़ों अगर हिन्दी पढे हुये मिलेंगेभी तो उनका राइटिङ्ग बस परमात्माकाही नाम ! "विश्वंभर" का राइटिङ्ग पर हाथ काबू था ! लालाजीसे एंठकर)

विश्वंभर-अच्छा ! यूं ! ठीक-तो तुम मुझे बतलावो कि,
क्या लिखना है ? मैं शामको तुम्हे साइन बोर्ड बनाकर

न्यादूंगा ! फिर इसके साथ मिलाना ! (इतना कह क
जो बोर्डमें लिखना था वह समझ कर मकान पर आया
और अपने पाससे ही बड़े मोटे ग्लेज कागजके गत्ते प
अपनी हाथ कारीगरीका नमुना बनाकर शामको लाला
जीके आगे रख दिया,)

लालाजी- (पट्टा देख कर) क्या यह तुमने बनाया है ?

विश्वंभर-मैंने बनाया, या किसीने बनाया, अब तुम यह
बताओ कि, जिस पर तुमने कई आनेकी सुनेरी स्याही
बिगाड़ कर रखदी, उस तखतेसे यह अच्छा है या बुरा ?

(लालाजी और उनके भाई " विश्वंभर " पर बड़े
खुश हुए. फिरतो धीरे २ अच्छी जान पहचान होगई.
लालाजीको " विश्वंभर " का बाबूजीके यहांसे नौकरी
छोडनेका इरादा मालूम होगया. अब बाबूजीकी "विश्वं-
भर " पर करड़ी नजर है तो भी बाबूजी एकदम अपने
यहांसे जबाब नहीं देते ! इसका कारण यही था कि,
बाबूजीको " विश्वंभर " का कोई कसूर-गुन्हा अबतक
हाथमें न आया था,

बाबूजी अपने यहांसे ईसका जाना अच्छा न सम
थे, " विश्वंभर " का कंपनीके उस्तादसे अधिक परिचय
हो गया था, क्यों कि, लालाजी उन्हीं उस्तादसे हार-
मोनियम सीखा करते थे. " विश्वंभर " बाबूजीके यहां
से किसी कामका बहाना निकाल जब दाव लगता तबी

लालाजीकी दुकान पर या उस्तादके मकान पर पहुंचता, आखर " विश्वंभर " की मनशा कंपनीमें नौकरी करनेकी हुई,, तब उस्तादने कंपनीके मालिक दीवान साहबके सामने करके कहा कि–हजूर ! इसकी मनशा कम्पनीमें नोकरी करनेकी है.

दीवान साहब– (उस्तादसे) भाई ! जिन बाबूजीके यहां यह रहता है, उनके यहांसे इसको यहां अधिक सुख न होगा ! मुझे अच्छी तरहसे मालूम है. (विश्वंभरसे) क्यों भाई ! उनके यहांसे तूं क्यों निकलता है ?

विश्वंभर–यह तो आप बाबूजीसेही पूछ देखियेगा !

दीवान साहब–तुं वही तो नहीं है जो रसायनी बाबाकी हथफेरीमें आकर कितना सारा रुपया खो आया था ?

विश्वंभर–[illegible]जी हां मैं वही हूं ! आपको कैसे मालूम हुआ ? (प[illegible]ासमें बैठे हुए बहुतसे लोगोंमेंसे एक)

नाजिरजी–[illegible]वाहरे वाह ! अखबारों तकमें तो छप चुकाथा ! सारे शह[illegible]रमें यह बात फैल गईथी तो दीवान साहबको न मालू[illegible]म हो ? यह कैसे तअज्जुबकी बात है !

दीवान सा[illegible]हब– (विश्वंभरसे) अच्छा अबभी कुछ पासमें है ? मैं[illegible]ने सुना है कि, तुं बड़ा उडाऊ है !

विश्वंभर– ([illegible] हंसकर) हजूर ! अब है, सो, रसायन सीखनेके लिये न[illegible]हीं है (उस वक्त बंकमें तो कुल २२ ही रह गये

कलको क्या हुआ ? जो उसके कहनेके विनाहीं समझ बोल उठे !)

दीवानजी- (एक पुस्तक विश्वंभरको दे कर) अच्छा इसको पढ़कर सुना ! देखें तेरा उच्चारण कैसा है ?

विश्वंभर- (पुस्तक खोल कर) हाय -हाय-हाय-हाय-न विद्याको मिलता वर। फिरा घर घर । सभा वन कर दया कर हे कृपा सागर । मैं हूं मुन्तजिर । हुआ उत्तर । हा० प्रतिज्ञा करके पछताया । ववज गम कुछ हाथ आया। ये है ईश्वरको क्या भाया। जो संकट मुझ है लाया।

(एक दम आठ दश सफे उलट कर) मारलो मारलो । (पुस्तक हाथसे कालीन पर फेंक कर) क्य वाहियात पुस्तक है जो हाय हाय और मार मारसे ह भरी है !

दीवानजी- (हंसकर लोगोंसे) तलफफुज तो बड़ाही अच्छा है ! (" विश्वंभर " से) क्या उर्दूभी जानता है ?

विश्वंभर-नहीं साहब ! मैं उर्दू तो नहीं जानता, मगर मेरी मादरी जबानही उर्दू है, मैं सिक्स क्लास तक इंगलिश पढ़ा था, आज करीबन आठ साल हुए छोड़केको सो भूल गया !

दीवानजी-क्या सबही भूल गया ?

विश्वंभर-जनावमन् ! अगर सब पढ़ गया होता तो सबही भूल जाता ! मगर न तो मैं सब पढ़ा और नाहीं सब भूला ! याने जितना पढ़ा था उसमेंसे उतनाहीं भूल गया कि जितना भूलना लाजिम था !

दीवानजी-अबे हरबातमें हंसी ! (सब लोग हंसपड़े)

विश्वंभर-Soft words are hard arGuments. (मीठा बोलनाही विनीतता है.)

दीवानजी-अच्छा तो तुम पांच सालकी गेरेन्टी लिख दो कि, अगर इससे पहले नौकरी छोडुं तो जो कंपनीका कानून है उसके मुताबिक दंडका भागी हुं !

उस्ताद-(दीवानजीसे) हजूर ! यह कंपनीमें रहकर ऍक्टर बनना नहीं चाहता, लेकिन हमें एक ऐसे आदमीकी जरूरत है कि, जो लडकोंको पार्ट याद करा दे, या जो पढ़ेहुए लडकोंको उनका पार्ट लिख कर दे दिया करे; और ऍक्टरी तो यह करही नहीं सकता. अगर अपनी खुशीसे नकल वगैरहमें स्टेज पर आवे तो इसका अखतियार है !

दीवानजी-अच्छा तो जाओ ! कल ठीक काम हो जायगा !

(वहांसे उठकर बाहर आनेकी देर थी कि, "विश्वं-भरनाथ" के मनका चक्कर फिर गया !)

विश्वंभर– (उन्मादसे) वस साहब ! भरपाया आपकी कंपनीकी नौकरीसे !

(इन दिनों " स्यालकोट " में बडे जोरसे प्लेग चल रहा था " विश्वंभर " बाबूजीको विनाही पूछे वहां चला गया और तीन दीनमें अडतीस ३८ रुपये कमा लाया ! याने दो पैसेका कच्चा सूत लेकर उसके एक एक बालिस्तके टुकडे करके उनमें सात सात गांठे लगा कर गली गली और बजार बजारमें यह आवाज देता हुआ फिरने लगा कि " यह फकीरका दिया हुआ ताऊन (प्लेग) का धागा एक पैसेको " " इसको हाथमें बांधनेसे प्लेग नहीं होता " " जिसे प्लेग हुआ हो वह भी राजी होता है ! " यह सुन लगे लोग खरीदने ! एक पैसा क्या बड़ी चीज है ? राजी होना न होना तो अपनी जिन्दगीके हाथ है, लेकिन एककी देखा देखी उस वक्त लोगोंने हाथो हाथ लेना शुरू कर दिया "विश्वंभर " ने इस धतिंगसे भोले भाले लोगोंको खूबही लूटा !

सच पूछो तो आज कलका जमाना ही ऐसा है कि, छल फरेब कपटसे हजारोंही आदमी कंगालसे अमीर होगये ! और होते जाते हैं. और जो सत्यवक्ता साफ नियत ईमान्दार हैं उनकी कोई बातभी नहीं पूछता ! और सुनता ! लेकिन " अंत भलेका भला" इसमें जरा भी शक नहीं है. बेशक ! अपने दिलमें कोई यह क्यों

न समझ लेवे कि, मैं जिसके साथ नेकी करता हूं, वह मेरे साथ वदी करता है ! इस लिये वदी करनाही अच्छा है ! सो यह समझ विलकुल ठीक नहीं. क्यों कि, अंतमें वदीका नतीजा वद, और नेकीका फल नेक ही है. " विश्वंभर को वचपनसेही फिरनेका और आजाद रहनेका यह एक फल था कि, कभी हिम्मत न हारता और दुःख आने पर भी दुःखको सुख मान अपनी किसमत पर सवार रहता था ! यह उसे भय न था कि, मैं लोगोंको ठगता हूं ! अगर पकडा जाऊंगा तो क्या हाल होगा ? क्यों कि, जव इस जमानेके लोगही गप्प, सप्प छुं, छां को पसंद करते हैं तो डरना किससे ? " मियांवीवी राजी तो क्या करेगा काजी ? " देखलो ! लोग जान वूझकर ही ठगाये जाते हैं तो ठगने वाला धोखेमें डालकर ठगे उसमें वतलाईये किसका दोष ? " विश्वंभर " को " ब्रह्मानन्द " ने वचपनसेही " गुरु घंटाल " का उपदेश दिया था ! इसमें " विश्वंभर " के वशकी वात न थी !

वाचकवृन्द " गुरु घंटाल " का नाम सुन कर विचारमें पड़े होंगे कि, यह कोई आदमी है ? या दानव ? नहीं ! यह " गुरु घंटाल " पंडित जनार्दन जोषी वी. ए. डिपटी कलेक्टर साहवकी लेखनीसे लिखा हुआ एक ग्रंथ है. जिसके कुछ अध्याय यहां पर उद्धृत किये देते हैं.

परचून वालोंके घरोंकी दीवाल तक चुहोंने खोद डाली है जब प्लेग फैलना है तब परचूनकी मंडी ही फैलना है !

जूता फरोश दाढीमें हाथ दिये बैठे हैं जूतोंमें दी लग गई है ! फिरभी इन्कम् टेक्स वाले वहीकी ज कर रहे हैं.

डाक्टर मक्खी मार रहे हैं !

वकील मनसुवोंके घोडे दौडा रहे हैं.

जिससे पांच मिलनेकी आशा करते हैं वह उलटे प और उधार मांगता है समाचार पत्रोंके संपादक त उठकर नादे हिंद ग्राहकोंके नामकी माला फेर रहे अच्छे २ लेखक पंसारियोंकी दुकानमें अपनी पुस्तकों दो आने सेर तुलवा रहे हैं क्यों कि मोल लेकर पुस्त पढ देने वालोंका पता नहीं ! मिडिलचियोंको तो कं पूछता भी नहीं बी. ए. एम्. ए. पास करें आंख फूटती है मगज सुखता है. फिर कं पटलुन पहन कर पिल पिली साहव वन जा हैं तीस चालीस रु० की नौकरी करते हैं पचा साठका खर्च रखते हैं पांचसौ छ सौ कर्ज करते हैं अ नौकरीमें क्या धरा है ? तीस चालीसके बाबूओंकी त कुगत ! कहीं भूल हुई तो जुरमाना और मुअत्तिल

और मौकूफी और जेहलखाना ! और कुछ सुननेमें नहीं आता; एडीटर अलग प्राण सुखाते हैं भाई हमसे तो ऐसा हजार रु० के लिये भी न हो सकेगा आज कल जो चैन धर्म फरोशीमें है सो कहींभी नहीं इसमें सदा आदर है गरमा गरम पूरी कचौडी खाओ; मूछों पर ताव दो; सिंहजीकी दुकानका तर व ताजा मसालेदार हलुवा गायका ओटा हुआ दूध मीश्री मिलाहुआ छिकल निकालेहुये सफेद बादाम मलाई लच्छेदार रवडी नित्य विना दाम मिलती है ! अरे भाई मेरे मुंहमे तो कहतेही पानी आ जा रहा है ! फिर भेट अलग, रेल खर्चा अलग; वडे वडे मनुष्य पांव पूजते हैं; वडाही आनन्द है, चिन्ताका लेश मात्रभी नहीं;

अजगर–पिताजी यह नया रोजगार कवसे चला है ?

वृहन्महामहोदर–वेटा ! पहिले तपस्वियोंकी नकल करके ठगनेकी चाल थी, इसमें ठगोंको वडा दुःख होता था; फिर दानके मिससे ठगने लगे, पर देनेवाले ठगोंकेभी गुरु निकले; एक पैसेमें दान करै सारे कुटुम्बके नामसें और सबके " रोगं शोकं दुःखं दारिद्रं " एकही पैसेमें ठगके हवाले करदें; वंचक मिश्रजीको यह वहुत वुरा लगा, उन्होंने नव ग्रहोंकी पूजा चलाई, अव अंग्रेजोंने जगह जगह स्कूल वना दिये हैं और इन मंगल शनैश्चर